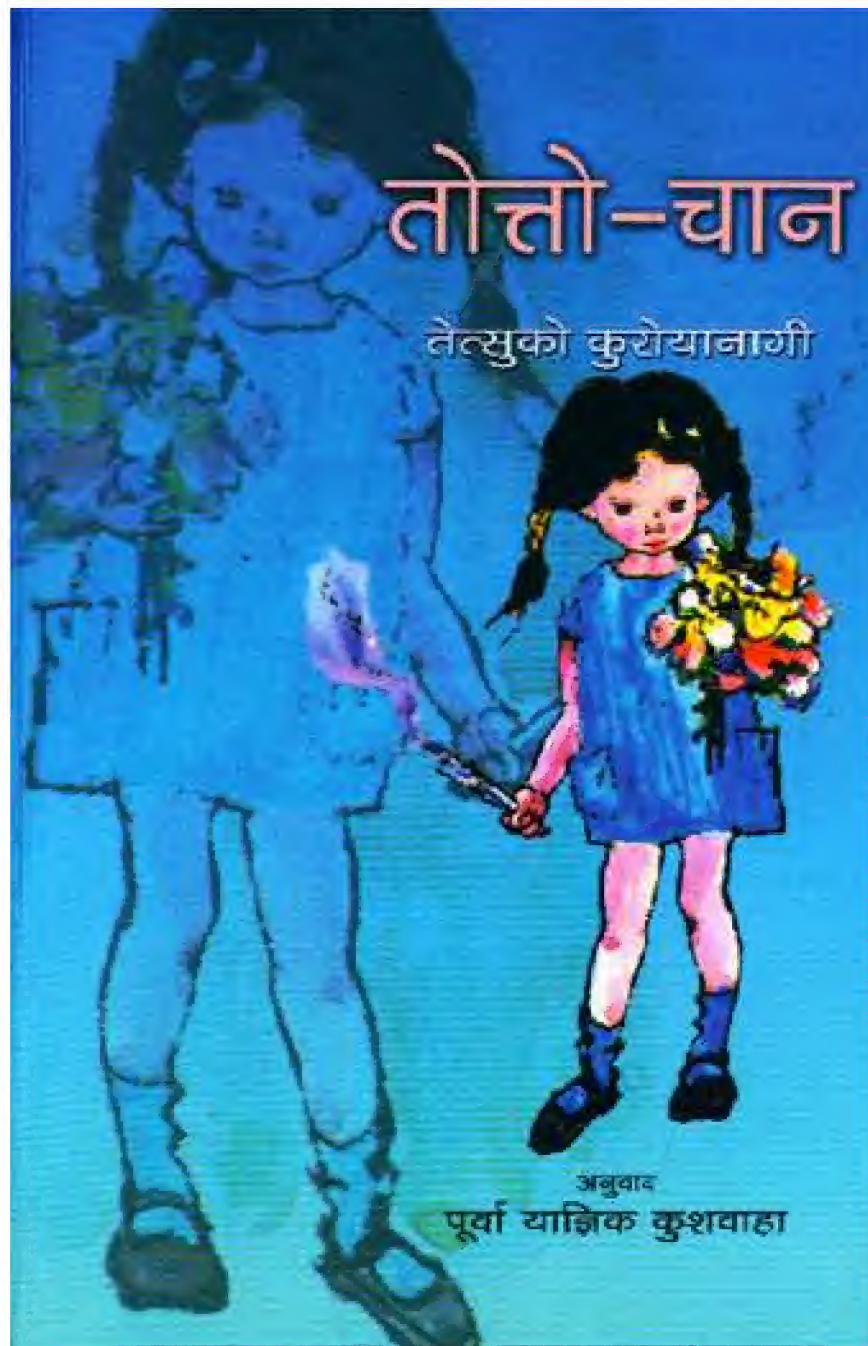


तोत्तो-चान

तेत्सुको कुरोयानागी



अनुवाद
पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा

तोत्तो-चान

खिड़की में खड़ी नन्ही लड़की



तेत्सुको कुरोयानागी

अनुवाद

पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा

चित्र

चिहिरो इवासाकी



नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

अनुक्रम

आमुख	नौ
स्टेशन	1
खिड़की में खड़ी नन्ही लड़की	2
नया स्कूल	7
“स्कूल मुझे अच्छा लगा !”	8
हेडमास्टर जी	9
दोपहर का भोजन	12
तोत्तो-चान का स्कूल जाना	12
ट्रेन वाली कक्षा	14
तोमोए में पठन-पाठन	16
समुद्री खाना—पहाड़ी खाना	18
“ठीक से चबाओ !”	21
सैर	21
स्कूल का गीत	24
“सब कुछ वापस डालना !”	26
तोत्तो-चान का नाम	29
रेडियो मसखरे	30
रेल के नए डिब्बे का आगमन	30
तरण-ताल	34
प्रगति-पत्र	36
गर्मी की छुट्टियां	37
अपूर्व अनुभव	38
बहादुरी की परीक्षा	42
अभ्यास कक्ष	45
यात्रा गर्म सोते की	47
ताल व्यायाम	50
“मुझे सिर्फ यही चाहिए !”	54
सबसे खराब कपड़े	56

ताकाहाशी	58
“कूदने के पहले देखो !”	60
“और फिर ‘ओह’”	61
“हम तो खेल भर रहे थे !”	66
खेल दिवस	68
कवि इस्सा	72
एक रहस्य	74
हाथों से बातचीत	76
सैंतालीस रॉनिन	77
“मासाओ-चान !”	79
चोटियां	81
“धन्यवाद”	83
पुस्तकालय का डिब्बा	85
पूछ	87
तोमोए में दूसरा साल	89
स्वान-लेक	90
खेती-बाड़ी के शिक्षक	92
खुले में रसोई	95
“तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो !”	98
दुलहन	100
घटिया स्कूल	102
वालें का रिबन	104
घायलों से मिलना	106
स्वास्थ्य-छाल	108
अंग्रेजी बोलने वाला बच्चा	113
पहला नाटक	115
चाक	117
“यासुकी-चान नहीं रहा !”	119
जासूस	121
डैडी का वायलिन	124
वादा	126
रॉकी का गायब होना	127
चाय पार्टी	131
“सायोनारा, सायोनारा !”	134
उपसंहार	135

आमुख

तोमोए नामक स्कूल और उसके संस्थापक व संचालक सोसाकु कोबायाशी के बारे में कुछ लिखने की तीव्र इच्छा एक अर्से से मेरे मन में थी।

इस किताब में वर्णित कोई भी घटना मनगढ़ंत नहीं है। ये सब सच में घटी थीं और इनमें से कुछ घटनाएं मुझे याद रह गयी थीं। इन्हें लिख डालने की तीव्र इच्छा के साथ एक बात और थी जिसने इस पुस्तक को संभव बनाया। वह है एक तोड़े गए वचन की पूर्ति। जैसे पुस्तक के एक अध्याय में मैंने लिखा है, बचपन में मैंने श्री कोबायाशी को वादा किया था कि मैं बड़े होने पर तोमोए में पढ़ाऊंगी। पर यह वादा मैं निभा न सकी। बदले में मेरी यह चेष्टा रही है कि मैं जितने भी लोगों को श्री कोबायाशी के बारे में बता सकूँ, बताऊँ। यह बताऊँ कि वे कैसे व्यक्ति थे, बच्चों को कैसा अथाह प्यार करते थे और उन्हें शिक्षित करने के कौन-कौन से रास्ते अपनाते थे।

1963 में श्री कोबायाशी को मृत्यु हुई। आज, अगर वे मौजूद होते तो इस पुस्तक में जोड़ने के लिए और भी बहुत कुछ बताते। यह सब लिखते-लिखते भी मुझे महसूस हो रहा है कि मेरे बालपन की कई घटनाएं, जो मेरे लिए महज मधुर स्मृतियां थीं, दरअसल किन्हीं निश्चित उद्देश्यों को लेकर उनके द्वारा सायास सोची-विचारी गयी गतिविधियां थीं। मैं एकाएक सोचने लगती हूँ, ‘ओह, तो श्री कोबायाशी के मन में यह होगा।’ या फिर ‘भला, यह उन्हें कैसे सूझा होगा।’ हर एक खोज के साथ मैं चकित होती हूँ, भाव-विह्वल हो उठती हूँ और मेरा मन उनके प्रति गहरी कृतज्ञता से भर उठता है।

खुद अपने बारे में मुझे यह तय कर पाना असंभव लगता है कि उनके बार-बार दोहराए गए कथन “तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो” ने मुझे किस सीमा तक संबल दिया होगा। अगर मेरा दाखिला तोमोए में न हुआ होता और मैं श्री कोबायाशी से न मिली होती तो शर्तिया मेरे माथे पर ‘खराब लड़की’ का ठप्पा लग चुका होता, और आज मैं कुंठाओं से भरी एक भ्रमित महिला होती।

1945 में तोक्यो पर हुए हवाई हमलों से लगी आग में तोमोए नष्ट हुआ। श्री कोबायाशी ने यह स्कूल अपनी निजी जमा-पूंजी से बनाया था। इसलिए उसे

फिर से बनाने में समय लगा। युद्ध के बाद उन्होंने ठीक उसी जगह एक बालशाला खोली और आज जो 'चाइल्ड एजुकेशन डिपार्टमेंट आफ कुनिताची कालेज आफ म्यूजिक' की स्थापना में भी सहायता की। उन्होंने वहां 'ताल व्यायाम' (यूरिथमिक्स) भी सिखाया। बाद में, कुनिताची प्राथमिक स्कूल की स्थापना में भी उन्होंने मदद की। पर अपने सपनों की आदर्श शाला की पुनर्स्थापना से पहले ही वे उनहत्तर वर्ष की आयु में चल बसे।

तोमोए गाकुएन, तोक्यो के दक्षिण-पश्चिम में तोयाको रेलवे-लाइन पर, जियुगाओका स्टेशन से तीन मिनट की पैदल दूरी पर स्थित था। उस जगह आज पीकोंक सुपर मार्केट और एक विशाल पार्किंग स्थल है। अभी, बस उस रोज ही तो, यह जानते हुए भी कि मेरे पुराने स्कूल का कुछ भी शेष नहीं बचा है, मैं अपनी स्मृतियों के जोर से खिंची हुई वहां गयी। पार्किंग स्थल के पास मैंने गाड़ी की गति धीमी कर दी—यही तो वह जगह थी जहां रेल के डिब्बों में कक्षाएं लगती थीं और खेलने का मैदान हुआ करता था। पार्किंग स्थल इंजार्ज मेरी कार देखकर चिल्लाया, "यहां गाड़ी मत खड़ी कीजिए। कोई जगह खाली नहीं है।"

कहने की इच्छा हुई, "मुझे गाड़ी खड़ी नहीं करनी है, मैं तो बस पुरानी यादें ताजा कर रही हूँ।" पर फिर यह सोचकर कि वह भला मेरी बात कैसे समझेगा, मैं आगे बढ़ गयी। एक गहरे विषाद ने मुझे घेर लिया और गति बढ़ाकर वहां से जाते हुए मैंने आंसुओं को अबाध बहते पाया।

मैं जानती हूँ कि इस दुनिया में कई श्रेष्ठ शिक्षाविद् होंगे, उच्च-आदर्शों और बच्चों को अथाह प्रेम करने वाले, जो आदर्श शालाओं को स्थापित करना चाहते होंगे। मैं यह भी जानती हूँ कि इस सपने को साकार करना कितना कठिन है। 1937 में तोमोए की स्थापना करने से पहले श्री कोबायाशी ने सालों-साल अध्ययन में बिताए थे और 1945 में वह जलकर राख हो गया था। कितना क्षणभंगुर था उसका अस्तित्व।

मेरा पक्का विश्वास है कि जिस समय मैं तोमोए में थी उस समय श्री कोबायाशी का उत्साह चरम पर था और रचनात्मक योजनाएं पूरी तरह प्रस्फुटित थीं। और तब अचानक उस तबाही से मेरा मन दुख से भर उठता है कि अगर युद्ध न हुआ होता तो न जाने कितने बच्चे उनके स्नेह-संरक्षण में बढ़ सकते थे।

मैंने इस पुस्तक में श्री कोबायाशी की शिक्षण पद्धतियों के वर्णन की चेष्टा की है। उनका मानना था कि सभी बच्चे स्वभावतया अच्छे होते हैं, पर इस प्राकृतिक स्वभाव को बाहरी वातावरण और वयस्कों का दुष्प्रभाव बड़ी आसानी से नष्ट कर डालता है। फलतः उनका प्रयास इस 'अच्छे स्वभाव' को उभारने, उसे सींचने-संजोने और विकसित करने का था ताकि बच्चे अपनी निजी 'व्यक्तिकता' के साथ बड़े हों।

श्री कोबायाशी के लिए स्वाभाविकता मूल्यवान थी। वे चाहते थे कि बच्चों के चरित्र यथासंभव स्वाभाविकता के साथ निखरें। वे प्रकृति को भी प्यार करते थे। उनकी छोटी बेटी मियो-चान ने बताया कि उसके पिता उसे बचपन से ही यह कहकर लंबी सैर पर ले जाते थे, "चलो हम प्रकृति की लय-ताल को तलाशें।"

किसी विशाल वृक्ष के पास ले जाकर वे उसे वृक्ष की शाखाओं और पत्तों को हवा में झूमते दिखाते। उसे पत्तों, शाखाओं और तने का रिश्ता बताते। यह भी कि हवा की कमी या तेजी के कारण उनका झूमना किस प्रकार बदल जाता है। यह सब ठीक से देख पाने के लिए वे पूरी तरह स्थिर खड़े रहते। और अगर हवा थमी हुई होती तो एक नन्हे से झोंके के लिए वे धीरज से, चेहरा ऊपर किए देर तक खड़े रहते। सिर्फ हवा ही नहीं वे नदियों को भी देखते। पास ही बहने वाली तामा नदी के किनारे जा वे उसके बहाव को देखते। मियो-चान ने बताया कि यह सब करते हुए वे कभी नहीं थकते थे।

पाठकों को आश्चर्य हो सकता है कि युद्ध के दौरान जापानी सरकार ने ऐसे अपरंपरागत स्कूल को चलने कैसे दिया, जहां पठन-पाठन पूर्णतया उन्मुक्त वातावरण में होता था। दरअसल श्री कोबायाशी को प्रचार-प्रसार से सख्त नफरत थी। युद्ध प्रारंभ होने के पहले भी उन्होंने स्कूल की कोई फोटो नहीं खींचने दी थी, न ही उसके अपरंपरागत तौर-तरीकों का प्रचार होने दिया था। शायद यह एक कारण रहा होगा जिसके कारण पचास से भी कम छात्र-छात्राओं वाला यह नन्हा-सा स्कूल सबकी नजरों से बचकर अपना अस्तित्व बनाए रख सका। दूसरा कारण यह था कि शिक्षा मंत्रालय श्री कोबायाशी को एक शिक्षाविद् के रूप में ससम्मान देखता था।

प्रत्येक तीन नवंबर—जो हमारी स्मृतियों में बसा लुभावना खेल दिवस का दिन है—को तोमोए के भूतपूर्व छात्र कुहोन्बुत्सु मंदिर के एक कमरे में पुनर्मिलन के लिए एकत्रित होते हैं। किसने वहां कब पढ़ाई की थी, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। यद्यपि हम अब चालीस पार कर चुके हैं, और कुछ तो पचास के आसपास हैं, हम सबके अपने बड़े-बड़े बच्चे हैं, पर फिर भी हम सब एक दूसरे को अपने बचपन के उपनामों से संबोधित करते हैं। ठीक वैसे ही, जैसे पहले करते थे। श्री कोबायाशी की अनेक स्नेह से भरी विरासतों में यह पुनर्मिलन भी एक है।

यह बिल्कुल सच है कि मुझे अपनी पहली प्राथमिक शाला से निकाला गया था। उस स्कूल के बारे में मुझे ज्यादा कुछ याद नहीं है, पर मां ने मुझे साजिदों और खुलने वाली मेज के बारे में बताया था। सच बताऊं तो स्कूल से निकालने वाली बात को स्वीकारना मुझे बेहद कठिन लगा था। क्या मैं सच में इतनी शैतान थी ? बहरहाल लगभग पांच वर्ष पूर्व एक प्रातः दूरदर्शन शो में मेरा परिचय एक ऐसी महिला से हुआ जो मुझे उस समय से जानती थीं। दरअसल वह मेरी कक्षा

के पास वाली कक्षा की कक्षा-शिक्षिका थीं। उन्होंने मुझे जो कुछ बताया उससे मैं भौंचक रह गयी।

“तुम मेरे कमरे के पास वाले कमरे में पढ़ती थी,” उन्होंने बताया। “और जब भी मुझे कक्षा के बीच में किसी काम से शिक्षक-कक्ष में जाना पड़ता तो मैं तुम्हें किसी न किसी शैतानी के कारण अपनी कक्षा के बाहर खड़ा पाती थी। जब मैं तुम्हारे पास से गुजरती तो तुम मुझसे जानना चाहती थी कि तुम्हें बाहर क्यों निकाला गया है, आखिर तुमसे भूल क्या हुई थी। एक बार तुमने मुझसे पूछा था, ‘क्या आपको साजिदे अच्छे नहीं लगते?’ मुझे कभी यह समझ नहीं आता था कि मैं तुमसे किस तरह पेश आऊँ। इसलिए अंततः मैं शिक्षक-कक्ष में जाने से पहले बाहर झाँकती और अगर तुम मुझे बाहर खड़ी दिखाई देती तो मैं जाना ही टाल देती। तुम्हारी कक्षा-शिक्षिका अक्सर शिक्षक-कक्ष में तुम्हारे बारे में मुझसे बातें करतीं। वह कहतीं, ‘यह लड़की भला ऐसी क्योंकर है?’ इसलिए बहुत बाद जब तुम दूरदर्शन पर आने लगी तो मुझे तुम्हारा नाम फौरन याद आ गया। ये घटनाएं बेहद पुरानी हैं, पर तुम पहली कक्षा की छात्रा के रूप में मुझे बखूबी याद हो।”

क्या सच में मुझे कक्षा के बाहर निकाल दिया जाता था? सच कहूँ तो मुझे इसकी कोई याद नहीं है और यह बात जानकर मैं हैरान रह गयी थी। दरअसल प्रातःकालीन शो में आयी इस जवान लगने वाली सफेद बालों वाली दयालु शिक्षिका ने ही मुझे विश्वास दिलाया कि मुझे सच में मेरे पहले स्कूल से निकाल दिया गया था।

और यहां मैं अपनी माँ के प्रति आभार जताना चाहूँगी जिसने मुझे मेरे बीसवें जन्मदिन से पहले इस बारे में कुछ भी नहीं बताया था।

“पता है तुम्हें अपना स्कूल क्यों बदलना पड़ा था?” उसने अचानक एक दिन पूछा था। मेरे ना कहने पर उसने अपने चेहरे पर बिना शिकन लाए कहा, “क्योंकि तुम्हें पहले स्कूल से निकाल दिया गया था।”

माँ उस वक्त भी मुझसे कह सकती थी, “आखिर तुम्हारा होगा क्या? एक स्कूल से तो तुम्हें निकाल दिया गया है, अब अगर दूसरे से भी निकाल दिया गया तो तुम क्या करोगी?”

अगर माँ ने ऐसा कुछ कहा होता तो मैं तोमोए गाकुएन में अपना पहला कदम रखते समय कितनी दुखी, किस कदर सहमी हुई होती। गहरी जड़ों वाले पेड़ों का वह गेट, रेल के डिब्बों में लगने वाली कक्षाएं भी शायद मुझे उतने आनंददायी नहीं लगते। सच, मैं सौभाग्यशाली थी कि मुझे ऐसी माँ मिली।

उन दिनों सुद्ध चल रहा था, इसलिए तोमोए में केवल चंद फोटो ही खिंच पाए थे। इन चित्रों में स्कूल में अपना अंतिम साल पूरा करने वाली कक्षा के बच्चों के चित्र सबसे उम्दा हैं। प्रायः पूरी कक्षा सभागार के सामने वाली सीढ़ियों पर एक

साथ खड़ी हो जाती थी। इकट्ठा होने के पहले “चलो-चलो, जल्दी करो, फोटो में शामिल हो जाओ” की हांक लगती। और तब दूसरी कक्षाओं के बच्चे भी भीड़ में आ घुसते। अंत में यह पहचानना मुश्किल हो जाता कि कौन से बच्चे अंतिम साल वाली कक्षा के हैं। हमारे पुनर्मिलन के दौरान इस विषय पर काफी बातचीत होती रही है। श्री कोबायाशी इन अवसरों पर कभी कुछ नहीं कहते थे। उन्हें शायद यह लगता होगा कि महज एक कक्षा के औपचारिक और गंभीर चित्र के बदले स्कूल के सभी बच्चों का एक जीवंत चित्र बेहतर रहेगा। उन चित्रों को देख आज भी यही लगता है कि वे सच में तोमोए की आत्मा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

तोमोए के बारे में मैं और भी बहुत कुछ लिख सकती थी। पर मैं इतने से ही संतुष्ट हूँ कि लोग यह जान लें कि तोतो-चान जैसी एक लड़की सही वयस्क दिशानिर्देश के कारण एक ऐसी महिला में विकसित हो सकी जो दूसरों के साथ जी सकती है। मेरा पक्का विश्वास है कि अगर आज तोमोए जैसे ढेरों स्कूल होते तो चारों ओर व्याप्त हिंसा कम होती और इतने बच्चे स्कूलों से पलायन नहीं करते। तोमोए में स्कूली घंटे खत्म होने के बाद कोई बच्चा घर लौटना ही नहीं चाहता था। और हर सुबह सबको स्कूल पहुंचने की उतावली रहती थी। ऐसा था हमारा वह स्कूल।

सोसाकु कोबायाशी, जिनकी अंतःप्रेरणा व दृष्टि ने इस अद्भुत स्कूल की स्थापना की थी, का जन्म 18 जून, 1893 में तोक्यो के उत्तर-पश्चिम में हुआ था। बचपन से ही उन्हें प्रकृति और संगीत से गहरा लगाव था। लड़कपन में वे अपने घर के पास बहने वाली नदी के किनारे खड़े रहते और दूर सामने होता हारुना पर्वत। नदी का कलकल निनाद उन्हें एक ऐसा वाद्यवृन्द लगता जिसे वे अपनी कल्पना में निर्देशित करते थे।

एक गरीब खेतिहर परिवार के छह बच्चों में वे सबसे छोटे थे। अपनी प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के बाद उन्हें सहायक अध्यापक बनने के लिए काफी संघर्ष करना पड़ा। इतनी कच्ची उम्र में सहायक-अध्यापक का प्रमाण-पत्र पा लेना उनकी विलक्षण प्रतिभा का द्योतक है। इसके कुछ ही समय बाद तोक्यो के एक प्राथमिक स्कूल में उनकी नियुक्ति हुई। बच्चों को पढ़ाने के साथ उन्होंने संगीत का अध्ययन जारी रखा। इस कारण वे अंततः अपनी महत्वाकांक्षा पूरी कर पाए और उन्हें जापान के श्रेष्ठतम संगीत शिक्षालय के संगीत शिक्षण विभाग में दाखिला मिल सका। यह शिक्षालय आज ‘तोक्यो यूनिवर्सिटी आफ फाइन आर्ट्स एंड म्यूजिक’ है। यहां से स्नातक डिग्री पाने के बाद वे हारुजी नाकामूरा द्वारा स्थापित साईकाई प्राथमिक शाला में संगीत शिक्षक बने। हारुजी एक ऐसे अद्भुत व्यक्ति थे जो यह मानते थे कि शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण चरण प्राथमिक शिक्षा ही है। अपने स्कूल की कक्षाएं वे छोटी और पाठ्यक्रम मुक्त रखते थे, ताकि बच्चों की

वैयक्तिकता उभर सके और उनमें आत्मसम्मान बढ़े। वहां बच्चे सुबह पढ़ाई-लिखाई करते थे। दोपहर सैर, पेड़-पौधों को इकट्ठा करने, चित्र बनाने, गीत गाने और हेडमास्टर की बातचीत सुनने में बिताई जाती थी। श्री कोबायाशी के चिंतन पर इन पद्धतियों का भारी प्रभाव पड़ा और बाद में तोमोए के लिए भी उन्होंने ऐसा ही पाठ्यक्रम बनाया।

वहां संगीत सिखाते हुए श्री कोबायाशी ने बच्चों के लिए एक संगीत नाटिका लिखी थी। इस नाटिका ने उद्योगपति बैरॉन इवासाकी को प्रभावित किया। इवासाकी परिवार वह परिवार है जिसने मित्सुविशी नामक विशाल व्यवसाय की स्थापना की थी। बैरॉन इवासाकी ललित कलाओं के संरक्षक थे। जापान के विख्यात संगीतकार कोस्काक यामादा को उन्होंने सहायता दी थी। साथ ही वे साईकाई स्कूल की आर्थिक सहायता भी कर रहे थे। श्री बैरॉन ने श्री कोबायाशी को शिक्षण पद्धतियों का अध्ययन करने के लिए यूरोप भेजने का प्रस्ताव रखा।

इस प्रकार श्री कोबायाशी ने 1922 से 24 तक के दो वर्ष यूरोप में बिताए। इस दौरान वे कई स्कूलों में गये और पेरिस में एमिले जैक्स डेलक्रॉज के पास यूरिथमिक्स (ताल व्यायाम) का अध्ययन किया। लौटकर एक साथी के साथ उन्होंने साईजो किंडरगार्डन की स्थापना की। श्री कोबायाशी किंडरगार्डन शिक्षकों को कहते कि वे बच्चों को पूर्व-निश्चित खांचों में डालने की कोशिश न करें। वे कहा करते, “उन्हें प्रकृति पर छोड़ो। उनकी महत्वाकांक्षाओं को कुचलो नहीं, उनके सपने तुम्हारे सपनों से कहीं विशाल हैं।” साईजो किंडरगार्डन जैसा किंडरगार्डन जापान में पहले था ही नहीं।

डेलक्रॉज के साथ अपना अध्ययन जारी रखने के लिए श्री कोबायाशी 1930 में फिर से यूरोप गए। अपनी इन यात्राओं और अवलोकन के बाद उन्होंने तय किया कि वे जापान लौटकर अपना स्कूल प्रारंभ करेंगे।

1937 में तोमोए प्रारंभ करने के साथ उन्होंने जापान यूरिथमिक्स समिति की स्थापना भी की। अधिकांश लोग उन्हें जापान में यूरिथमिक्स प्रारंभ करने वाले व्यक्ति के रूप में या युद्ध के बाद कुनिताची कालेज आफ म्यूजिक में किए गए काम के कारण ही याद करते हैं। उनकी शिक्षण पद्धति का प्रत्यक्ष अनुभव पाने वाले हम जैसे लोग बेहद कम हैं। यह दुर्भाग्य ही था कि तोमोए जैसे दूसरे स्कूल को गढ़ने के पहले ही उनकी मृत्यु हो गयी। जिस समय तोमोए जल रहा था, तब भी वे एक बेहतर स्कूल की कल्पना कर रहे थे। आसपास के शोरगुल से विचलित हुए बिना उन्होंने उस समय भी उत्साह से पूछा था, “अब हम कैसा स्कूल बनाएं?”

जिस समय मैं यह पुस्तक लिखने लगी तो मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि मेरे दैनिक दूरदर्शन साप्ताहिक कार्यक्रम ‘तेत्सुको’स रूम’ का निर्माता, जिसके

साथ मैं सालों-साल काम कर चुकी थी, एक दशक से श्री कोबायाशी पर शोध कर रहा है। वह श्री कोबायाशी से कभी मिला नहीं था पर उनमें उसकी रुचि एक महिला के कारण जगी थी। वह बच्चों की यूरिथमिक्स कक्षा में पियानो बजाया करती थीं। “आपको पता है, बच्चे ऐसे चलते ही नहीं हैं।” श्री कोबायाशी ने उन्हें सुधारते हुए कहा था। दरअसल वे बच्चों के प्रति इतने संवेदनशील थे कि उन्हें यह तक मालूम था कि वे कैसे सांस लेते हैं, किस तरह हिलते-डुलते हैं। मुझे उम्मीद है कि काजुहिको सानो, मेरे निर्माता, अपनी पुस्तक शीघ्र ही पूरी कर लेंगे ताकि दुनिया को इस विलक्षण व्यक्ति के बारे में कुछ और भी पता चले।

बीस वर्ष पहले एक नौजवान कोदांशा संपादक ने एक महिला पत्रिका में तोमोए पर लिखा मेरा लेख देखा। ढेरों कागज-पन्नों से लैस होकर वह मेरे पास इस अनुरोध के साथ आया कि मैं उस लेख को विस्तार देकर एक समूची पुस्तक का रूप दे दूं। मैंने उस लेख का उपयोग कुछ अपराध-बोध के बावजूद किसी और काम के लिए किया। और जब उसके विचार को मूर्त रूप मिला वह नौजवान एक निदेशक बन चुका था। पर यही वह व्यक्ति—कात्सुहिसा कातो—था जिसने मुझे न केवल इस पुस्तक को लिखने का विचार दिया बल्कि उसे पूरा करने का आत्मविश्वास भी दिया। उस वक्त तक मैंने बहुत कुछ लिखा नहीं था, अतः एक पूरी पुस्तक का विचार बेहद डरावना लगता था। आखिरकार एक बार मैं एक अध्याय लिख डालने पर मुझे बाध्य किया गया। ये अध्याय एक शृंखला के रूप में कोदांशा की ‘यंग वुमैन’ पत्रिका में छपे। ये आलेख फरवरी 1979 से दिसंबर 1980 तक लगातार छपे।

उस दौरान हर महीने एक चित्र चुनने में शिमो-शाकुजी, नेरिमा-कु, तोक्यो स्थित ‘चिहिरों इवासाकी म्यूजियम आफ पिक्चर बुक्स’ जाती थी। चिहिरों इवासाकी बच्चों को चित्रित करने में माहिर थीं। मुझे शंका है कि दुनिया के किसी दूसरे चित्रकार ने बच्चों के इतने जीवंत चित्र बनाए होंगे। उन्होंने बच्चों को अनंत भाव-भंगिमाओं में दर्शाया है। वह छह माह और नौ माह के शिशुओं तक के भाव स्पष्ट चित्रित कर देती थीं। मैं बयान नहीं कर सकती कि उनके बनाए चित्रों का अपनी पुस्तक में उपयोग कर मुझे कितनी प्रसन्नता हुई। ये सारे चित्र आश्चर्यजनक रूप से मेरे वर्णन से मेल खाते थे। चिहिरों इवासाकी की मृत्यु 1974 में ही हो चुकी थी, पर लोग मुझसे अकसर पूछते हैं कि क्या जब मैंने अपनी पुस्तक लिखनी शुरू की, उस समय वह जीवित थीं। इससे इतना तो साफ हो ही जाता है कि उनके चित्र कितने वास्तविक थे और उन्होंने बच्चों को कितने विविध रूपों में चित्रित किया था।

चिहिरों इवासाकी ने सात हजार चित्र छोड़े थे। मुझे उनके पुत्र, जो म्यूजियम के सहायक-संरक्षक थे, और उनकी पत्नी के सौजन्य से इनमें से कई चित्रों को

देखने का अवसर मिला। मैं इवासाकी के पति के प्रति भी आभार जताना चाहती हूँ जिन्होंने इन चित्रों के उपयोग की अनुमति मुझे दी। मैं नाटककार तादासु इजावा की भी आभारी हूँ जो म्यूजियम के संरक्षक हैं। अब मैं भी इस म्यूजियम की एक न्यासी हूँ। जब-जब मैं अपने लेखन में अटकी या हिचकिचाई, उन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया।

जाहिर है कि मियो-चान और तोमोए के सभी दूसरे साथियों ने मेरी बहुत मदद की। पुस्तक के जापानी संस्करण के संपादक केइको इवामोतो के प्रति भी मैं आभारी हूँ, क्योंकि वह मुझे हमेशा कहते रहे, “हमें इसे सच में एक बढ़िया पुस्तक बनाना है।”

पुस्तक के जापानी शीर्षक का विचार मुझे चंद वर्ष पहले प्रचलित एक मुहावरे से आया। उस समय जब लोगों को यह कहना होता कि कोई व्यक्ति हाशिए पर जी रहा है या फिर मूलधारा से कट चुका है तो वे कहते कि वह ‘खिड़की के पास खड़ा है’। यह सच है कि बचपन में मैं खिड़की में महज इस उम्मीद से खड़ी होती थी कि शायद कहीं साजिंदे नजर आ जाएं, फिर भी अपने पहले स्कूल में मैं एक अजीब सी स्थिति में ही जी रही थी—सबसे अलग-थलग, मूलधारा से कटी हुई। पर शीर्षक के इन अर्थों के साथ एक अर्थ और भी है—आनंद और उल्लास की वह खिड़की जो मेरे लिए तोमोए में खुली।

आज तोमोए नहीं है। लेकिन पुस्तक पढ़ते हुए यदि वह कुछ क्षण के लिए भी आपकी कल्पना में साकार हो उठा तो उससे बड़ी खुशी मेरे लिए कुछ और नहीं होगी।

तोक्यो, 1982



तोतो-चान को छपे सिर्फ तीन वर्ष हुए हैं, पर इस बीच इतना कुछ घट गया है कि मैं विस्मित भी हूँ, और प्रसन्न भी। जब मैं अपने प्रिय हेडमास्टर जी और तोमोए के बारे में लिख रही थी तो मुझे यह सूझा तक नहीं था कि मेरी किताब एक बेस्ट-सेलर बनेगी। छपने के पहले ही साल में इसकी पैंतालीस लाख प्रतियां बिक गयीं और अब तक की बिक्री लगभग साठ लाख प्रतियों तक पहुंच गयी है। मुझे बताया गया कि ‘यह जापानी प्रकाशन इतिहास का एक रिकार्ड है।’ पर इस सबका मेरे लिए कोई खास अर्थ नहीं था। पर जब जापान के कोने-कोने से हर रोज़ ढेरों पत्र आने लगे तो मुझे अहसास हुआ कि लोग सच में मेरी किताब पढ़ रहे हैं।

हर उम्र के लोगों ने मुझे पत्र लिखे। इन लिखने वालों की आयु 5 से 103 वर्ष की थी। हर एक पत्र मन को विभोर करने वाला था। मुझे इस बात से भी

अचंभा हुआ कि इन पत्रों में कई पत्र प्राथमिक शालाओं में पढ़ने वाले बच्चों के भी थे। मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि इतने नन्हे-मुन्ने बच्चे भी इस पुस्तक को पढ़ेंगे, यद्यपि मैंने कठिन चीनी लिपि के साथ उसका सरल पाठ देने की सावधानी जरूर बरती थी। आज के युग में जब लिखित शब्द को लगातार त्यागा जा रहा है, मुझे यह बात चकित कर गयी कि दूसरी कक्षा तक के बच्चे शब्दकोशों के सहारे तोतो-चान पढ़ रहे थे। दूसरी कक्षा की एक नन्ही लड़की ने मुझे लिखा कि जब भी वह किसी विकलांग बच्चे को देखती है, उसे लगता है “‘ओहो, यह तो यासुकी-चान है” या फिर “‘अरे, यह बच्चा जरूर तोमोए का होगा।” और तब वह भागती हुई उन्हें ‘हैलो’ करने जाती है। और जब वे उसके अभिवादन का जवाब देते हैं तो उसे बेहद खुशी होती है। वह भी तब, जब तोमोए का अंत हुए चालीस साल बीत चुके हैं ! बच्चे सच में अद्भुत होते हैं, है ना !

कई बच्चों ने अपने पत्रों में लिखा कि तोमोए के जलने की घटना से उन्हें अहसास हुआ कि युद्ध बेहद खराब होते हैं। दरअसल बच्चों की यह प्रतिक्रिया भर पुस्तक लिखने के संपूर्ण प्रयास को सफल कर देती है। पर सच यह है कि जिस सभ्य मैं इस पुस्तक पर काम कर रही थी मेरे मन में इतना ही विचार था कि काश स्कूली शिक्षक और युवा माताएं श्री कोबायाशी के बारे में पढ़कर यह कह सकें कि “हां, यह एक ऐसा व्यक्ति था जो पूरी तरह समर्पित था, बच्चों को अथाह प्यार करता था, उनमें गहरी आस्था रखता था” तो क्या ही अच्छा हो। पर साथ ही मन में कहीं यह भय भी था कि कहीं शिक्षक उनके विचारों को इस स्पर्धाशील समाज के लिए अति-आदर्शवादी मानकर नकार न दें।

पर हुआ यह कि पुस्तक के छपने के बाद प्राथमिक शालाओं के अनेक शिक्षकों ने लिखा कि वे हर दिन दोपहर के अवकाश में अपने छात्र-छात्राओं को पुस्तक के कुछ अंश पढ़कर सुनाते हैं। कला-शिक्षकों ने लिखा कि वे पढ़कर सुनाने के बाद, सुने हुए भाग पर बच्चों को कोई चित्र बनाने को कहते हैं। माध्यमिक स्तर के कुछ शिक्षकों ने लिखा कि शिक्षा की वर्तमान स्थिति से वे इतने विचलित और चिंतित थे कि शिक्षण कार्य को तिलांजलि देने पर आमादा थे। पर तभी श्री कोबायाशी के विचारों से प्रेरित हो, उन्होंने फिर से एक नयी कोशिश करने का मानस बनाया। ऐसे तमाम पत्रों को पढ़ मेरी आंखें सजल हो उठतीं, मुझे लगता कि कितने सारे लोग श्री कोबायाशी की तरह सोचते हैं।

जापान के शिक्षक मेरी पुस्तक का कई तरह से उपयोग कर रहे थे। पिछले साल इसके एक अध्याय ‘खेती-बाड़ी के शिक्षक’ को जापानी भाषा की तीसरी कक्षा की पाठ्य-पुस्तक में शामिल कर लिया गया। ‘घटिया स्कूल’ नामक अध्याय को चौथी कक्षा की नीति-शास्त्र व शिष्टाचार की पाठ्य-पुस्तक में शामिल किया गया। कई ऐसे पत्र भी आए जो मुझे उद्विग्न कर गए। बाल-अपराध बंदीगृह की

एक हाई स्कूल की छात्रा ने लिखा, “अगर मेरी मां तोत्तो-चान की मां जैसी होती, और मेरे शिक्षक श्री कोबायाशी जैसे होते तो आज मैं वहां न होती, जहां हूं।”

तोत्तो-चान एक बेस्ट-सेलर भला क्यों बनी ? जन संचार माध्यमों ने इस सवाल को उठाया और तब इसने एक बहस का रूप ले लिया। दैनिक पत्र ‘असाही’ में ‘तोत्तो-चान सिन्ड्रोम’ शीर्षक से आलेखों की एक श्रृंखला छपी, जिनमें पुस्तक के प्रभाव के विविध पक्षों की विवेचना की गयी। एक अन्य प्रकाशक ने तो इस विषय पर एक पूरी पुस्तक ही छाप डाली, जिसका शीर्षक था ‘तोत्तो-चान : एक बेस्ट-सेलर की कथा’। इसमें इस अभूतपूर्व विक्री की घटना के प्रत्येक पक्ष का विश्लेषण किया गया। मुझे लगता है कि पुस्तक की सफलता का एक बड़ा कारण यह रहा कि यह ठीक उस समय छपी जब जापान में शिक्षा की समस्या अपने चरम पर थी। सभी सोच रहे थे कि इस विषय में कुछ न कुछ किया जाना चाहिए। जाहिर है कि कई पाठकों ने इसे शिक्षाशास्त्र के एक प्रबंध के रूप में पढ़ा, जबकि ऐसी कोई मंशा मेरी थी नहीं। और फिर इस तथ्य ने भी इस अभूतपूर्व विक्री में योगदान दिया कि यह पुस्तक हर आयु वर्ग के लिए उपयुक्त थी। हर उम्र और विभिन्न दृष्टिकोण वाले पाठक इसके प्रति आकृष्ट हुए।

जापान में किसी महिला द्वारा लिखी यह पहली बेस्ट-सेलर थी। पहले-पहल पुरुष समालोचकों की प्रतिक्रिया नकारात्मक थी। मैंने गौर किया कि जिन पुरुष समालोचकों ने इस पर टिप्पणी की भी उनके प्रारंभिक वाक्य कुछ यों रहे, “मुझे मुखपृष्ठ काफी बचकाना लगा” या “मैंने इसे एक लोकप्रिय मनोरंजनकर्ता द्वारा लिखे गए एक हल्के-फुल्के बेस्ट-सेलर के खांचे में रखकर इसकी उपेक्षा की थी।” इन्हीं समालोचकों ने आगे जोड़ा, “मैं इसे पढ़ना तक नहीं चाहता था, पर परिवार के सदस्यों के आग्रह और दबाव के कारण मैं ऐसा करने पर बाध्य हुआ।” और ये समीक्षाएं अंततः सकारात्मक ही रहीं। इसलिए परिवारों के उन सभी सदस्यों को धन्यवाद जिन्होंने इस उत्साह से *तोत्तो-चान* का पक्ष लिया।

पुस्तक के प्रकाशन से भी पहले मैंने यह तय कर लिया था कि इससे होने वाली आय का उपयोग मैं जापान के बधिर अभिनेताओं के पहले व्यावसायिक नाट्य समूह की स्थापना के लिए करूंगी। मैंने सरकार को आवेदन किया कि वह इस समूह को एक सामाजिक कल्याण संगठन का दर्जा दे, ताकि मेरी मृत्यु के बाद या मेरी वृद्धावस्था में जब मैं इस संगठन के लिए कुछ न कर सकूँ, तब भी इसके अस्तित्व को आंच न आए। इस पेशकश में कई दिक्कतें सामने आईं क्योंकि जापान में पहले ऐसा कोई उदाहरण नहीं था। पर अंततः सरकार ने इस संदर्भ में अपनी स्वीकृति दे दी कि मैं पिछले पच्चीस वर्षों से कल्याण संबंधी गतिविधियों से जुड़ी रही हूँ। और यों ‘तोत्तो-फाउंडेशन’ का जन्म हुआ। संगठन को आशा से कहीं अधिक सफलता मिली और उसके माध्यम से ‘डेफ थिएटर आफ जापान’

अस्तित्व में आया। फिलहाल तोत्तो-फाउंडेशन के प्रशिक्षण केंद्र में बीस से अधिक बधिर अभिनेता प्रशिक्षण पा रहे हैं। उनके लिए संकेत-भाषा की कक्षाएं भी होती हैं। पिछली जुलाई में पालेरमो, इटली में आयोजित ‘अंतर्राष्ट्रीय मूक-बधिर कांग्रेस’ के नाट्य समारोह में पैतालीस राष्ट्रों के दर्शकों के समक्ष हमारे नाटक ‘क्योंगेन’ के मंचन के साथ हमारा चेहेता सपना यथार्थ में बदला। पहली बार जापानी बधिर अदाकार विदेश में अपनी प्रस्तुति रख सके और यह इसलिए संभव हुआ क्योंकि आप जैसे असंख्य पाठकों ने *तोत्तो-चान* पढ़ी।

दो वर्ष पहले तोत्तो-फाउंडेशन के कारण और *तोत्तो-चान* के एक विलक्षण बेस्ट-सेलर बनने के कारण मुझे सम्राट की वसंत गार्डन पार्टी में आमंत्रित किया गया, जहां केनिची फुकुई जैसे नोबेल पुरस्कार विजेता भी उपस्थित थे। सम्राट ने स्वयं मुझसे कहा, “आपकी पुस्तक इतनी भारी संख्या में बिकी, यह कितनी अच्छी बात है।”

सन् 1981 अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष था। 9 दिसंबर को (जिसे अब जापान में विकलांग दिवस घोषित कर दिया गया है) मुझे प्रधानमंत्री सुजुकी के हाथों पुरस्कार पाने का सम्मान मिला। इसके बाद कई दूसरे पुरस्कार भी मिले जिनमें युजो यामामोतो नामक बच्चों के लेखक की स्मृति में प्रारंभ किया गया साहित्यिक पुरस्कार ‘वेसाइड स्टोन’ भी शामिल है।

असंख्य लोगों ने *तोत्तो-चान* पर फिल्म, दूरदर्शन नाटक या एनिमेशन चलचित्र बनाने की अनुमति चाही है। पर मुझे हमेशा लगता है कि चिहिरों इवासाकी के हाथों बने चित्रों या पाठकों की कल्पना में बन चुके बिंबों के आगे बढ़ पाना असंभव होगा। इसलिए मैंने इन सभी अनुरोधों को ठुकरा दिया। पर एक अनुरोध को मैंने स्वीकृति दी है, और वह है शिनसेई निहौन सिंफनी आर्केस्ट्रा द्वारा *तोत्तो-चान* पर आधारित एक गीत-कथा की रचना। मुझे लगता है कि संगीत कल्पना को उन्मुक्त उड़ान भरने में सहायक होता है। आकिहिरो कोमोरी की प्रस्तुति मेरे शब्दों से भी अधिक भावविभोर करने वाली बन पड़ी है। शिनसेई निहौन सिंफनी ने जापान के विभिन्न भागों में, मेरे वर्णन का उपयोग करते हुए इसका मंचन किया है। अब इस गीत-कथा का एक रिकार्ड भी उपलब्ध है।

1982 में *तोत्तो-चान* के प्रकाशन के साल भर के बाद ही डोरोथी ब्रिटोन का अंग्रेजी अनुवाद तैयार हो चुका था। डोरोथी एक संगीतकार और कवियित्री हैं। उनका बेहतरीन अनुवाद उसी लय-ताल और भावनाओं को संजोए हुए है जो मूल कृति में हैं। जब मैंने उनका अनुवाद पढ़ा तो मैं भाव-विह्वल हो उठी। अंग्रेजी संस्करण ने भी एक रिकार्ड बनाया। वह जापान में सबसे ज्यादा बिकने वाली अंग्रेजी पुस्तक सिद्ध हुई। उसकी चार लाख प्रतियां बिकीं।

यह अंग्रेजी संस्करण उसी समय अमरीका में भी जारी हुआ। उस अवसर

पर मैं जॉनी कैरसन के 'टुनाईट' शो में आयी। इसके बाद कई दूरदर्शन कंपनियों ने वार्ताओं, समाचार पत्रिका कार्यक्रमों में शामिल होने, और साक्षात्कार देने के आग्रह किए। प्रख्यात अमरीकी दैनिक 'द न्यूयार्क टाइम्स' ने अपने रविवारीय पुस्तक विभाग में एक लंबी समीक्षा प्रकाशित की। पुस्तक की समीक्षा के साथ अमरीकी संचार माध्यमों को एक जापानी दूरदर्शन व्यक्तित्व का विचार भी आकर्षक लगा। 'टाइम्स' ने अपने जापान विशेषांक में एक पूरा पृष्ठ मेरे साक्षात्कार के लिए इस्तेमाल किया।

तोत्तो-चान के अनुवाद चीन और कोरिया में छप चुके हैं। क्योंकि इन दोनों ही देशों से जापान के स्वतंत्राधिकार अनुबंध नहीं हैं, मुझे चीनी अनुवाद के विषय में तब तक पता नहीं था, जब तक किसी भलेमानस ने एक परिचित जापानी के हाथों उसकी एक प्रति मुझे नहीं भिजवाई। पता यह चला है कि चीन में तोत्तो-चान के दो-तीन अनुवाद छपे हैं। पोलैंड व फिनलैंड के प्रकाशकों ने भी औपचारिकताएं पूरी कर ली हैं और इन भाषाओं में अनुवाद प्रगति पर हैं। एक चैकोस्लोवाकियाई प्रकाशक के साथ बातचीत चल रही है और यूरोप के भी कई देशों ने संपर्क किया है। मुझे प्रसन्नता है कि इतने लोगों को तोत्तो-चान के माध्यम से जापान के विषय में पता चलेगा। अमरीकी प्रशंसकों के भी कई पत्र मुझे मिले हैं। वहां के एक स्कूली बालक ने मुझे लिखकर पूछा, "तोत्तो-चान, क्या तुम एक सुंदर लड़की हो ? अगर हो, तो तुम मेरे घर खाना खाने आ सकती हो।" उसकी शिक्षिका ने अपनी कक्षा के बच्चों को यह पुस्तक पढ़कर सुनाई थी। उन्होंने पत्र के साथ नत्थी किए गए अपने खत में लिखा कि यह बच्चा एक गरीब अश्वेत परिवार का है।

मुझे लगता है कि यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि माध्यमिक और उच्च माध्यमिक शालाओं की कई लड़कियों ने अपने पत्रों में मुझे लिखा, "मुझे आशा नहीं थी कि इस पुस्तक में मुझे इतनी सहृदयता मिलेगी।" उन्होंने यह स्पष्ट नहीं किया कि पुस्तक की किस बात ने उन्हें सबसे अधिक आकृष्ट किया। संभवतया यह आकर्षण भी इन किशोरियों के लिए अलग-अलग रहा होगा। यह एक सच्चाई है कि युवा वर्ग को सहृदयता और सौम्यता छू जाती है।

हाल ही में 'यूनिसेफ' (नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित अंतर्राष्ट्रीय संस्था) ने मुझे अपना सद्भावना दूत नियुक्त किया है। और यह भी तोत्तो-चान की ही बदौलत संभव हुआ। हुआ यों कि यूनिसेफ के न्यूयार्क सचिवालय के कार्यकारी निदेशक को उनके किसी मित्र ने तोत्तो-चान की एक प्रति भेजी। पुस्तक पढ़ वह भाव-विह्वल हो उठे। उन्होंने कहा कि मेरे विचार यूनिसेफ के विचारों से पूर्णतया मेल खाते हैं। वह एशिया से एक सद्भावना दूत को तलाश भी रहे थे। इस प्रकार उन्होंने इस भूमिका के लिए मुझे चुना। अमरीकी अभिनेता डैनी केई, ब्रिटिश अभिनेता पीटर उस्तिनोव, नार्वे की अभिनेत्री लिव उल्मेन जैसे विख्यात व्यक्तित्व

इसके पहले सद्भावना दूत रह चुके हैं। अतः मैं चौथी दूत बनूंगी। विश्व में प्रतिदिन चालीस हजार और साल में डेढ़ करोड़ बच्चे भुखमरी से संबंधित रोगों से मरते हैं। मेरा काम इन हालातों को करीब से देखना-समझना और आपको उसकी रिपोर्ट देना होगा। मैं इन गर्मियों में अफ्रीका जाऊंगी और जैसे ही संभव होगा एशिया के देशों में भी। आज अगर श्री कोबायाशी जीवित होते तो मुझे पूरा विश्वास है कि वे बेहद प्रसन्न होते। "तुम सब एक हो, यह पता है ना तुम्हें। तुम कुछ भी करो, इस दुनिया में तुम सब एक साथ हो।" यही कहते थे श्री कोबायाशी, हमेशा।

वसंत, 1984

--तेलुको कुरोयानागी



स्टेशन

ओइमाची रेलगाड़ी से वे दोनों जियुगाओका स्टेशन पर उतरीं। मां ने तोतो-चान का हाथ अपने हाथ में थामा। टिकट दिखाकर निकलना जो था। तोतो-चान इससे पहले कभी रेलगाड़ी में नहीं बैठी थी। उसने अपना कीमती टिकट मुड़ी में कस कर छुपा लिया। टिकट देने की उसकी कतई इच्छा नहीं थी।

“मैं यह टिकट अपने पास रख लूँ ?” उसने टिकट बाबू से पूछा।

“न, ऐसा तुम नहीं कर सकती,” टिकट बाबू ने उससे टिकट लेते हुए कहा।

टिकटों से भरे डिब्बे की तरफ इशारा करते हुए उसने पूछा, “ये सारे टिकट आपके हैं ?”

“नहीं, ये स्टेशन के हैं।” टिकट बाबू ने निकलने वालों के हाथों से टिकट छीनते हुए जवाब दिया।

“ओह,” तोतो-चान ने हसरत भरी नजर डब्वे पर डाली और आगे कहा, “मैं बड़ी होकर रेलगाड़ी के टिकट बेचूंगी।”

टिकट बाबू ने अब पहली बार तोतो-चान को ध्यान से देखा। “मेरा नन्हा भी स्टेशन पर नौकरी करना चाहता है। तुम दोनों साथ काम कर सकते हो।”

तोतो-चान कुछ पीछे हटी। उसने टिकट बाबू के ऐनक लगे गोल-मटोल चेहरे को ध्यान से देखा। चेहरा उसे अच्छा लगा।

“हूँ।” उसने कमर पर अपने हाथ रखे और कुछ सोचा। “मुझे आपके बेटे के साथ काम करना बुरा नहीं लगेगा,” उसने कहा। “मैं इस पर सोचूंगी पर अभी मैं व्यस्त हूँ। पता है, मैं अपने नए स्कूल में जा रही हूँ।”

वह अपनी माँ की तरफ दौड़ते हुए चिल्लाई, “मैं टिकट बेचने वाली बनूंगी।”

माँ को आश्चर्य नहीं हुआ। पर फिर भी उसने कहा, “मैं तो सोचती थी कि तुम जासूस बनने वाली हो।”

तोतो-चान माँ का हाथ थामे आगे चलने लगी। उसे याद आया कि कल तक वह सच में जासूस ही बनना चाहती थी। पर टिकटों से भरे एक पूरे डिब्बे को संभालना भी तो मजेदार बात थी।

“अरे हाँ,” अचानक एक अच्छी-सी बात उसे सूझी। उसने अपनी माँ की ओर देख जोर से पूछा। “क्या मैं ऐसी टिकट बेचने वाली नहीं बन सकती जो असल में जासूस हो?”

माँ ने बात का जवाब नहीं दिया। छोटे फूलों वाली टोपी के नीचे उसका सुंदर चेहरा गंभीर था। सच तो यह था कि माँ बड़ी चिंतित थी। अगर तोतो-चान को वे लोग नये स्कूल में नहीं लेते तो क्या होगा? उसने उछलती, कूदती, अपने आपसे बातें करती तोतो-चान की ओर देखा। तोतो-चान को अपनी माँ की दुश्चिंताओं की खबर न थी। जब दोनों की आँखें मिलीं तो उसने उल्लास से कहा, “मैंने अपना दिमाग बदल लिया है। मैं सोचती हूँ कि मैं नुक्कड़-साजिंदों की टोली में शामिल हो जाऊँ, जो नयी दुकानों का प्रचार करते फिरते हैं।”

माँ की आवाज में अब निराशा घिर आयी थी। उसने कहा, “चलो-चलो, देर हो जायेगी। हेडमास्टर जी इंतजार करते होंगे। बातें बंद करो। देखकर, जरा ढंग से चलो।”

उनके सामने कुछ ही दूरी पर अब छोटे से स्कूल का गेट दिखने लगा था।

खिड़की में खड़ी नन्ही लड़की

माँ की चिंता का एक कारण था। तोतो-चान ने अभी हाल में ही स्कूल जाना शुरू किया था। पर उसे पहली कक्षा में ही स्कूल से बाहर निकाल दिया गया था।

अभी सप्ताह भर पहले ही तो सब हुआ था। माँ को तोतो-चान की कक्षा-शिक्षिका ने बुलावा भेजा था। “आपकी बेटी पूरी कक्षा को गड़बड़ा देती है। आपको उसे किसी दूसरे स्कूल में ले जाना होगा।” ठंडी सांस छोड़ते हुए उस सुंदर युवा शिक्षिका ने कहा था, “मैं तो अपनी सहनशक्ति की सीमा पार कर चुकी हूँ।”

माँ घबरा गयी। ऐसा क्या किया होगा तोतो-चान ने जिससे पूरी कक्षा गड़बड़ा जाए? वह हैरान थी।

बौखलाहट में शिक्षिका अपनी पलकें झपकाने लगी। अपने कटे हुए छोटे बालों में उंगलियाँ फिरते हुए उसने समझाया, “पहली बात तो यह है कि वह दिन में सैंकड़ों बार अपनी मेज खोलती है। मैंने बच्चों से कह रखा है कि वे बिना कारण अपनी मेजें न खोलें। लेकिन, आपकी बिटिया बराबर कुछ न कुछ निकालती या रखती रहती है। अपनी कापी निकालती-रखती है। अपनी पेंसिल की डिब्बी, अपनी किताबें, हर चीज जो उसकी मेज में हो। मानिए, हमें अक्षर लिखने हों तो आपकी बिटिया मेज खोलकर कापी निकालती है, फिर धड़ाक से ढक्कन बंद करती है। तब वह फिर मेज खोलती है। इस बार पेंसिल निकालती है, और फिर जल्दी से उसे बंद करती है। तब वह कापी पर ‘अ’ लिखती है। अगर उसने ‘अ’ गंदा या गलत लिखा हो तो वह फिर मेज खोलती है, और इस बार रबड़ निकालती है। फिर ढक्कन बंद करती है। अक्षर मिटाती है। ढक्कन खोलकर रबड़ अंदर रखती है और फिर मेज बंद करती है। यह सब वह बड़ी तेजी से करती है। जब वह ‘अ’ लिख चुकी होती है, तब वह एक-एक कर हर चीज वापस रखती है। पेंसिल वापस रखती है, ढक्कन बंद करती है। फिर खोलती है, कापी वापस रखती है; तब फिर ढक्कन बंद करती है। जब दूसरे अक्षर की बारी आती है तो वह; यह सब फिर दोहराती है। पहले अपनी कापी, फिर पेंसिल, फिर रबड़ निकालती है। हर बार हरेक चीज के लिए वह अपनी मेज खोलती और बंद करती है। मेरा तो दिमाग भन्ना जाता है, लेकिन मैं उसे डांट भी नहीं सकती। उसके पास हर बार खोलने-बंद करने का कारण जो होता है।”

अब शिक्षिका की पलकें तेजी से झपकने लगी थीं। मानो वह मन ही मन पूरा दृश्य फिर से याद कर रही हो।

अचानक माँ को समझ में आ गया कि तोतो-चान क्यों बार-बार अपनी मेज खोलती-बंद करती होगी। पहला दिन स्कूल में बिताकर तोतो-चान उत्साह से भरी घर लौटी थी। उसने ऐलान किया था, “मेरा स्कूल बहुत अच्छा है। पता है, घर में जो मेज है उसका झाँवर खींचना पड़ता है। पर हमारे स्कूल में मेज पर एक ढक्कन है, जिसे उठाना पड़ता है—बिल्कुल एक डिब्बे की तरह। उसमें ढेरों चीजें रखी जा सकती हैं। बड़ा ही मजेदार है।”

माँ अपनी बिटिया को मेज खोलने-बंद करने में मिलने वाले आनंद की कल्पना करने लगी। माँ को यह भी नहीं लगा कि यह कोई भारी भूल या शैतानी हो। मेज का नयापन खत्म होते ही तोतो-चान ऐसा करना बंद भी कर देती। पर शिक्षिका से उसने यह सब नहीं कहा। सिर्फ इतना ही कहा, “मैं उससे इस बारे में बात करूंगी।”

शिक्षिका की आवाज अब कुछ तीखी हो गयी। उसने आगे कहा, “अगर इतना ही होता तो शायद मुझे बुरा न लगता।”

शिक्षिका आगे की ओर झुकी। मां झिझककर पीछे हट गयी। “जब वह अपनी मेज के ढक्कन से शोर नहीं मचा रही होती तब वह खड़ी रहती है। पूरे समय।”

“खड़ी रहती है ? कहाँ ?” मां ने आश्चर्य से पूछा।

“खिड़की में,” शिक्षिका ने नाराज होते हुए कहा।

“खिड़की में क्यों खड़ी रहती है ?” मां ने विस्मय से पूछा।

“ताकि वह सड़क पर गुजरने वाले साजिंदों को बुला सके।” लगभग चीखते हुए शिक्षिका ने बताया।

इसके बाद शिक्षिका ने जो कहानी सुनाई, उसका सार कुछ यों था : पूरे एक घंटे तक अपनी मेज के ढक्कन को उठाने-पटकने के बाद तोत्तो-चान अपनी जगह छोड़ खिड़की के पास जा खड़ी होती और बाहर झांकती रहती। जब शिक्षिका मन ही मन यह सोचने लगती कि भले ही वह खिड़की के पास खड़ी रहे, कम से कम शांत तो रहे। तब अचानक तोत्तो-चान चटकीले कपड़े पहने, सड़क पर से गुजरने वाले साजिंदों को जोर से आवाज लगाती। ऐसा वह इसलिए कर सकती थी क्योंकि उनकी कक्षा निचले तल्ले पर थी और कमरे की खिड़की सड़क की ओर खुलती थी। सड़क और खिड़की के बीच पौधे थे पर उनके पार सड़क चलते किसी भी इंसान से बात करना मुश्किल न था। जब तोत्तो-चान बुलाती तो साजिंदे ठीक खिड़की के पास आ जाते। तब तोत्तो-चान पूरी कक्षा के बच्चों में ऐलान करती, “वे आ गए हैं।” तब सारे के सारे बच्चे अपनी जगह से उठ खिड़की के पास सिमट आते और शोर मचाने लगते।

“कुछ बजाइये,” तोत्तो-चान कहती। और तब साजिंदों की टोली, जो शायद चुपचाप स्कूल के सामने से गुजर जाती, अपनी शहनाई, घंटा, ढोल आदि से बच्चों का मन बहलाने लगती। और ऐसे में शिक्षिका के पास धीरज धर शोर-शराबे के खत्म होने का इंतजार करने के अलावा कोई चारा न रहता।

जब संगीत खत्म होता, साजिंदे चले जाते, तब सारे बच्चे अपनी-अपनी जगह लौट आते—अलावा तोत्तो-चान के। जब अध्यापिका पूछती, “तुम अभी भी खिड़की के पास क्यों खड़ी हो ?” तब तोत्तो-चान बड़ी गंभीरता से जवाब देती, “शायद कोई दूसरी टोली आ जाए। कितना बुरा होगा, अगर वे आएँ और चले जाएँ और हमारी नजर ही उन पर न पड़े।”

“आप सोच सकती हैं कि यह सब कितनी-कितनी बाधाएं पैदा करता है।” शिक्षिका आवेग में भर कर बोल रही थी। मां के मन में शिक्षिका के लिए सहानुभूति जगने ही लगी थी कि वह तीखी आवाज में बोली, “और इसके अलावा...।”

“इसके अलावा और क्या करती है वह ?” अब मां का दिल सच में बैठने

लगा था।

“इसके अलावा ?” शिक्षिका ने जोर से कहा, “अगर मैं यही गिन पाती कि वह क्या-क्या करती है तो मुझे आपसे उसे किसी दूसरे स्कूल में ले जाने को न कहना पड़ता।”

अपने को कुछ संयत करते हुए शिक्षिका ने सीधे मां की ओर देखा, “कल तोत्तो-चान रोज की तरह खिड़की के पास खड़ी थी। मैं अपना पाठ पढ़ाती रही। सोचा कि वह शायद साजिंदों के इंतजार में खड़ी होगी। अचानक आपकी बेटी ने किसी से पूछा, “क्या कर रही हो ?” मैं खुद जहां थी वहां से मुझे कोई दिखा ही नहीं, इसलिए मैं जान नहीं पाई कि आखिर वह किससे बातें कर रही है। उसने फिर अपना प्रश्न दोहराया। मुझे लगा कि वह सड़क पर खड़े किसी व्यक्ति से नहीं, ऊपर किसी से बात कर रही है। मेरी जिज्ञासा बढ़ी। मैं उत्तर सुनने की चेष्टा करने लगी। पर जवाब आया ही नहीं। पर आपकी बेटी बार-बार अपना प्रश्न दोहराती रही, “क्या कर रही हो ?” इतनी बार कि पढ़ाना ही मुश्किल हो गया। मैं यह देखने गयी कि आखिर वह प्रश्न कर किससे रही है। जब खिड़की से सिर निकाल ऊपर की ओर देखा तो पाया कि वहां ओरी पर घोंसला बनाती दो अबाबील चिड़ियां थीं। वह अबाबीलों से बात कर रही थी। मैं बच्चों को समझती हूं। यह भी नहीं कहना चाहती कि अबाबीलों से बात करना बेवकूफी है। पर फिर भी मुझे लगता है कि कक्षा के बीच में अबाबीलों से यह पूछना कि वे क्या कर रही हैं, कतई गैर-जरूरी है।”

माफी मांगने के लिए मां का मुंह खुले, इसके पहले ही शिक्षिका ने आगे कहा, “एक और घटना है—झड़ंग की कक्षा की। मैंने बच्चों से कहा कि वे जापानी झंडा बनाएं। बाकी बच्चों ने सही बनाया, पर आपकी बेटी ने नौसेना का झंडा बनाया। आप जानती हैं ना, वह किरणों वाला झंडा ? मैंने सोचा चलो इसमें भी कोई बुराई नहीं है। पर अचानक वह झंडे के चारों ओर झालर बनाने लगी। वैसी झालर जो युवक दलों के झंडों पर होती है। शायद उसने कहीं वैसा झंडा देखा होगा। मैं कुछ समझूं, उसके पहले ही उसने ऐसी झालर बना डाली कि पूरा कागज उससे भर चुका था। इसलिए जब उसने झालर में भरने के लिए गहरे पीले रंग के क्रेयन-चाक उठाए तो उसने सैकड़ों छोटे-छोटे निशान कागज के बाहर तक बना दिए। मेज इतनी गंदी हो गयी कि रगड़े साफ न हो। बस सौभाग्य यही था कि उसने झालर तीन तरफ ही बनाई।”

“तीन तरफ ही क्यों ?” मां ने कुछ आश्चर्य से पूछा।

शिक्षिका थक चली थी, फिर भी मां पर तरस खाते हुए उसने समझाया, “चौथी ओर उसने डंडा बनाया था, सो झालर झंडे के केवल तीन तरफ ही थी।” मां कुछ आश्चस्त हुई, “मैं समझी, सिर्फ तीन तरफ।”

इस पर शिक्षिका ने बड़े धीरे-धीरे पर शब्दों पर जोर देते हुए कहा, “पर उस डंडे का भी काफी हिस्सा बाहर निकल गया था और अभी तक उसकी मेज पर बना हुआ है।”

इसके बाद शिक्षिका खड़ी हो गयी। बर्फीली आवाज में उसने अपना आखिरी वार किया, “मैं अकेली ही परेशान नहीं हूँ। साथ के कमरे में जो शिक्षिका है, उसे भी परेशानी हुई है।”

अब मां को कुछ करना ही था। दूसरे बच्चों के साथ यह अन्याय था। उसे दूसरा कोई स्कूल खोजना होगा, ऐसा जहाँ उसकी नन्ही को वे समझें, जहाँ उसकी बेटी को वे दूसरे बच्चों के साथ रहना-पढ़ना सिखा सकें।

जिस स्कूल की ओर अब वे जा रही थीं, वह मां को काफी खोजबीन के बाद मिला था।

मां ने तोतो-चान को यह नहीं बताया कि उसे स्कूल से निकाल दिया गया



है। वह जानती थी कि तोतो-चान यह समझ ही नहीं पाएगी कि उसने कोई भूल की है। किसी भी तरह की गांठ वह अपनी बेटी के मन में नहीं बांधना चाहती थी। अतः मां ने निश्चय किया कि जब तक तोतो-चान बड़ी नहीं हो जाती, वह उसे कुछ भी नहीं बताएगी। मां ने उससे इतना भर कहा था, “एक नए स्कूल में जाना तुम्हें कैसा लगेगा ? मैंने सुना है कि वह बड़ा अच्छा स्कूल है।”

“ठीक है।” कुछ सोचने के बाद तोतो-चान ने कहा था। “पर—”

“अब इसके मन में क्या है ?” मां ने सोचा, “कहीं यह समझ तो नहीं गयी है कि इसे स्कूल से निकाल दिया गया है ?” पर क्षण भर में ही तोतो-चान ने उल्लास में भर कर पूछा था, “क्या तुम्हें लगता है कि साजिदे नये स्कूल में भी आयेंगे ?”

नया स्कूल

जब तोतो-चान ने नये स्कूल का गेट देखा तो वह ठिठक गयी। अब तक जिस स्कूल में वह जाती रही थी उसका गेट सीमेंट के दो बड़े खंभों का बना था और गेट पर बड़े-बड़े अक्षरों में स्कूल का नाम लिखा था। पर इस स्कूल का गेट तो पेड़ के दो तनों का था। उन पर टहनियाँ और पत्ते भी थे।

“अरे, यह गेट तो बढ़ रहा है,” तोतो-चान ने कहा। “यह बढ़ता जायेगा, और एक दिन शायद टेलीफोन के खंभे से भी ऊँचा जायेगा।”

गेट के ये दो खंभे असल में पेड़ ही थे, जिनकी जड़ें भी मौजूद थीं। कुछ और पास पहुँचने पर तोतो-चान ने अपनी गर्दन टेढ़ी कर स्कूल का नाम पढ़ना चाहा। टहनी पर टंगी नाम की तख्ती भी हवा से टेढ़ी हो गयी थी।

“तो-मो-ए गा-कु-एन।”

तोतो-चान मां से यह पूछना ही चाहती थी कि तोमोए का मतलब क्या होता है, तभी अचानक उसे एक चीज दिखी और उसे लगा जैसे वह सपना देख रही हो। वह बैठ गयी ताकि झाड़ियों के बीच से अच्छी तरह देख पाए। उसे अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था।

“मां, क्या वह सचमुच की रेलगाड़ी है ? देखो, वहाँ, वहाँ स्कूल के मैदान में।”

स्कूल में कमरों की जगह रेलगाड़ी के छह बेकार डिब्बे काम में लाए जाते थे। तोतो-चान को लगा, ऐसा तो सपनों में ही होता होगा। रेलगाड़ी में स्कूल !

डिब्बों की खिड़कियाँ सूरज की प्रातःकालीन धूप में चमक रही थीं। लेकिन झाड़ियों के बीच से झाँकती गुलाबी गालों वाली एक नन्ही लड़की की आँखें और भी अधिक चमक रही थीं।

“स्कूल मुझे अच्छा लगा !”

क्षण भर बाद ही तोत्तो-चान खुशी से चिल्लाई और रेलगाड़ी के डिब्बे की ओर भागी। भागते-भागते मुड़कर ही मां से कहा, “आओ, जल्दी करो। बिना हिले-डुले खड़ी इस गाड़ी में हम झट से चढ़ जाते हैं।”

मां चौंकी और उसके पीछे दौड़ी। मां भी कभी बास्केटबाल खिलाड़ी रह चुकी थी। इसलिए वह तोत्तो-चान से भी तेज भागी। ठीक डिब्बे के दरवाजे के बाहर उसने तोत्तो-चान की फ्रॉक का सिरा पकड़ लिया।

“तुम अभी अंदर नहीं जा सकती,” मां ने उसे रोकते हुए कहा। “ये कक्षाएं हैं और तुम तो अभी स्कूल में दाखिल तक नहीं हुई हो। अगर सचमुच इस ट्रेन में चढ़ना चाहती हो तो तुम्हें हेडमास्टर जी के सामने कायदे से पेश आना होगा। अब हम उनसे मिलने जायेंगे। अगर सब कुछ ठीक रहा तो तुम इस स्कूल में आ सकोगी। समझी ?”

तोत्तो-चान को तुरंत ‘ट्रेन’ में न चढ़ पाने का दुख तो हुआ, पर उसे लगा कि जैसा मां कहती है वैसा करना ही शायद अच्छा हो।

“ठीक है,” उसने कहा। साथ ही जोड़ा, “यह स्कूल मुझे बहुत अच्छा लगा है।”

मां ने कहना तो चाहा कि प्रश्न यह नहीं है कि तुम्हें स्कूल अच्छा लगता है या नहीं, बल्कि यह है कि हेडमास्टर जी को तुम अच्छी लगती हो या नहीं। पर उसने कुछ कहा नहीं। तोत्तो-चान की फ्रॉक की पकड़ ढीली छोड़ मां ने उसका हाथ थाम लिया। वे हेडमास्टर जी के दफ्तर की ओर बढ़ने लगीं।

रेलगाड़ी के सभी डिब्बों में शांति थी। दिन की पहली कक्षा शुरू हो चुकी थी। स्कूल के चारों ओर दीवार की जगह पेड़ थे। साथ ही, पौधों की क्यारियां थीं जो लाल पीले फूलों से अटी हुई थीं।

हेडमास्टर जी का दफ्तर रेलगाड़ी के डिब्बे में नहीं था। वह दाहिने हाथ की ओर एक मंजिले भवन में था। वहां पहुंचने के लिए सात अर्ध-गोलाकार पत्थर की सीढ़ियां चढ़नी होती थीं।

तोत्तो-चान मां से अपना हाथ छुड़ा भाग कर सीढ़ियां चढ़ने लगी। अचानक वह रुकी और मुड़ी। इतनी अचानक कि मां उससे टकराते-टकराते बची।

“क्या हुआ ?” मां ने पूछा, मन में भय था कि कहीं तोत्तो-चान ने स्कूल के बारे में अपना विचार न बदल लिया हो।

सबसे ऊपरी सीढ़ी पर खड़ी तोत्तो-चान गंभीरता से फुसफुसाई, “जिनसे हम मिलने जा रहे हैं, वे जरूर स्टेशन मास्टर होंगे।”

मां धीरज वाली थी। साथ ही, उसे मजाक करना भी आता था। वह झुकी, अपना चेहरा तोत्तो-चान के चेहरे के पास ले गयी और फुसफुसाई, “क्यों ?”

तोत्तो-चान ने धीरे से कहा, “तुमने कहा था कि वे हेडमास्टर हैं। पर अगर वे इन सारे रेलगाड़ी के डिब्बों के मालिक हैं तो वे स्टेशन मास्टर हुए न !”

मां को मानना पड़ रहा था कि रेलगाड़ी के डिब्बों में स्कूल चलाना कुछ अनूठी बात थी, पर फिलहाल समझाने का समय नहीं था। मां ने सिर्फ इतना ही कहा, “तुम उनसे ही क्यों नहीं पूछ लेती ? पर...तुम अपने डैडी के बारे में क्या सोचती हो ? वे वायलिन बजाते हैं, और उनके पास ढेरों वायलिन हैं। पर इससे अपना घर वायलिन की दुकान तो नहीं बन जाता। नहीं ?”

“हां, दुकान तो नहीं बन जाता अपना घर।” तोत्तो-चान ने मां का हाथ थामते हुए सहमति जताई।

हेडमास्टर जी

जब मां और तोत्तो-चान दफ्तर में घुसीं तो कुर्सी पर बैठे सज्जन उठ खड़े हुए।

उनके सिर पर बाल कम हो चले थे। कुछ दांत भी गायब थे। पर चेहरा उनका स्वस्थ लगता था। बहुत लंबे भी नहीं थे वे सज्जन, पर उनके कंधों व बांहों में मजबूती लगती थी। उन्होंने काले रंग का एक घिसा-पुराना सा धी-पीस सूट पहन रखा था।

जल्दी से झुककर तोत्तो-चान ने नमस्ते की और तब उत्साह से पूछा, “आप स्कूल मास्टर हैं या स्टेशन मास्टर ?”

मां अकुलाई। पर इसके पहले कि वह कुछ सफाई देती, सज्जन हंस पड़े और बोले, “मैं इस स्कूल का हेडमास्टर हूँ।”

तोत्तो-चान की खुशी का ठिकाना न रहा। “मुझे बड़ी खुशी हुई,” उसने कहा, “क्योंकि मैं अब आपसे कुछ मांगना चाहती हूँ। मैं आपके स्कूल में पढ़ना चाहती हूँ।”

हेडमास्टर जी ने तोत्तो-चान को कुर्सी पर बैठने को कहा। फिर मां की ओर मुड़कर वे बोले, “आप घर जा सकती हैं, मैं तोत्तो-चान से बात करना चाहता हूँ।”

तोत्तो-चान को थोड़ी-सी उलझन हुई। पर उसने सोच कर देखा तो लगा कि सामने बैठे सज्जन से बात करना उसे बुरा नहीं लगेगा।

“तो मैं इसे आपके पास छोड़े जा रही हूँ।” मां ने भी बड़ी बहादुरी के साथ कहा और दफ्तर से निकलकर दरवाजा बंद कर दिया।

हेडमास्टर जी ने एक कुर्सी खींची और तोत्तो-चान की कुर्सी के सामने रखी। जब दोनों आमने-सामने बैठ गये तो उन्होंने कहा, “अब तुम मुझे अपने बारे में सब कुछ बताओ। कुछ भी, जो तुम बताना चाहो, बताओ।”

“जो मुझे अच्छा लगे वह बताऊँ ?” तोत्तो-चान ने सोचा था कि वे प्रश्न

करेंगे और उसे उत्तर देने होंगे। पर जब उससे यह कहा गया कि वह किसी भी चीज के बारे में बोल सकती है तो उसे बड़ा अच्छा लगा। वह तुरंत बोलने लगी। उसने जो कुछ कहा, वह था तो काफी गड़मड़ पर वह अपनी पूरी ताकत से बोलती गयी। उसने हेडमास्टर जी को बताया कि जिस ट्रेन पर चढ़कर वे आये थे वह कितनी तेज चली थी; उसने बताया कि उसने टिकट बाबू से कहा था कि वे उससे टिकट न लें पर उन्होंने उसकी बात नहीं मानी; उसने बताया कि उसके दूसरे स्कूल की शिक्षिका कितनी सुंदर है, अबावील का बॉसला कैसा है, उसका भूरा कुत्ता रॉकी कैसे-कैसे करिश्मे दिखा सकता है; उसने बताया कि वह कैची मुंह में डालकर चलाया करती थी, पर उसकी शिक्षिका ने उसे ऐसा करने से मना किया था, क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं तोत्तो-चान की जीभ न कट जाये, पर वह फिर भी वैसा करती रही; उसने बताया कि वह नाक कैसे सिकल लेती है, क्योंकि उसकी बहती नाक अगर मां देख लेती है तो उसे डांट लगाती है; उसने बताया कि पापा कितने अच्छे तैराक हैं, और तो और वे गोता भी लगा सकते हैं। वह लगातार बोलती गई। हेडमास्टर जी कभी हंसते, कभी सिर हिलाते और कहते, “अच्छा फिर ?” तोत्तो-चान इतनी खुश थी कि वह आगे बोलती जाती। बोलते-बोलते आखिर उसके पास बोलने को कुछ भी नहीं बचा। अब उसका मुंह बंद था, पर वह अपने दिमाग पर जोर डाल रही थी। सोच रही थी कि आगे क्या कहे ?

“मुझे और कुछ बताने को तुम्हारे पास क्या कुछ भी नहीं है ?” हेडमास्टर जी ने पूछा।

ऐसे में चुप रहना कितने शर्म की बात है, तोत्तो-चान ने सोचा। कितना अच्छा मौका है। क्या वह किसी भी चीज के बारे में और कुछ भी नहीं बता सकती ? उसने मन ही मन सोचा। अचानक उसे कुछ सूझा।

हां, वह अपनी फ्रॉक के बारे में बतायेगी जो उसने पहन रखी थी। वैसे उसके ज्यादातर कपड़े मां खुद ही सीती थी, पर यह फ्रॉक दुकान से खरीदी हुई थी। जब भी वह दोपहर के बाद स्कूल से घर लौटती थी तो अक्सर उसके कपड़े फटे होते थे। मां को समझ ही न आता कि वे ऐसे कैसे फटे होंगे। उसकी सुंदर सफेद सूती चड़ियां भी कभी-कभी तार-तार हो जाती थीं। उसने हेडमास्टर को बताया कि ऐसा कैसे हो जाता था। असल में उसके कपड़े इसलिए फटते थे क्योंकि वह दूसरों के वगीचों में झाड़ियों के बीच में से घुसती थी। साथ ही, वह खाली जमीन के चारों ओर लगे कंटीले तारों के नीचे से भी घुसती थी। इसलिए आज सुबह जब तैयार होने की वारी आई तो मां की सिली हुई सारी अच्छी फ्रॉकें फटी निकलीं और उसे यह खरीदी हुई फ्रॉक पहननी पड़ी। फ्रॉक पर लाल और सलेटी रंग के चेक बने थे, कपड़ा जर्सी का है। इतनी बुरी भी नहीं है, पर मां को लगता है कि कालर पर कड़े लाल फूल फूहड़ हैं। “मां को कालर पसंद नहीं है,” तोत्तो-चान ने कालर

उठाकर हेडमास्टर जी को दिखाया।

लेकिन इसके बाद खूब सोचने पर भी तोत्तो-चान को कुछ और न सूझा। उसे इस बात से कुछ दुख हुआ। लेकिन तभी हेडमास्टर जी उठ खड़े हुए। उन्होंने अपना प्यार भरा बड़ा सा हाथ उसके सिर पर रखा और कहा, “अब तुम इस स्कूल की छात्रा हो।”

ठीक ये ही शब्द थे उनके। और उस समय तोत्तो-चान को लगा कि वह जीवन में पहली बार किसी ऐसे व्यक्ति से मिली है जो उसे सच में अच्छा लगता हो। असल में इससे पहले किसी ने उसे इतनी देर बोलते नहीं सुना था। और तो और, उसे सुनते समय हेडमास्टर जी ने एक बार भी जम्हाई नहीं ली थी, न ही उनके चेहरे पर अरुचि का भाव आया था। शुरू से अंत तक उन्हें सुनना उतना ही अच्छा लगा था, जितना कि उसे बोलना।

तोत्तो-चान को अभी समय देखना नहीं आता था। फिर भी उसे लगा मानो काफी समय बीत चुका हो। अगर उसे समय देखना आता होता तो उसे जरूर और भी ज्यादा आश्चर्य होता और शायद तब वह हेडमास्टर जी के प्रति कहीं ज्यादा कृतज्ञ होती। क्योंकि, मां और तोत्तो-चान सुबह आठ बजे स्कूल पहुंची थीं, और जब वह बोलना बंद कर चुकी और हेडमास्टर ने उसे बताया कि अब वह इस स्कूल की छात्रा है, तब उन्होंने अपनी जेब से घड़ी निकाली और कहा “अरे, खाना खाने का समय हो गया।” यानी हेडमास्टर जी ने उसका बतियाना पूरे चार घंटे तक सुना होगा।

इस दिन से पहले या उसके बाद किसी वयस्क ने तोत्तो-चान की बात इतने लंबे समय तक नहीं सुनी। और सच तो यह है कि उसकी मां, और पिछली शिक्षिका को यह जानकर भी आश्चर्य होता कि एक सात साल की लड़की लगातार चार घंटे बोलने का मसाला भी जुटा सकती है।

उस वक्त तोत्तो-चान को यह तो पता था ही नहीं कि उसे स्कूल से निकाल दिया गया है और किसी को यह समझ नहीं आ रहा कि उसका किया क्या जाए। उसकी स्वाभाविक खुशमिजाजी और भुलक्कड़पन के कारण वह भोली-भाली लगती थी। पर अंदर ही अंदर उसे यह तो लगता ही था कि उसे दूसरे बच्चों से कुछ अलग समझा जाता है, शायद कुछ अजीब भी। पर हेडमास्टर जी के सामने वह अपने आपको सुरक्षित महसूस कर रही थी। वह बहुत खुश थी। वह हमेशा-हमेशा के लिए उनके ही साथ रहना चाहती थी।

ये भावनाएं थीं तोत्तो-चान की उस पहले दिन हेडमास्टर सोसाकु कोबावाशी के बारे में। सौभाग्य से हेडमास्टर जी की भावनाएं भी उसके प्रति ठीक ऐसी ही थीं।

दोपहर का भोजन

अब हेडमास्टर जी तोत्तो-चान को वह जगह दिखाने ले गये जहां बच्चे दोपहर का खाना खाते थे। “हम ट्रेन में नहीं खाते,” उन्होंने समझाया, “बल्कि सभागार में खाते हैं।” सभागार उन सीढ़ियों के ऊपर था जिन्हें चढ़कर तोत्तो-चान पहले आई थी। जब वे वहां पहुंचे तो बच्चे हल्ला करते हुए मेज व कुर्सियां उठा-खिसका कर उन्हें एक गोल घेरे में लगा रहे थे। वे सभागार के कोने में खड़े बच्चों को देखते रहे। तोत्तो-चान ने हेडमास्टर जी के जैकेट का किनारा खींचा और पूछा, “बाकी बच्चे कहाँ हैं?”

“बस इतने ही हैं, जितने यहां मौजूद हैं।” उन्होंने उत्तर दिया।

“बस इतने ही?” तोत्तो-चान को विश्वास नहीं हुआ। उसके पिछले स्कूल की एक कक्षा में जितने बच्चे थे, केवल उतने बच्चे मौजूद थे।

“आपका मतलब है कि पूरे स्कूल में करीब पचास ही बच्चे हैं?”

“हां, बस इतने ही।” हेडमास्टर जी ने कहा।

यहां पहले वाले स्कूल से हर चीज अलग हैं, तोत्तो-चान सोचने लगी।

जब सारे बच्चे बैठ गये तो हेडमास्टर जी ने जानना चाहा कि हरेक बच्चा खाने में कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से लाया है या नहीं।

“हां जी।” बच्चों ने अपने-अपने डिब्बे खोलते हुए एक स्वर में कहा।

“जरा देखें तो क्या-क्या लाए हो तुम लोग,” हेडमास्टर जी ने मेजों के घेरे में घूमते हुए कहा। वे हरेक बच्चे के डिब्बे में झांक रहे थे, और बच्चे खुशी से किलकारियां मार रहे थे।

“वाह, क्या मजा है,” तोत्तो-चान ने सोचा। “पर ‘कुछ समुद्र से और पहाड़ से’ का क्या मतलब होगा।” कितना अलग है यह स्कूल। पर है अच्छा। उसे तो इससे पहले पता ही न था कि स्कूल में दोपहर का खाना भी इतने आनंद की बात हो सकती थी। इस विचार ने कि कल वह भी इन मेजों में से एक पर बैठी होगी और अपना डिब्बा खोल हेडमास्टर जी को ‘कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से’ दिखा रही होगी, उसे खुशी से भर दिया। उसका मन वहीं खड़े-खड़े खुशी से कूदने की होने लगा।

हेडमास्टर जी हर मेज पर रुक कर डिब्बों में झांक रहे थे और दोपहर को हल्की धूप उनके कंधों को नहला रही थी।

तोत्तो-चान का स्कूल जाना

हेडमास्टर के यह कहने के बाद से ही कि ‘अब तुम इस स्कूल की छात्रा हो’

तोत्तो-चान बेसब्री से अगले दिन का इंतजार कर रही थी। इस उत्साह से उसने कभी किसी दिन का इंतजार नहीं किया था। अकसर मां को उसे सुबह स्कूल के लिए बिस्तर छुड़वाने में भी परेशानी होती थी। पर उस दिन वह दूसरों से पहले उठ कर तैयार हो गयी और अपना बस्ता पीठ पर बांधे इंतजार करने लगी।

घर भर में समय का सबसे पाबंद था रॉकी। वह जर्मन शेफर्ड कुत्ता था। रॉकी तोत्तो-चान के इस अजीब व्यवहार को शंका भरी नजरों से देखता रहा। एक लंबी अंगड़ाई लेने के बाद वह तोत्तो-चान के पास सरक कर बैठ गया, और कुछ घटने की अपेक्षा करने लगा।

मां को तो बहुत कुछ करना था। तोत्तो-चान को नाश्ता देकर वह उसका लंच-बाक्स बनाने में जुट गयी। उसमें ‘कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से’ भी तो डालना था। मां ने रेलगाड़ी के पास को एक प्लास्टिक की थैली में डाला और एक डोरी से उसे तोत्तो-चान के गले में लटका दिया ताकि वह खो न जाए।

“अच्छी लड़की बनना,” पापा के बाल अस्त-व्यस्त थे।

“बिल्कुल,” तोत्तो-चान ने जूते पहने और सामने का दरवाजा खोला। तब वह मुड़ी और शिष्टता से झुककर कहा, “अच्छा, गुड-बाय।”

तोत्तो-चान को यों निकलते देख मां की आंखें बरबस भर आईं। कितना कठिन था यह मानना कि उसकी चुलबुली बिटिया, जो इतनी खुशी से स्कूल जा रही थी, हाल ही में एक स्कूल से निकाली जा चुकी है। उसने दिल से प्रार्थना की—इस बार सब शुभ हो।

पर अगले ही क्षण तोत्तो-चान को अपने गले में लटके रेल-पास को निकालते और रॉकी के गले में लटकाते देख वह चौंकी। “हे ईश्वर!” उसने मन में कहा, पर मुंह से कुछ न बोली। रुक कर देखने लगी कि आगे क्या होता है।

तोत्तो-चान रॉकी के गले में रेल-पास की डोरी डाल उसके सामने ही बैठ गयी और तब उससे बोली, “देखा तुमने? यह पास तुम्हें पूरा नहीं आता।”

डोरी लंबी थी और पास जमीन पर लोट रहा था।

“समझे? यह पास मेरा है, तुम्हारा नहीं। तुम इसे लेकर ट्रेन में नहीं चढ़ पाओगे। मगर मैं फिर भी हेडमास्टर जी और स्टेशन वाले आदमी से पूछूंगी। देखें, वे तुम्हें मेरे साथ स्कूल आने देते हैं या नहीं।”

रॉकी ने पहले तो कान खड़े कर बात सुनी, पर पास को दो एक बार चाट लेने के बाद उसने जम्हाई ली। तोत्तो-चान आगे बोलती रही, “जो ट्रेन का डिब्बा है वह तो रुका ही रहता है। मुझे नहीं लगता कि उसमें बैठने का टिकट लगता होगा। पर आज तो तुम्हें यहीं घर पर मेरा इंतजार करना होगा।”

रॉकी हमेशा तोत्तो-चान को पिछले स्कूल के दरवाजे तक पहुंचाने जाता और वहां से लौट आता था। स्वाभाविक था कि वह आज भी यही करना चाहता था।

तोतो-चान ने रॉकी की गर्दन से डोरी निकाली और बड़ी सावधानी से रेल-पास अपने गले में लटका लिया। तब एक बार फिर मां और डैडी से कहा, “गुड-बाय !”

इसके बाद वह बिना पीछे देखे भागी। उसका बस्ता दौड़ने से उसकी पीठ पर उछल रहा था। रॉकी भी खुश हो उसके साथ हो लिया।

स्टेशन का रास्ता भी प्रायः वही था जो पिछले स्कूल का था। इसलिए तोतो-चान को राह में अपने परिचित कुत्ते, बिल्लियां और पिछली कक्षा के साथी मिले।

क्या वह अपना रेल-पास दिखाकर कुछ शेखी बघारे ? तोतो-चान ने सोचा। पर वह देर नहीं करना चाहती थी। आज नहीं, फिर कभी—यह निर्णय कर वह तेजी से आगे बढ़ी।

जब तोतो-चान स्टेशन के पास पहले की तरह बाएं न मुड़कर दाएं मुड़ी तो बेचारा रॉकी ठिठका और इधर-उधर झांकने लगा। तोतो-चान तब तक टिकट गेट तक पहुंच चुकी थी। वह लौटकर रॉकी के पास आई जो आश्चर्य से भरा खड़ा था।

“मुझे पिछले स्कूल में अब नहीं जाना है। मैं अब नए स्कूल में जाऊंगी।”

तोतो-चान ने अपना चेहरा रॉकी के चेहरे से सटा लिया। उसके कानों से एक खास तरह की बास आती थी। पर तोतो-चान को वह बास अच्छी लगती थी।

“बाय-बाय,” उसने रॉकी से कहा और टिकट बाबू को अपना पास दिखाते हुए स्टेशन की ऊंची सीढ़ियां चढ़ने लगी। रॉकी कुछ देर कुंमुनाता रहा और तब तक तोतो-चान की ओर ताकता रहा जब तक कि वह आंखों से ओझल नहीं हो गयी।

ट्रेन वाली कक्षा

जब तोतो-चान रेलगाड़ी के डिब्बों तक पहुंची तब तक कोई और नहीं आया था। हेडमास्टर जी उसे वह डिब्बा बता चुके थे जिसमें उसे बैठना था। डिब्बा पुराने किस्म का था, जिसके दरवाजे पर अब भी बाहर की ओर एक हैंडल लगा था, जिसे नीचे घुमाकर दरवाजे को दाईं ओर सरकाना पड़ता था। जब तोतो-चान ने अंदर झांककर देखा तो उसका दिल तेजी से धड़क रहा था।

“वाह—!”

यहां पढ़ना तो ऐसा लगेगा मानो लगातार यात्रा ही कर रहे हों। खिड़कियों के ऊपर सामान रखने के रैक अभी भी मौजूद थे। अंतर वस इतना भर था कि डिब्बे में ठीक सामने की ओर एक ब्लैक-बोर्ड टंगा था, और लंबी सीटों की जगह

ब्लैक-बोर्ड की ओर मुंह किए डेस्क-कुर्सियां रखी हुई थीं। हाथ से पकड़ने वाले स्ट्रेप हटा दिये गए थे, पर बाकी सब वैसा ही था। तोतो-चान अंदर घुसी और किसी की सीट पर बैठ गयी। लकड़ी की बनी कुर्सियां वैसी ही थीं जैसी कि पहले स्कूल में थीं, पर कुछ आरामदेह लगती थीं। उसे लगा वह सारा दिन उन पर बैठी रह सकती थी। तोतो-चान अब बहुत खुश थी। उसे स्कूल इतना पसंद आया था कि उसने हर रोज स्कूल आने का निर्णय किया। वह कभी छुट्टी नहीं करेगी ?

तोतो-चान खिड़की से बाहर झांकने लगी। उसे यह तो पता था कि ट्रेन स्थिर है, पर न जाने क्यों उसे लगा कि वह चल रही है। शायद इसलिए कि बाहर मैदानों में फूल-पेड़ हवा से धीमे-धीमे हिल रहे थे।

“मैं बहुत खुश हूँ,” अंत में उसने जोर से कहा। तब उसने अपना चेहरा खिड़की से सटा लिया और एक गीत बनाया, जैसा वह खुश होने पर अक्सर बनाया करती थी :

मैं कितनी खुश हूँ,
खुश हूँ मैं कितनी !
मैं क्यों खुश हूँ ?
क्योंकि—

उसी क्षण कोई अंदर चढ़ा। एक लड़की थी। उसने अपनी कापी और पेंसिल की डिब्बी बस्ते में से निकाली और मेज पर रख दीं। फिर पंजों के बल खड़े होकर अपना बस्ता रैक पर रख दिया। उसने अपने जूतों का झोला भी वहीं रख दिया। तोतो-चान ने गीत गाना बंद किया और जैसा-जैसा उस लड़की ने किया था, झटपट वह भी करने लगी। अब एक लड़का अंदर चढ़ा। उसने दरवाजे पर ही रुक कर अपना बस्ता रैक की ओर फेंका, मानो वह बास्केट बाल खेल रहा हो। बस्ता उछलकर नीचे गिर गया। “गलत निशाना।” उसने एक बार फिर उसी जगह से निशाना साधा। इस बार बस्ता रैक पर जा टिका। “सही निशाना,” लड़का जोर से बोला और तब “नहीं, गलत निशाना” कहते हुए हड़बड़ाता-सा अपनी मेज पर आ बैठा। बस्ता खोल कर अपनी कापी और पेंसिल की डिब्बी निकालने लगा। पहली बार निशाना गलत लगने की वजह से दूसरी बार का प्रयास भी मानो बेमानी हो चुका हो।

धीरे-धीरे उस डिब्बे में नौ छात्र-छात्राएं आ बैठे। यह थी तोमोए गाकुएन की पहली कक्षा।

वे सब एक ही ट्रेन में साथ-साथ यात्रा करने वाले थे।

तोमोए में पठन-पाठन

रेल के पुराने डिब्बों में चलते स्कूल में जाना तो अपने आप में असामान्य बात थी ही, कक्षाओं में बैठने की व्यवस्था भी अनूठी लगी। पिछले स्कूल में बच्चों के बैठने के स्थान निश्चित थे पर यहां बच्चे जहां भी उनकी इच्छा हो बैठ सकते थे।

काफी सोचने और ध्यान से सब कुछ देखने के बाद तोत्तो-चान ने तय किया कि वह उस लड़की के पास बैठेगी जो तुरंत उसके बाद डिब्बे में चढ़ी थी। वह इसलिए कि उस लड़की ने ऐसी फ्रॉक पहन रखी थी, जिस पर लंबे कानों वाला एक खरगोश कड़ा हुआ था।

लेकिन स्कूल की जो सबसे अनूठी बात थी, वे थे वहां के पाठ।

दूसरे स्कूलों में हर विषय की घंटियां निश्चित होती थीं। जैसे पहली घंटी अगर जापानी की हो, तो उसमें जापानी ही पढ़नी होती थी। फिर दूसरी घंटी अगर गणित की हो तो सब बच्चों को वही करना होता था, पर यहां सब कुछ अलग था। पहली घंटी शुरू होते ही शिक्षिका दिन भर में जिन विषयों को पढ़ना होता था या जिन प्रश्नों के उत्तर लिखने होते थे उनकी सूची बना देती थी और तब बच्चों से कहती, “अब तुम्हें जहां से शुरू करना हो करो।”

इसलिए जापानी या गणित या किसी दूसरे विषय से शुरू किया जा सकता था। जिसे लेख लिखना पसंद हो, वह लेख लिखता था, जबकि ठीक उसके पीछे बैठा बच्चा जिसकी भौतिकी में रुचि हो किसी फ्लास्क में, लैंप की लौ पर कुछ उबालता मिल सकता था। इसलिए किसी भी कक्षा में कभी भी छोटा-मोटा कोई धमाका हो सकता था।

पढ़ने-पढ़ाने की इस पद्धति से शिक्षक हर छात्र पर नजर रख सकते थे; उनकी रुचियों, उनके विचारों, उनके चरित्र से बखूबी परिचित हो सकते थे। अपने छात्र-छात्राओं को गहराई से पहचानने का यह आदर्श तरीका था।

विद्यार्थी, अपने चहेते विषय से दिन शुरू कर सकते थे, और जो विषय अच्छे न लगते हों उनसे जूझने के लिए उनके पास सारा दिन था। यानी वे अपना काम किसी न किसी तरह पूरा कर ही डालते थे। इस प्रकार, पढ़ना तो वहां अधिकतर अपने आप पड़ता था, पर जब कभी विद्यार्थी चाहते तो वे शिक्षकों से सलाह ले सकते थे। शिक्षक भी कभी-कभी उनके पास स्वयं चले जाते। किसी भी समस्या को धैर्य से तब तक समझाते जब तक वह बच्चों को पूरी तरह समझ न आ जाती। तब वे बच्चों को अपने आप करने के लिए कुछ अभ्यास भी देते। यह थी सार्थक पढ़ाई। और इसका मतलब होता था कि जब शिक्षक कुछ समझाए तो किसी भी कक्षा में कोई भी बच्चा खोया सा न बैठा रहे।

पहली कक्षा के बच्चे उस स्तर तक नहीं पहुंचे थे कि उन्हें स्वतंत्र पढ़ाई करने

दी जाए। लेकिन उन्हें भी किसी भी विषय से प्रारंभ करने की छूट थी।

कुछ बच्चे वर्णमाला लिखने लगे, कुछ चित्र बनाने लगे, कुछ किताबें पढ़ने लगे, और कुछ कक्षा में ही व्यायाम तक करने लगे। तोत्तो-चान के पास जो लड़की बैठी थी उसे पूरी वर्णमाला आती थी, वह उसे अपनी कापी में लिख रही थी। यह सब इतना बड़ा अजूबा था कि तोत्तो-चान घबराहट में समझ ही न पा रही थी कि वह क्या करे।

ठीक उसी समय उसके पीछे बैठा हुआ लड़का उठा और शिक्षिका से कुछ पूछने ब्लैक-बोर्ड की ओर बढ़ने लगा। शिक्षिका ब्लैक-बोर्ड के पास एक डेस्क पर बैठी एक बच्चे को कुछ समझा रही थी। तोत्तो-चान ने इधर-उधर ताकना बंद किया, अपनी हथेलियों पर ठुड़ी रखी, और जाते हुए लड़के की पीठ पर निगाहें जमा दीं। लड़का पैर घसीट कर जब चल रहा था तो उसका पूरा शरीर डगमगाता लगता था। पहले तो तोत्तो-चान ने सोचा कि वह जान-बूझकर ऐसा कर रहा है, पर थोड़ी ही देर में वह समझ गयी कि लड़का ठीक से नहीं चल पाता है।

तोत्तो-चान उसे तब तक घूरती रही जब तक वह अपनी जगह पर लौट न आया। उनकी आंखें मिलीं। लड़का मुस्कराया। तोत्तो-चान भी हड़बड़ा कर मुस्कराई। जब वह अपनी जगह पर बैठा तो उसे बैठने में भी काफी समय लगा। वह मुड़ी और उसने पूछा, “तुम ऐसे क्यों चलते हो?”

उसने धीमी और कोमल आवाज में उत्तर दिया, “मुझे पोलियो हुआ था।”

“पोलियो?” तोत्तो-चान ने दोहराया। उसने यह शब्द पहले सुना ही न था।

“हां, पोलियो,” वह फुसफुसाया, “सिर्फ मेरी टांग नहीं, हाथ भी खराब है।”

उसने अपना बायां हाथ आगे फैलाया। तोत्तो-चान ने देखा कि उसकी लंबी-लंबी उंगलियां मुड़ी हुई और एक दूसरे से चिपकी हुई लगती थीं।

“क्या इसे वे लोग ठीक नहीं कर सकते?” तोत्तो-चान ने चिंतित होकर पूछा। उसने उत्तर नहीं दिया। अब तोत्तो-चान को अपनी उत्सुकता पर शर्म आने लगी। उसे लगा, उसे यह नहीं पूछना चाहिए था। तब उस लड़के ने उमंग से भर कर कहा, “मेरा नाम यासुकी यामामोतो है। तुम्हारा क्या है?”

लड़के की प्रफुल्ल आवाज सुन वह खुश हो गयी और बोली, “मैं हूं तोत्तो-चान।”

और इस तरह यासुकी यामामोतो और तोत्तो-चान दोस्त बने।

धूप के कारण डिब्बे में काफी गर्मी हो गयी थी। तभी किसी ने खिड़की खोल दी। वसंत की ताजी हवा डिब्बे में घुस आई और बच्चों के बालों को बेतरतीबी से बिखेर दिया।

यों शुरू हुआ तोमोए में तोत्तो-चान का पहला दिन।

समुद्री खाना-पहाड़ी खाना

और तब आया 'कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से' खाने का समय, जिसका तोतो-चान को बेसब्री से इंतजार था।

हेडमास्टर जी ने यह जुमला संतुलित आहार के लिए बनाया था। वे चाहते थे कि बच्चे चावल के साथ दूसरा कुछ भी खाएं। "अपने बच्चों को सब कुछ खाना सिखाइए" या "बच्चों को पोष्टिक भोजन दिया कीजिए" कहने के बजाय हेडमास्टर जी माता-पिता से डिब्बों में 'कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से' साथ रखने को कह कर रहे थे।

'कुछ समुद्र से' का मतलब था जल-आहार—यानी मछली या कंकड़े। या कुछ भी और। और 'कुछ पहाड़ से' का मतलब जमीन पर मिलने या उगने वाली चीजें अर्थात् थल आहार से था—जैसे सब्जियां, मांस या मुर्गा।

मां इससे बड़ी प्रभावित थी। वह मानने लगी थी कि शायद ही कोई दूसरा हेडमास्टर होगा जो इतने महत्वपूर्ण सिद्धांत को ऐसे आसान जुमले में बांध सके। यह बात भी अजीब थी कि केवल दो ही श्रेणियों में से चुनना बच्चों के लिए डिब्बा तैयार करने के काम को भी आसान बना देता था। हेडमास्टर जी का तो यह भी कहना था कि इस शर्त को पूरा करने के लिए किसी लम्बे-चौड़े खर्च की आवश्यकता भी न थी। थल आहार केवल उबला हुआ कंद हो सकता था या एक आमलेट ही और जल आहार सूखी बोनितो की पत्तियां। या यों भी कह सकते हैं कि थल आहार आलूचे का मुरब्बा हो सकता था और जल आहार नोरी जैसा समुद्री खरपतवार भी हो सकता था।

कल की तरह, जब तोतो-चान ललचाई नजरों से देख रही थी, आज भी हेडमास्टर जी आए और सबके डिब्बों को देखने लगे।

"तुम कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से लाए हो या नहीं?" उन्होंने सबका खाना देखते हुए पूछा। हर बच्चा अपने डिब्बे में क्या लाया है, यह जानने में सबको बड़ा मजा आता था।

कामों में उलझी कोई मां कभी-कभी डिब्बे में केवल 'कुछ समुद्र से' या केवल 'कुछ पहाड़ से' ही रख पाती। पर इससे भी कोई फर्क नहीं पड़ता था। हेडमास्टर जी जब चक्कर लगाते तो उस समय उनकी पत्नी एक सफेद एप्रेन पहने दोनों हाथों में एक-एक भगोना थामे साथ चलतीं। अगर हेडमास्टर जी किसी बच्चे के सामने रुककर 'समुद्र' कहते तो वे मछली के कुछ उबले टुकड़े 'समुद्र' वाले भगोने में से डाल देतीं। 'पहाड़' कहने पर सोया के शोरबे में उबले हुए आलू के टुकड़े 'पहाड़' वाले भगोने में से परोसतीं।

सपने में भी कोई यह कहने की नहीं सोच सकता था कि "मुझे मछली अच्छी

नहीं लगती।" बस, वे सिर्फ इतना भर ही सोच पाते कौन बढ़िया खाना लाया है, या कौन बढ़िया खाना नहीं लाया। बच्चों को इतनी ही चिंता रहती कि वे समुद्र और पहाड़ की शर्त पूरी कर पाते हैं या नहीं। जिस दिन वे कर पाते उनके उल्लास का ठिकाना न रहता।

तोतो-चान को अब यह समझ में आने लगा था कि 'कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से' का मतलब आखिर है क्या। और तब उसे शंका होने लगी कि सुबह हड़बड़ी में मां ने जो कुछ भी बनाया था, वह ठीक होगा भी या नहीं। पर जब उसने अपना डिब्बा खोला तो अंदर इतना बढ़िया खाना था कि उसे अपने आपको जोर से "वाह, वाह" कहने से रोकना पड़ा।



तोत्तो-चान के खाने में चमकीले पीले रंग के अंडे, हरे मटर, भूरे डेन्बू और गुलाबी मछली शामिल थे। यह इतना रंग-बिरंगा था कि फूलों वाले बगीचे की तरह लगता था।

“वाह ! कितना सुंदर !” हेडमास्टर ने कहा।

तोत्तो-चान गद्गद हो गयी, “मां अच्छा खाना पकाती है।” उसने हेडमास्टर जी को बताया।

“सच में ?” तब उन्होंने डेन्बू की ओर इशारा करते हुए पूछा, “बताओ तो यह क्या है ? समुद्र से है या पहाड़ से ?”

तोत्तो-चान सोच में पड़ गयी और उसे देखने लगी। लगता तो था मिट्टी के रंग का, पर बात के सही होने का विश्वास नहीं था।

“मुझे पता नहीं।” उसने कहा।

तब हेडमास्टर जी ने पूरे स्कूल को संबोधित हो पूछा, “डेन्बू समुद्र से आता है या पहाड़ से ?” पल भर सोचने के बाद कोई चिल्लाया “पहाड़ से,” पर तभी कुछ दूसरे चीखे “समुद्र से”। सही-सही कोई भी नहीं जानता था।

“अच्छा तो मैं बताता हूँ,” हेडमास्टर जी बोले। “डेन्बू आता है समुद्र से।”

“क्यों ?” एक मोटे से लड़के ने पूछा।

मेजों के घेरे के बीच खड़े हेडमास्टर जी ने समझाया, “डेन्बू बनता है पकी हुई मछली के कांटों पर रह गए मांस की खुरचन से। उसे सेंका जाता है, उसके टुकड़े किये जाते हैं, तब उसे सुखाते हैं और मसाले डाले जाते हैं।”

“ओह !” बच्चे प्रभावित हुए। इतने में ही किसी ने जानना चाहा कि क्या वे तोत्तो-चान का डेन्बू देख सकते हैं ?

“जरूर,” हेडमास्टर जी ने कहा। और आनन-फानन में सारे बच्चे तोत्तो-चान का डेन्बू देखने घिर आए। उनमें ऐसे भी बच्चे थे जो यह तो जानते थे कि डेन्बू क्या होता है पर उनकी उत्सुकता जग चुकी थी। ऐसे भी बच्चे थे जो सिर्फ यह देखना चाहते थे कि तोत्तो-चान का डेन्बू उनके घर बनने वाले डेन्बू से अलग है या नहीं। इतने बच्चों ने तोत्तो-चान का डेन्बू सूंघा कि उसे डर लगने लगा कि वह उड़ ही न जाए।

तोत्तो-चान पहले ही दिन खाने के समय थोड़ी घबराई हुई थी। लेकिन मजा आ गया था। यह जानना रोमांचक था कि समुद्री आहार क्या होता है और धरती का आकार क्या होता है। वह यह भी जान गयी कि डेन्बू मछली से बनता है, तथा मां कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से भेजना नहीं भूली थी। खैर...सब ठीक ही रहा, उसने संतुष्ट होकर सोचा। दूसरी बात, जिसने तोत्तो-चान को खुश कर दिया, वह थी भोजन का स्वादिष्ट होना।

“ठीक से चबाओ !”

आम तौर पर भोजन करने से पहले कहा जाता है ‘इतादाकिमासु’ (मैं साभार खाता/खाती हूँ), पर तोमोए में एक और अंतर यह था कि पहले सब मिलकर एक गीत गाते थे। हेडमास्टर जी एक संगीतज्ञ थे और उन्होंने एक खास ‘भोजन के पहले का गीत’ बनाया था। दरअसल, उन्होंने कुछ शब्द लिखे और उन्हें ‘रो, रो, रो योर बोट’ की लोकप्रिय धुन दे डाली। हेडमास्टर जी का लिखा गीत कुछ यों था :

चबाओ, चबाओ, ठीक से चबाओ,
जो कुछ भी तुम खाओ;
चबाओ, चबाओ, ठीक से चबाओ,
चावल, मछली, मांस !

जब तक बच्चे यह गीत न गा लेते वे ‘इतादाकिमासु’ नहीं कहते थे।

ये शब्द ‘रो, रो, रो योर बोट’ की तर्ज पर इतने सही बैठते थे कि कई छात्र, सालों बाद भी यही मानते रहे कि यह सच में भोजन-पूर्व का गीत है।

संभव है कि हेडमास्टर जी ने यह गीत इसलिए बनाया हो क्योंकि उनके कुछ दांत टूट चुके थे। बहरहाल, वे बच्चों को हमेशा यही सलाह देते कि वे धीरे खाएं, भोजन में समय लगाएं, और भोजन करते समय बातचीत का आनंद भी लें। अतः, संभव है कि गीत उन्होंने बच्चों को यह याद दिलाने भर के लिए बनाया हो।

जब बच्चे बुलंद आवाजों में यह गीत गा चुकते, वे ‘इतादाकिमासु’ कहते और तब ‘कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से’ खाने बैठते।

कुछ समय के लिए सभागार में मौन छा जाता।

सैर

खाना खा चुकने के बाद दूसरे बच्चों के साथ तोत्तो-चान कुछ देर मैदान में खेलती रही। इसके बाद वह भी अपनी कक्षा में लौट आयी, जहां शिक्षिका उनकी राह देख रही थी।

“बच्चो, तुम लोगों ने सुबह मन लगाकर अपना काम किया है,” शिक्षिका ने कहा, “अब दोपहर बाद क्या करना चाहोगे तुम लोग ?”

इसके पहले कि तोत्तो-चान यह सोच भी पाती कि वह क्या करना चाहती है, बाकी बच्चे एक साथ बोले, “सैर करेंगे।”

“यही सही,” शिक्षिका ने कहा और बच्चे तुरंत बाहर की ओर दौड़े।

तोत्तो-चान डैडी और रॉकी के साथ तो सैर करने जाती थी, पर स्कूल से भी सैर करने जाते हैं, इस विचार से वह अपरिचित थी। उसे अचंभा हुआ। सैर करना उसे बेहद पसंद था, इसलिए वह बेसब्र भी होने लगी।

यह तो उसे बाद में पता चला कि अगर बच्चे सुबह-सुबह पूरी लगन से शिक्षिका की बनाई सूची का सारा काम पूरा कर लेते थे तो उन्हें अक्सर दोपहर को सैर करने की अनुमति मिल जाती थी। और यह नियम सब पर लागू होता था, चाहे वे पहली कक्षा के बच्चे हों या छठी के।

वे सब स्कूल के दरवाजे से बाहर निकल आए—नौ के नौ बच्चे और उनके बीचों-बीच उनकी शिक्षिका। वे एक नहर के किनारे-किनारे चलने लगे। नहर के दोनों किनारों पर चेरी के पेड़ थे, जो हाल ही में फूलों से लदे थे। और उनके पार थे खेत, पीली सरसों से अटे हुए। दूर, जहां तक नजर दौड़ती हर तरफ पीले खेत ही खेत दिखते थे। नहर वर्षों पहले अदृश्य हो गयी थी। अब वह स्थान आवासीय भवनों और बाजार से अटा पड़ा है। लेकिन उन दिनों जियुगाओका के अधिकांश क्षेत्र में खेत ही खेत थे।

“हम कुहोन्बुत्सु मंदिर तक जायेंगे,” जिस लड़की की फ्रॉक पर खरगोश था उसने कहा। उसका नाम था साक्को-चान।

“पता है, पिछली बार हमने तालाब के पास एक सांप देखा था।” साक्को-चान ने कहा। “मंदिर में एक पुराना कुआं है। लोग कहते हैं, उसमें एक तारा टूटकर आ गिरा था।”

चलते-चलते बच्चे पता नहीं क्या-क्या बातें कर रहे थे। आकाश का रंग उस समय गहरा नीला था और हवा में तितलियां पंख फड़फड़ा रही थीं।

जब बच्चे लगभग दस मिनट चल चुके तो शिक्षिका रुकी। कुछ खिले हुए पीले फूलों की तरफ इशारा करते हुए वे बोलीं, “जरा इन सरसों के फूलों को तो देखो। क्या तुम्हें पता है कि ये फूल भला खिलते कैसे हैं ?”

तब वे फूलों के स्त्री-केसर (पिस्टिल) और पुंकेसर (स्टामेन) के बारे में बताने लगीं। बच्चे उन्हें घेर कर बैठ गए। शिक्षिका ने बताया कि तितलियां फूलों की खिलने में मदद करती हैं, और सच में सभी तितलियां फूलों की सहायता करने में बेहद व्यस्त दिख रही थीं।

तब शिक्षिका आगे बढ़ीं। बच्चों ने फूल देखना बंद किया और उठने लगे। इतने में किसी ने पूछा, “ये पिस्तौल की तरह तो नहीं दिखते, क्यों ?”

तोत्तो-चान को भी नहीं लगा कि पिस्तौल जैसा कुछ भी फूल में हो। पर वह दूसरों की तरह इतना जरूर समझ गयी कि स्त्री-केसर (पिस्टिल) और पुंकेसर महत्वपूर्ण चीजें हैं।

दस मिनट और चलने पर वे एक बाग के पास पहुंचे। यह घना बाग

कुहोन्बुत्सु के मंदिर के चारों ओर था। अंदर पहुंचते ही बच्चे इधर-उधर छितरा गए।

“तारे वाला कुआं देखोगी ?” साक्को-चान ने पूछा। तोत्तो-चान तुरंत मान गयी और उसके पीछे-पीछे भागी।

कुआं पत्थरों का बना था। उसकी ऊंचाई बच्चों की छाती तक थी। ऊपर था लकड़ी का ढक्कन। ढक्कन उठाकर वे नीचे झांकने लगीं। तोत्तो-चान को अंदर जो दिखा वह तो कंक्रीट के ढेर या एक बड़ी-सी चट्टान जैसा कुछ था—चमचमाते-टिमटिमाते तारे की जो कल्पना उसने मन में की थी, उससे बिल्कुल ही भिन्न। काफी देर तक अंदर झांकने के बाद उसने पूछा, “क्या तुमने तारे को देखा है ?”

साक्को-चान ने गर्दन हिलाते हुए कहा, “ना, कभी नहीं।”

तोत्तो-चान सोच में पड़ गयी। यह तारा भला चमकता क्यों नहीं। कुछ देर सोचने के बाद उसने कहा “शायद सो रहा है।”

साक्को-चान की बड़ी-बड़ी आंखें कुछ और फैलीं और उसने पूछा, “क्या तारे सोते हैं ?”

“मुझे लगता है कि वे दिन भर सोते होंगे ताकि रात भर जाग कर चमक सकें।” तोत्तो-चान ने बड़ी चतुराई से उत्तर दिया, क्योंकि सही बात का पता उसे भी नहीं था।

अब सारे बच्चे एक स्थान पर इकट्ठे हो गए और मंदिर में घूमने लगे। उन्होंने दरवाजे के दोनों ओर लगी देव-राजाओं की ऊंची प्रतिमाएं देखीं और उनकी मोटी धुलधुल तोंदों पर वे खूब खिलखिलाए। पर मंदिर के गर्भगृह के धुंधलके में बुद्ध की विशाल प्रतिमा के सामने वे कुछ चुपचुप हो गए। मंदिर के अहाते में एक बड़ा-सा पदचिह्न बना था। कहा जाता था कि वह तेंगू नामक लंबे नाक वाले एक बेताल के पैर का निशान था। बच्चों ने एक-एक कर उस पर पैर रखा। वे इधर-उधर घूमे, नाव में बैठी सवारियों से हाथ हिला-हिला कर ‘हैलो’ कहा, चमकीले काले पत्थर बटोर कर जी भर कर कब्रों के आसपास पहल-दूज खेली। हर चीज तोत्तो-चान के लिए नयी थी, अनूठी थी। उसने एक-एक नयी खोज का खुशी से चीख-चीख कर स्वागत किया।

“लौटने का समय हो गया।” ढलते सूरज को देखकर शिक्षिका ने कहा। बच्चे सरसों के खेतों और चेरी की कतारों के बीच से गुजर वापस स्कूल की ओर लौटने लगे। बच्चों को तब यह कतई अहसास न था कि खेलने-कूदने और आजादी का यह समय असल में विज्ञान, इतिहास और जीवविज्ञान के महत्वपूर्ण पाठ थे।

तोत्तो-चान ने इस बीच हर बच्चे से दोस्ती कर ली थी। उसे लगा मानो वह उन्हें हमेशा-हमेशा से जानती हो।

“कल फिर हम घूमने चलेंगे।” उसने अपने साथियों से लौटते समय

चिल्लाकर कहा।

“हां, जरूर चलेंगे।” वे भी उछलते-कूदते बोले।

तितलियां अब भी फूलों की मदद करने में व्यस्त थीं और हवा में पक्षियों के कलरव की गूंज थी। तोत्तो-चान की खुशी अंदर समा नहीं पा रही थी।

स्कूल का गीत

तोमोए गाकुएन में हर दिन तोत्तो-चान के लिए नए आश्चर्यों से भरा था। स्कूल जाने की ललक मन में यों ठाटें मारती कि दिन जल्दी उगता ही न लगता। और घर लौटती तो अपना बतियाना बंद ही न कर पाती कि उसने आज स्कूल में क्या किया, कि कितना मजा आया, कि कितना आश्चर्य भरा था वह सब। रोंकी को, मां को, डैडी को ये सारे किस्से कहती न थकती। आखिरकार मां को कहना पड़ता, “प्यारी तोत्तो-चान, बहुत हुआ। अब चुप करो और अपना नाश्ता करो।”

जब तोत्तो-चान रोज स्कूल जाने की आदी हो गयी, तब भी हर दिन उसके पास बताने को बातों का एक पूरा पिटारा होता था। और इस बात से मां को भी बेहद आनंद मिलता कि सब ठीक चल रहा है।

एक दिन रेलगाड़ी में स्कूल की ओर यात्रा करते समय तोत्तो-चान अचानक सोचने लगी कि तोमोए का कोई स्कूल गीत है या नहीं। बात जानने की उत्सुकता इतनी बढ़ी कि रास्ता कटना मुश्किल हो गया। दो स्टेशन अभी और पार करने थे पर तोत्तो-चान पहले से ही दरवाजे पर जा खड़ी हुई ताकि जियुगाओका पर गाड़ी थमते ही वह बाहर कूद सके। जियुगाओका से एक स्टेशन पहले एक भद्र महिला नीचे उतरने लगी। स्वाभाविक था कि वह सोचती कि तोत्तो-चान को भी वहीं उतरना है क्योंकि तोत्तो-चान दौड़ प्रारंभ होने की मुद्रा में खड़े किसी धावक की तरह दरवाजे के पास खड़ी थी। भद्र महिला उसकी मुद्रा देख, उसे उतरता न पा, यों ही स्थिर खड़े देख बड़बड़ाई, “ना जाने इस नन्ही को क्या हो गया है?”

जब अगले स्टेशन पर गाड़ी थमने को हुई तो इसके पहले कि कंडक्टर, ‘जियुगाओका, जियुगाओका’ कहता तोत्तो-चान फुर्ती से एक टांग बाहर लटका कर पूरी तरह ट्रेन रुकने के पहले ही उतर कर बाहर की ओर भागी। जैसे ही वह डिब्बे में अपनी कक्षा में पहुंची, उसने ताईजी यामानोउची, जो पहले ही वहां मौजूद था, से पूछा, “ताई-चान क्या हमारे स्कूल का भी कोई गीत है?”

ताई जिसकी रुचि भौतिकी में थी, कुछ देर सोचने के बाद बोला, “मेरे ख्याल से तो नहीं।”

“ओह,” तोत्तो-चान ने ख्यालों में डूबकर कहा। “मुझे लगता है कि स्कूल का एक गीत होना ही चाहिए। मेरे पिछले स्कूल का गीत बड़ा सुंदर था।”

वह ऊंची आवाज में गाने लगी :

“सैंजोकु ताल का पानी छिछला
ज्ञान हमारा है पर गहरा...”

तोत्तो-चान पिछले स्कूल में कुछ ही दिन गयी थी और गीत के शब्द कठिन थे। पर उसे फिर भी गीत याद करने में कोई कठिनाई नहीं हुई। कम से कम जितना उसने गाया उसमें तो कतई नहीं।

ताई-चान प्रभावित हुआ। इस बीच दूसरे बच्चे भी कक्षा में आ गए थे। वे सब भारी भरकम शब्दों को तोत्तो-चान के मुंह से सुन प्रभावित हुए बिना न रह सके।

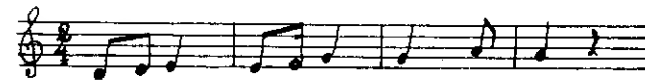
“अपने हेडमास्टर जी से एक स्कूल गीत बनाने को कहते हैं,” तोत्तो-चान ने सुझाया।

“हां, हां, चलो चलें,” दूसरों ने भी सहमति जताई। और सब उनके दफ्तर की ओर बढ़ चले। तोत्तो-चान से उसके पिछले स्कूल का गीत सुनने और बच्चों की सारी बात पर गौर कर लेने के बाद हेडमास्टर जी ने कहा, “ठीक है, कल सुबह तक मैं तुम्हारे लिए एक गीत तैयार कर दूंगा।”

“पक्का वादा है ना ?” बच्चों ने कक्षा में लौटने से पहले पूछ लिया।

अगले दिन हर कक्षा में एक सूचना टंगी थी कि बच्चे बाहर मैदान में इकट्ठे हो जाएं। दूसरे बच्चों के साथ तोत्तो-चान भी उत्सुकता से भर उठी थी। मैदान के बीच एक ब्लैक-बोर्ड रखते हुए हेडमास्टर जी ने कहा, “तो लो, अब तुम्हारे स्कूल तोमोए का भी एक गीत है।”

उन्होंने पांच रेखाएं खींचीं और उस पर निम्न स्वरलिपि लिख डाली।



तो - मो - ए

तो - मो - ए

तो - मो - ए

तब किसी संगीत निर्देशक के अंदाज में उन्होंने कहा, “चलो अब सब साथ गाने की कोशिश करें।”

हेडमास्टर जी ताल देते हुए गीत गाने लगे और उनके पीछे-पीछे उसे दोहरा रहे थे पचास बच्चे।”

“तो-मो-ए, तो-मो-ए, तो-मो-ए”

“बस इतना ही ?” तोत्तो-चान ने कुछ देर बाद पूछा।

“हां, बस काफी है।” हेडमास्टर जी ने गर्व से कहा।

“कुछ अच्छे सुंदर शब्द होते तो कुछ बात बनती,” तोत्तो-चान की आवाज निराशा से भरी थी। “‘संजोकु ताल का पानी छिछला’ जैसे शब्द।”

“क्या गीत अच्छा नहीं लगा ?” हेडमास्टर जी कुछ लजाए। पर फिर भी मुस्कराते हुए बोले, “मुझे तो काफी अच्छा लगा था।”

गीत किसी भी बच्चे को पसंद न आया। इतना सीधा और सरल जो था। और तब हेडमास्टर जी को पता चला कि अगर गीत इतना सीधा और सरल होगा तो बच्चे उसके बिना ही काम चला लेंगे।

हेडमास्टर जी कुछ दुखी तो दिखे पर नाराज नहीं हुए। उन्होंने स्वरलिपि ब्लैकबोर्ड पर से पोंछ डाली। तोत्तो-चान को लगा कि सब बच्चों ने अशिष्टता की है पर वह करती भी क्या ! आखिर उसके दिमाग में बसा था वजनी शब्दों से भरे गीत का सपना।

सच तो यह था कि हेडमास्टर जी के बच्चों व स्कूल के प्रति प्रेम को शब्दों में बांधना ही असम्भव था। पर बच्चे उस समय इतने बड़े न हुए थे कि वे इस बात को समझ भी सकें। जल्दी ही वे स्कूल-गीत की बात भूल गए। हेडमास्टर जी ने भी कभी उसका जिक्र न किया। उन्हें तो शायद पहले भी किसी स्कूल गीत की आवश्यकता न लगती थी, इसलिए स्वरलिपि के पुंछ जाने के बाद बात वहीं खत्म हो गयी। तोमोए गाकुएन का स्कूल गीत कभी न बना।

“सब कुछ वापस डालना !”

तोत्तो-चान ने अपने जीवन में इतनी मेहनत कभी नहीं की थी। क्या दिन था वह भी जब उसका चेहेता बटुआ पाखाने में गिर गया था। ना, उसमें पैसे नहीं थे। पर तोत्तो-चान को अपना बटुआ बेहद प्यारा था। लाल, पीले और हरे रेशमी चेक का बना उसका बटुआ सच में सुंदर था। आयताकार और चपटा। उसके ऊपरी तिकोन पर कड़ा था एक रुपहला कुत्ता, जो बिल्कुल किसी जड़ाऊ पिन-सा लगता था।

तोत्तो-चान की एक विचित्र आदत थी। जब वह छोटी-सी ही थी तभी से वह पाखाना जाने पर जरूर उसके छेद में झांकती और इसलिए प्राथमिक शाला में जाने पर वह कई टोपियां खो चुकी थी जिनमें एक पुआल की बनी थी और

दूसरी सुंदर लेस से सजी थी। उन दिनों पाखानों में आज की तरह फ्लश नहीं हुआ करते थे। बस एक बड़ा-सा छेद होता था और नीचे होती थी एक हौदी। अकसर उसकी टोपियां हौदी में तैरती छूट जाती थीं। मां उसे हर बार नीचे झांकने से मना करती थी।

उस दिन तोत्तो-चान सुबह-सुबह स्कूल प्रारंभ होने से पहले पाखाना गयी। वह मां की बात भूल गयी और कुछ ही देर में नीचे झांकती मिली। हाथ में था बटुआ पर उसकी पकड़ बस पल भर को ही ढीली हुई होगी कि बटुआ उसके हाथ से सरका और छपाक से हौदी में जा गिरा। नीचे अंधेरे में बटुआ को यों गुम होते देख तोत्तो-चान के मुख से एक चीख निकल गयी।

तोत्तो-चान न रोना चाहती थी और न अपना बटुआ खोना। अतः वह चौकीदार के छप्पर में दौड़ी। वहां से एक लंबे हत्ये वाली बड़ी कड़छी निकाली, जिससे पीधों को सींचा जाता था। हत्या तोत्तो-चान से दुगना बड़ा था, पर वह कहां हार मानने वाली थी। उसे घसीटती हुई वह स्कूल के पिछवाड़े पहुंची और हौदी की सफाई करने वाला छेद ढूंढ़ने लगी। उसका अंदाज था कि शायद वह छेद पाखाने की पिछली दीवार से सटा होगा। काफी देर ढूंढ़ने के बाद दीवार से कोई गज भर दूर उसे कंक्रीट के ढकने से ढंका एक बड़ा-सा छेद दिखा। काफी कठिनाई से ढकना हटाने के बाद ही उसे पता चला कि यही वह छेद है जिसे वह ढूंढ़ रही थी।

“अरे यह हौदी तो कुहोन्बुत्सु के ताल जितनी बड़ी है,” उसने आश्चर्य से कहा।

सबसे पहले उस जगह बटुआ ढूंढ़ना चाहा जहां उसके अनुमान से वह गिरा होगा। पर हौदी गहरी, अंधेरी और काफी बड़ी थी। उसमें तीन पाखानों की गंदगी आकर मिलती थी। और डर तो यह था कि नीचे झांकने के चक्कर में वह अंदर ही न गिर जाए। आखिरकार उसने एक फैसला लिया कि वह गंदगी को बाहर निकालकर उसमें से बटुआ ढूंढ़ेगी।

कड़छी से निकाली गंदगी को वह हर बार ध्यान से देखती कि कहीं बटुआ तो उसमें नहीं है। जब उसने ढूंढ़ना आरंभ किया तो उसे कतई यह अनुमान न था कि उसे इतना समय लगेगा। कहां गया होगा उसका बटुआ ! इतने में ही स्कूल की घंटी भी बज उठी।

अब क्या करे वह ? उसने सोचा तो जरूर, पर जब वह इतना आगे बढ़ चुकी थी तो अब खोज बंद करने से भी क्या लाभ होता। वह दुगनी शक्ति से कड़छी-कड़छी गंदगी बाहर उलीचने लगी।

अचानक हेडमास्टर जी पास से गुजरे। तब तक गंदगी का काफी बड़ा ढेर उसके पास इकट्ठा हो गया था।

“यह तुम क्या कर रही हो ?” उन्होंने तोत्तो-चान से पूछा।

“मैंने अपना बटुआ गिरा दिया है,” तोतो-चान ने गंदगी निकालते हुए ही जवाब दिया क्योंकि वह एक पल भी गंवाना नहीं चाहती थी।

“ओह, तो ये बात है।” कहकर हेडमास्टर जी, आदत के अनुसार अपने हाथ पीछे को बांधे, चल दिये। वे सैर करते समय भी इसी तरह हाथ पीछे कर लेते थे।

काफी समय गुजर गया पर बटुआ था कि मिलता ही न था। और वह बदबूदार गंदगी का ढेर बड़ा और बड़ा बनता जा रहा था।

अब हेडमास्टर जी फिर लौटे। “मिल गया तुम्हारा बटुआ ?” उन्होंने जानना चाहा।

“ना,” तोतो-चान पसीने से लथपथ गंदगी के ढेर के बीचों-बीच खड़ी थी। उसके गाल तपकर लाल हो चुके थे।

हेडमास्टर जी कुछ पास आए और मित्र के अंदाज में बोले, “जब तुम्हारा काम हो जाएगा तब तुम यह सब वापस हौदी में डाल देने वाली हो ना !” और इसके बाद जैसे वे पहले चले गये थे, इस बार भी चले गये।

“हां !” तोतो-चान का प्रफुल्लित उत्तर और वह फिर अपने काम में जुट गयी। अचानक दिमाग में एक प्रश्न उठा। उसने पास पड़े ढेर पर नजर दौड़ाई। जब मैं बटुआ ढूंढ चुकूंगी तो यह सारी गंदगी तो वापस डाल दूंगी। पर पानी का क्या होगा ?”

तोतो-चान देख रही थी कि अंदर से निकले गंदे पानी को जमीन सोखती जा रही थी। तोतो-चान ने काम बंद कर दिया और विचार करने लगी कि जमीन में घुस चुके पानी को वापस कैसे डालेगी वह, क्योंकि उसने हेडमास्टर से सब कुछ वापस डालने का वादा जो कर दिया था। आखिरकार उसने तय किया कि पानी के बदले वह थोड़ी-सी गीली मिट्टी अंदर डाल देगी।

उसके पास पड़ा ढेर अब छोटे से कुछ बड़ा पहाड़ बनने लगा था और हौदी प्रायः खाली हो चुकी थी। लेकिन बटुए का कहीं नामोनिशान न दिखा। शायद वह किसी कोने में छिप गया था, या फिर बिल्कुल नीचे ही बैठ गया था। पर तोतो-चान को अब यह संतोष था कि उसने भरसक चेष्टा कर ली है। उसका संतोष जरूर उसके आत्मसम्मान से जगा था जिसे हेडमास्टर जी से उसे डांट न पिलाकर और उसमें पूरा विश्वास जताकर मजबूत बनाया था। पर तब इतनी जटिल बातें उसके समझ में कैसे आतीं।

कोई भी दूसरा वयस्क तोतो-चान को उस स्थिति में पाकर कहता, “यह क्या कर रही हो तुम ?” या कहता, “बंद करो, पता है कितना जोखिम है इसमें !” एक तीसरा विकल्प यह होता कि वह उसकी मदद करने बैठ जाता।

सोचिए, उन्होंने वस इतना कहा, “जब तुम्हारा काम हो जाएगा तब तुम यह

सब वापस हौदी में डाल देने वाली हो ना !” कितने अद्भुत हेडमास्टर हैं, मां ने तोतो-चान से घटना सुन मन ही मन सोचा था।

उस घटना के बाद तोतो-चान ने फिर कभी पाखाने के छेद में नीचे नहीं झांका। उसे यह भी लगा कि हेडमास्टर जी पर पूरा-पूरा भरोसा किया जा सकता है। वह उन्हें पहले से भी अधिक चाहने लगी।

तोतो-चान ने अपना वादा निभाया। जो उसने हौदी से बाहर निकाला था, सब वापस डाल दिया। बाहर निकालना तो मुश्किल काम था, पर वापस डालने का काम जल्दी हो गया। और तब उसने कुछ गीली मिट्टी भी अंदर डाली, पास की जमीन थपथपा कर सपाट की, कंक्रीट का ढकना छेद पर रखा और बड़ी कड़खी चौकीदार के छपरे में रख आई।

उस रात सोते समय तोतो-चान को अपने सुंदर बटुए की याद आई। बटुए के खोने का उसे दुख था। पर दिन में की मेहनत उसे इतना थका चुकी थी कि कुछ ही देर में वह गहरी नींद में खो गयी।

और इस बीच जहां उसने मेहनत की थी, उस जगह की गीली मिट्टी चांदनी में किसी सुंदर चीज की तरह झिलमिल रही थी। और हौदी के किसी कोने में खोया उसका बटुआ शांति से दुबका पड़ा था।

तोतो-चान का नाम

तोतो-चान का असली नाम तेत्सुको था। जब वह पैदा हुई, उसके पहले मां-डैडी के सारे मित्रों ने कहा था कि जरूर बेटा ही होगा। यह उनका पहला शिशु था, इसलिए उन्होंने विश्वास कर लिया। सो जो नाम ढूंढा गया, वह लड़के का था—‘तोरु’। होने वाला शिशु जब लड़की निकली तो उन्हें कुछ निराशा हुई क्योंकि मां-डैडी दोनों को ‘तोरु’ का चीनी अक्षर बेहद पसंद था जिसका अर्थ था—बेधना, दूर तक ले जाना, आवाज की तरह स्पष्ट और गुंजायमान होना। इसलिए उन्होंने अक्षर के चीनी उच्चारण ‘तेत्सु’ में ‘को’ जोड़ा जो अक्सर लड़कियों को नाम देते हुए काम में लाया जाता था, और उसका स्त्रीलिंग बना डाला।

सब उसे तेत्सुको-चान (चान, सान का लोकप्रिय रूप है जिसे किसी भी नाम के पीछे जोड़ दिया जाता है) कहते थे। पर उसे अपना नाम कभी तेत्सुको-चान सुनाई न देता। जब कभी कोई उससे पूछता कि तुम्हारा नाम क्या है, तो वह कहती—“तोतो-चान।” वह तो यह भी सोचती थी कि ‘चान’ उसके नाम का ही हिस्सा है।

डैडी उसे कभी-कभी तोत्स्की कहते, मानो वह लड़का हो। वे कहते, “तोत्स्की, इधर आओ और इस गुलाब पर लगे कीड़ों को हटाने में मेरी मदद

करो।" पर डैडी और रॉकी को छोड़ बाकी सब उसे तोत्तो-चान कहने लगे। वह अपनी स्कूल की कापियों और किताबों पर तो अपना नाम 'तेत्सुको' लिखने लगी थी, पर अपने आपको वह तोत्तो-चान ही मानती थी।

रेडियो मसखरे

कल तोत्तो-चान बड़ी अशांत थी। मां ने कह दिया था कि अब तुम रेडियो पर मसखरों को नहीं सुनोगी।

जब तोत्तो-चान नन्ही-सी थी, उस समय रेडियो लकड़ी के बनते थे और बड़े सुंदर लगते थे। वे आयताकार होते थे। उसका ऊपरी हिस्सा गोलाई लिए हुए था। सामने का स्पीकर गुलाबी रेशम और नक्काशीदार लकड़ी से मढ़ा होता था। दो बटन होते थे, जो उसे चलाने में मदद करते थे।

जब उसने स्कूल जाना प्रारंभ किया, उससे भी पहले से उसे 'राकुगो' मसखरों को अपने कान गुलाबी रेशम से लगाकर, सुनना अच्छा लगता था। उनके मजाक वड़े अच्छे लगते थे। और कल से पहले मां ने इस पर कभी आपत्ति नहीं की थी।

पिछली रात डैडी के 'आर्केस्ट्रा' के कुछ मित्र आए और बैठक में अभ्यास करने लगे।

"सैलो बजाने वाले त्सुनेसादा ताचीबाना तुम्हारे लिए केले लाए हैं।" मां ने कहा।

तोत्तो-चान खिल उठी। उसने शिष्टता से झुककर ताचीबाना के प्रति आभार दर्शाया और मां से कहा, "यह तो साला बड़ा बढ़िया हुआ।"

इसके बाद जब मां-डैडी न होते, तब उसे छिपकर रेडियो सुनना पड़ता। जब मसखरे बढ़िया मजाक करते तो वह जोरों से हंसती। अगर उस समय वयस्क उसे देखते तो जरूर यह सोचते—इतनी छोटी लड़की भला मजाक क्या समझती होगी। पर इसमें कोई शंका नहीं है कि बच्चों में एक गहरी विनोदशीलता होती है, चाहे वे कितने ही छोटे क्यों न हों और वे यह भी जान जाते हैं कि कब किसने बढ़िया मजाक किया है।

रेल के नये डिब्बे का आगमन

"आज रात एक नया डिब्बा आने वाला है।" मियो-चान ने दोपहर को खाने की छुट्टी में बताया। मियो-चान हेडमास्टर जी की तीसरी बेटी थी और तोत्तो-चान की कक्षा में ही पढ़ती थी।

छह खाली डिब्बे वहां पहले ही कक्षाओं के लिए काम में आते थे। अब एक और आ रहा था। मियो-चान ने बताया कि उसमें पुस्तकालय बनेगा। बच्चों में अत्यधिक उत्सुकता जाग उठी।

"डिब्बा जाने किस रास्ते से आएगा?" किसी ने पूछा।

यह चुनौती भरा विषय था। क्षण भर के लिए चुप्पी छा गयी।

"शायद ओइमाची लाइन की पटरियों से आयेगा और सामने के चौराहे से स्कूल की ओर मुड़ जायेगा," दूसरे ने सुझाया।

"पर तब तो उसे पटरियों से नीचे उतरना पड़ेगा।"

"शायद किसी ठेले पर ही आए," एक और सुझाव आया।

"हटो, इतना बड़ा ठेला कहां होगा, जिस पर वह आ सके," किसी ने तुरंत आपत्ति की।

"हां, शायद नहीं...।"

अब सारे विचार ठप्प हो गए। बच्चों को इतना तो समझ में आ गया कि किसी ठेले या ट्रक पर डिब्बा नहीं आ सकता।

"पटरियों पर..." तोत्तो-चान ने बड़ी देर बाद सोचने के बाद कहा।

"शायद, वे स्कूल तक पटरियां बिछाने वाले हों।"

"कहां से?" किसी ने पूछा।

"कहां से? अरे, वहीं से जहां कहीं वह डिब्बा अभी है," तोत्तो-चान ने कहा। पर उसे भी लगा कि शायद उसकी बात में दम नहीं है। उसे यह भी तो पता नहीं था कि आखिर डिब्बा कहां से आने वाला है। फिर इतना तो खैर तय ही था कि स्कूल तक पटरियां बिछाने के लिए राह में पड़ने वाले मकान, दुकान आदि तो कोई तोड़ेगा नहीं।

एक के बाद दूसरी संभावना पर निरर्थक चर्चा के बाद बच्चों ने निर्णय किया कि दोपहर बाद घर न जाकर वे स्कूल में ही रेल के डिब्बे के आने का इंतजार करेंगे। तब मियो-चान को सबने चुना कि वह अपने पिता हेडमास्टर जी से रात तक स्कूल में रुकने की अनुमति ले आए। काफी समय बाद लौटी वह।

"रेल का डिब्बा तो देर रात को आने वाला है। सारी रेलगाड़ियां जब चलना बंद हो जाएंगी, उसके बाद। जिसे सच में उसे देखना हो, उसे घर जाकर अनुमति लेनी होगी। वे चाहें तो रात का खाना खा, अपने-अपने पाजामे और कंबलों के साथ रात को यहां आ जाएं।"

"अरे वाह!" बच्चे और भी उत्तेजित हो उठे।

"उन्होंने पाजामे लाने को कहा है?"

"और कंबल भी?"

उस दोपहर किसी बच्चे का मन पढ़ने में नहीं लगा। स्कूल के बाद तोत्तो-चान

की कक्षा के सभी बच्चे घर की ओर भागे। रास्ते भर यह मनाते रहे कि रात वे फिर एक बार पाजामों और कंबलों के साथ एक दूसरे से स्कूल में मिल सकें।

तोतो-चान जैसे ही घर पहुंची, उसने मां से कहा, “एक नया डिब्बा आ रहा है। हमें नहीं पता कि वह वहां कैसे आयेगा। पाजामा और कंबल ! क्या मैं जा सकती हूँ ?”

कौन-सी मां ऐसी व्याख्या से स्थिति भांप पाती ! तोतो-चान की मां को तो समझ ही न आया कि आखिर माजरा क्या है। पर अपनी बेटी के गंभीर चेहरे से



इतना तो वह समझ गयी कि कुछ असामान्य घटने वाला है।

मां ने तोतो-चान से कई प्रश्न पूछे और तब जाकर उसे पता चला कि क्या होने वाला है। उसने सोचा—तोतो-चान को ऐसा अवसर कब मिलेगा, उसे जाने देना चाहिए। उसने यह भी सोचा कि खुद उसे भी रेल का आना देखना अच्छा लगेगा।

रात के खाने के बाद मां ने तोतो-चान का पाजामा निकाला, कंबल लिया और तोतो-चान को खुद स्कूल ले गयी। कोई दसक बच्चे वहां जमा थे। इनमें कुछ बड़ी कक्षाओं के भी थे जिन्हें बात की हवा लग गयी थी। कुछ दूसरी माताएं भी अपने बच्चों के साथ आई थीं। उन्हें देखकर लगता था मानो स्कूल में रुकने की चाहना उनके मन में भी है। लेकिन बच्चों को हेडमास्टर को सौंपने के बाद वे लौट गयीं थीं।

“रेल के डिब्बे के आते ही मैं तुम सबको जगा दूंगा,” हेडमास्टर जी ने, जब बच्चे सभागार में अपने कंबलों में दुबक गए, तब आश्वासन दिया।

बच्चों ने सोचा कि वे बिल्कुल भी सोरेंगे नहीं, रेल डिब्बे के आने की बात ही सोचते रहेंगे। पर दिन भर की उत्तेजना से वे थक गए थे। अतः वे उनींद हो चले। और इसके पहले कि वे कह पाते, “मुझे जगाना न भूलें,” उनमें से अधिकांश गहरी नींद में खो गए।

“आ गया, आ गया !” की आवाजों का शोर सुन तोतो-चान जागी, उछली और अहाता पार कर दरवाजे की ओर भागी। सुबह के धुंधलके में एक बड़ा-सा रेल का डिब्बा दिखने लगा। यह सपने की तरह था—न आवाज, न पटरियां। रेल का डिब्बा असल में एक ट्रेलर में रखा था जिसे ओइमाची लाईन डिपो का ट्रेक्टर खींच कर ला रहा था। इससे पहले तोतो-चान और बाकी बच्चों को यह पता भी न था कि ट्रेक्टर जैसी कोई चीज भी होती है, जो ठेलों से भी बड़े ट्रेलर को खींच कर ला सकती है। वे बड़े प्रभावित हुए।

सुबह की खाली सड़क पर ट्रेलर पर लदा रेल का डिब्बा धीरे-धीरे चला आ रहा था। कुछ ही देर में शोरगुल मचने लगा। उन दिनों भारी भरकम क्रेन तो थीं नहीं जो रेल के डिब्बे को ट्रेलर से उठाकर स्कूल के मैदान में रख देतीं। जो लोग डिब्बे को लाए थे वही लकड़ी के बड़े-बड़े लट्ठों को उसके नीचे फंसाकर अहाते में उतारने लगे।

“ध्यान से देखो,” हेडमास्टर जी ने कहा। “इन्हें लट्ठा कहते हैं। लुढ़काने की शक्ति से इतने बड़े रेल के डिब्बे को सरकाया जा रहा है।”

सब बच्चे गंभीर थे।

“जोर लगाके हैया, हैया,” मेहनत में जुटे मजदूर एक ताल में बोलने लगे और सूरज मानो उनकी आवाज से ताल मिलाता ऊपर उठने लगा था।

स्कूल में मौजूद बाकी छह डिब्बों की तरह इस नए डब्बे ने भी सैकड़ों यात्रियों का बोझा ढोया था। उसके चक्के हटा दिए गए थे। यात्रा काल पूरा हो चुका था। अब उसे केवल बच्चों की खिलखिलाहट दोनी थी।

सुबह की कुनकुनी धूप में अपने पाजामों में खड़े बच्चे बेहद खुश थे। इतने कि वे वहीं खड़े-खड़े ऊपर उछल रहे थे। हेडमास्टर जी के गले से लिपट रहे थे और उनके हाथ जोर-जोर से हिला रहे थे।

बच्चों के इस चौतरफा आक्रमण से हेडमास्टर जी कुछ डगमगाए, पर प्रसन्न हो मुस्कराए। उनकी मुस्कान देख बच्चे भी मुस्कराए। और उनमें से एक भी यह कभी नहीं भूला कि उस दिन वे कितने प्रसन्न थे।

तरण-ताल

तोत्तो-चान के लिए वह अति महत्वपूर्ण दिन था। उस दिन पहली बार वह किसी तरण-ताल में तैरी थी, और वह भी बिना कपड़ों के।

एक दिन सुबह-सुबह हेडमास्टर जी ने कहा, “अचानक बड़ी गर्मी हो गयी है। मैं सोचता हूँ ताल भरवा डालूँ।”

“वाह,” सभी बच्चे उछलते-कूदते चिल्लाए। तोत्तो-चान और उसकी पहली कक्षा के साथियों का “वाह” कहना और उछलना-कूदना दूसरे बच्चों से कहीं अधिक था। तोमोए का तरण-ताल दूसरे तालों की तरह आयताकार न था—उसका एक सिरा संकरा था मानो कोई नाव हो। पर था वह काफी बड़ा और बढ़िया। रेल के डिब्बों और सभागार के बीच बना हुआ था वह ताल।

तोत्तो-चान व दूसरे बच्चे पाठ के दौरान खिड़की से बाहर ताल की ओर झांकते रहे। जब वह खाली था तब मैदान की बाकी जगहों की तरह उसमें भी सूखी पत्तियाँ पड़ी हुई थीं। अब उसमें पानी भरने लगा था और वह सचमुच का ताल लगने लगा था।

दोपहर खाने की छुट्टी होते ही बच्चे ताल के पास इकट्ठे हो गये। हेडमास्टर जी ने कहा, “हम कुछ व्यायाम कर लें, फिर तैरेंगे।”

तैरने के लिए क्या मुझे तैरने की पोशाक की जरूरत नहीं पड़ेगी ?” तोत्तो-चान ने सोचा। जब कभी वह माँ और डैडी के साथ कामाकुरा में तैरने जाती तो तैरने की पोशाक, एक रबड़ की ट्यूब और ढेरों दूसरी चीजें साथ होती थीं। वह याद करने की कोशिश करने लगी कि कहीं शिक्षिका ने तैरने की पोशाक साथ लाने को कहा तो नहीं था।

जैसे हेडमास्टर जी ने उसके मन के भावों को समझ लिया था। वे बोले, “तैरने की पोशाक की चिंता छोड़ो। जाओ और सभागार में देखो।”

जब तोत्तो-चान और उसकी कक्षा के दूसरे बच्चे सभागार में पहुँचे तो खुशी से शोर मचाते बड़े बच्चे तैरने की तैयारी में अपने-अपने कपड़े उतार चुके थे। एक के बाद एक बिल्कुल नंग-धड़ंग बच्चे ताल की ओर दौड़े। तोत्तो-चान और उसके दोस्त भी कुछ ही देर में पीछे-पीछे दौड़े। सभागार की सीढ़ियों पर पहुँच कर उन्होंने दूसरे बच्चों को व्यायाम करते देखा। तोत्तो-चान और उसके साथी भी सीढ़ियों से नीचे भागे।

तैरना सिखाने आए थे मियो-चान के बड़े भाई, हेडमास्टर जी के बेटे। वह व्यायाम विशेषज्ञ थे। वह तोमोए में नहीं पढ़ाते थे, पर विश्वविद्यालय तैराकी दल के सदस्य थे। उनका नाम स्कूल के नाम की तरह तोमोए ही था। तोमोए-सान ने तैरने की पोशाक पहन रखी थी।

व्यायाम कर लेने के बाद जब उन पर ठंडा पानी डाला गया तो वो खुशी से शोरगुल करने लगे। और तब वे पानी में कूद पड़े। तोत्तो-चान तब तक पानी के अंदर नहीं गयी जब तक उसने दूसरों को देख यह पक्का न कर लिया कि ताल में खड़ा हुआ जा सकता है। पानी स्नान-घर के टब जैसा गर्म तो न था पर यह था बड़ा मनमोहक। लंबे-चौड़े ताल में जहाँ तक हाथ फैलाओ, पानी ही पानी था।

पतले-मोटे, लड़के-लड़कियाँ सबके सब हंसते-किलकारते, चीखते-चिल्लाते पानी उछालते-छपछपाते अपने-अपने जन्म मुहूर्त की पोशाक में यानी नंगे नहा रहे थे।

क्या आनंद है, कितनी सुखद अनुभूति है, तोत्तो-चान ने सोचा। हाँ, उसे यह दुख जरूर था कि रॉकी को यह पता होता कि तैरने की पोशाक के बिना भी तैरा जा सकता है तो वह भी जरूर उसके साथ तैरता।

संभव है आपके मन में यह प्रश्न उठे कि हेडमास्टर जी ने बच्चों को यों निपट निर्वस्त्र तैरने क्यों दिया। पर इसका कोई नियम न था। अगर तैरने की पोशाक साथ होती और उसे पहनने की बच्चे की इच्छा होती तो वह उसे पहन सकता था पर आज की तरह अगर अचानक ही तैरने की इच्छा हो और तैरने की पोशाक न हो तो भी कोई चिंता की बात न थी। एक विचार और था इस अनुमति के पीछे कि लड़के-लड़कियों में एक-दूसरे के शारीरिक अंतरों को लेकर किसी तरह की कुत्सित उत्कंठा न रहे। हेडमास्टर जी को बच्चों में शरीर को छुपाने के उपक्रम कृत्रिम लगते थे।

वे बच्चों को यह भी सिखाना चाहते थे कि हर शरीर का एक सौंदर्य होता है। और फिर तोमोए में कुछ विकलांग बच्चे भी तो थे जैसे यासुकी-चान जिसे पोलिया था। कुछ ठिकने थे या किसी और तरह से असामान्य। उन्हें लगता था कि कपड़ों का आवरण उतारने के बाद वे अपने शरीर को लेकर अपने मन की कुंठाएं भूल सकेंगे। और हुआ भी यही, पहली झिझक के बाद इन बच्चों की कुंठाएं

व लज्जा भी दूटों और धीरे-धीरे वे दूसरों के साथ खेलने लगे।

कुछ माता-पिता इन विचारों से चिंतित हो उठते और अपने बच्चों को तैरने की पोशाकें देते हुए कहते कि उन्हें जरूर पहनें। पर उनमें से अधिकांश यह जानते भी न थे कि वे पोशाकें कितनी कम काम में लाई जाती थीं। तोतो-चान की तरह—जिसने पहले दिन के अनुभव के बाद मान लिया था कि निर्वस्त्र तैरना ही सबसे बढ़िया है—दूसरे भी थे जो कहते कि वे पोशाकें लाना भूल गए हैं। असल में ज्यादातर बच्चों को यह विश्वास हो गया था कि सबके साथ मिलकर निर्वस्त्र नहाने का अपना ही आनंद है। हां, पर यह जरूर याद रखना पड़ता था उन्हें कि जब वे घर लौटें तो उनकी पोशाकें गीली हों। तोमोए के सारे बच्चे बदर की तरह भूरे रंग के हो चले, तैरने की पोशाक से ढंके हिस्सों की सफेदी कहीं नहीं रही।

प्रगति-पत्र

तोतो-चान न दाएं झांक रही थी, न बाएं। स्टेशन से घर के रास्ते पर वह बेतहाशा भाग रही थी। बस्ता उसकी पीठ पर ऊपर-नीचे उछल रहा था। ऐसे में कोई अगर उसे देखता तो जरूर सोचता कि कुछ अप्रिय घटा है। असल में, वह जब से स्कूल के गेट से बाहर निकली थी तभी से ही दौड़ रही थी।

घर पहुंचते ही उसने जोर से घोषणा की, “मैं आ गयी !” इसके बाद वह रॉकी को ढूंढ़ने लगी। रॉकी बरामदे की ठंडक में पसरा पड़ा था। तोतो-चान ने मुंह से कुछ न कहा। उसने बस्ते से अपना प्रगति-पत्र निकाला—अपना पहला प्रगति-पत्र। खोलकर उसे ठीक रॉकी की नाक के सामने किया ताकि वह उसे साफ-साफ देख सके।

“देखो !” उसने गर्व के साथ कहा। प्रगति-पत्र में कहीं ‘ए’ था तो कहीं ‘बी’। साथ ही दूसरे चिह्न भी थे। तोतो-चान को तब तक यह पता नहीं था कि ‘ए’ ‘बी’ से बेहतर होता है या ‘बी’ ‘ए’ से। वह यह भी जानती थी कि रॉकी के लिए यह समझना और भी मुश्किल होगा। पर अपना प्रगति-पत्र वह सबसे पहले रॉकी को ही दिखाना चाहती थी। उसका विश्वास था कि रॉकी उसे देखकर बहुत-बहुत खुश होगा।

रॉकी ने अपने सामने खुले कागज को सूंघा। फिर वह तोतो-चान की ओर ताकने लगा।

“मान गए ना ?” तोतो-चान ने कहा, “ढेरों कठिन शब्द भरे हैं इसमें, इसे पूरा तो क्या पढ़ पाओगे तुम ?”

रॉकी ने अपनी गर्दन कुछ टेढ़ी की, मानो वह प्रगति-पत्र एक बार फिर देख

रहा हो। इसके बाद उसने तोतो-चान का हाथ चाट लिया।

“तो ठीक है।” तोतो-चान ने संतोष से कहा, “अब मैं इसे मां को दिखाती हूँ।”

तोतो-चान के जाने के बाद रॉकी दूसरी ठंडी जगह तलाशने को उठा। तलाश लेने के बाद वह धीरे से लेट गया और अपनी आंखें बंद कर लीं। उस समय उसे देखकर न केवल तोतो-चान बल्कि दूसरे भी यही कहते कि आंखें बंद करने के ढंग से तो यही लगता है कि वह तोतो-चान के प्रगति-पत्र के बारे में ही सोच रहा है।

गर्मी की छुट्टियां

“कल से शिविर लग रहा है। बच्चे शाम तक अपने कंबल व कपड़ों के साथ पहुंच जायें।” यह लिखा था हेडमास्टर जी द्वारा भेजे गए संदेश में, जिसे तोतो-चान मां को दिखाने घर लाई थी। अगले दिन से गर्मी की छुट्टियां शुरू हो रही थीं।

“शिविर का क्या मतलब होता है ?” तोतो-चान ने पूछा।

मां भी ठीक यही सोच रही थी लेकिन उत्तर में उसने कहा, “क्या इसका मतलब यह तो नहीं कि तुम सब बच्चे बाहर कहीं तंबू लगाओगे और उनमें सोओगे ? और तंबूओं में सोओगे तो रात को चांद-तारे भी देख सकोगे। शिविर पता नहीं कहाँ लगेगा। किराए की बात तो कहीं लिखी नहीं है। यानी स्कूल के आसपास ही रहोगे शायद।”

उस रात सोते समय तोतो-चान को जैसे युगों तक नींद नहीं आई। शिविर में जाने की बात से उसे डर भी लग रहा था और खुशी भी हो रही थी। उसका दिल तेजी से धड़क रहा था।

अगले दिन सुबह उठते ही उसने सामान समेटना शुरू कर दिया। पर शाम को जब तैयार अटैची पर कंबल रखा गया और उसने सबसे विदा ली तो वह केवल एक नन्ही सी घबराई हुई बच्ची थी।

जब सब बच्चे स्कूल में इकट्ठे हो चुके तो हेडमास्टर जी ने कहा, “तुम सब सभागार में चलो।” जब बच्चे वहां पहुंचे तो हेडमास्टर जी हाथ में कुछ पकड़े चबूतरे पर चढ़े। उनके हाथ में हरे रंग का तंबू था।

“मैं तुम लोगों को तंबू लगाना सिखाता हूँ।” उन्होंने उसे खोलते हुए कहा। “ध्यान से देखना तुम सब।”

हांफते-कांखते उन्होंने अकेले ही रस्सियां तानीं, बल्लियां लगायीं, और इसके पहले कि बच्चे ‘जैक रोबिंसन’ कह उठते, सामने एक सुंदर तंबू लगा खड़ा था।

“तो आओ,” हेडमास्टर जी ने कहा। “अब पूरे सभागार में तुम तंबू

लगाओगे और 'कैपिंग' करोगे।"

जैसा मां ने सोचा था, वैसा ही दूसरों ने भी सोचा होगा कि तंबू बाहर खुले में लगाए जायेंगे। पर हेडमास्टर जी के विचार कुछ और थे। बरसात और ठंडक दोनों से सभागार में बचा जा सकता था।

"हम कैपिंग कर रहे हैं," के शोर के बीच बच्चे छोटी-छोटी टुकड़ियों में बंट गये। शिक्षक की सहायता से जरूरत के अनुसार तंबू लगा दिए गये। हरेक तंबू में तीन-तीन बच्चे सो सकते थे। तोत्तो-चान ने तुरंत कपड़े बदल डाले। कुछ ही देर में सब बच्चे एक से दूसरे तंबू में रेंगते फिर रहे थे।

जब सब बच्चे कपड़े बदल चुके तो हेडमास्टर जी तंबूओं के घेरे के बीच बैठ गये ताकि सब उन्हें देख सकें। तब वे अपनी देश-विदेश की यात्राओं की बातें बताने लगे।

कुछ बच्चे सिर बाहर निकाले तंबूओं में घुसे अधलेटे थे, कुछ ठीक से तने बैठे थे और कुछ के सिर बड़े बच्चों की गोद में थे। सबके सब ध्यान से उन देशों की सैर की कहानियां सुन रहे थे जिन्हें उन्होंने कभी देखा न था। और तो और, कई जगहों के तो नाम तक उन्होंने नहीं सुने थे। बच्चों को बातें सुनने में रस आ रहा था। उन देशों के बच्चों की बातें सुनकर सभी बच्चों को लगने लगा जैसे सात सपुंदर पार के वे सारे बच्चे भी उनके दोस्त हों।

सभागार में तंबू लगा कर सोने की यह साधारण घटना बच्चों के लिए अति महत्वपूर्ण तथा उल्लास से भरा ऐसा अनुभव बन गया, जिसे बच्चे कभी नहीं भुला पाए। हेडमास्टर जी यह खूब समझते थे कि बच्चों को खुश कैसे रखा जाये।

जब हेडमास्टर जी बात पूरी कर चुके और सभागार की बत्तियां बुझा दी गयीं तो बच्चे अपने-अपने तंबू में चले गये। कहीं खिलखिलाहट गूंज रही थी, तो कहीं फुसफुसाने की आवाज। कहीं और से छोटी-मोटी मुठभेड़ की आवाज आ रही थी, पर धीरे-धीरे चारों ओर शांति छा गयी।

ऐसा था बिना चांद-तारों के शिविर में रहना। लेकिन बच्चों के आनन्द और उल्लास का ठिकाना न था। उनके लिए वह सभागार ही कैपिंग ग्राउंड था, और स्मृति ने उस रात को चांद की किरणों और तारों की रोशनी में सदा-सदा के लिए ओत-प्रोत कर लिया।

अपूर्व अनुभव

सभागार में शिविर लगने के दो दिन बाद तोत्तो-चान के लिए एक बड़ा साहस करने का दिन आया। इस दिन उसे यासुकी-चान से मिलना था। इस भेद का पता न तो तोत्तो-चान के माता-पिता को था न ही यासुकी-चान के। उसने यासुकी-चान

को अपने पेड़ पर चढ़ने का न्योता दिया था।

तोमोए में हरेक बच्चा बाग के एक-एक पेड़ को अपने खुद के चढ़ने का पेड़ मानता था। तोत्तो-चान का पेड़ मैदान के बाहरी हिस्से में कुहोन्बुत्सु जाने वाली सड़क के पास था। बड़ा सा पेड़ था उसका। चढ़ने जाओ तो पैर फिसल-फिसल जाते, पर ठीक से चढ़ने पर जमीन से कोई छह फुट की ऊंचाई पर एक डिशाखा तक पहुंचा जा सकता था। बिल्कुल किसी झूले-सी आरामदेह जगह थी यह। तोत्तो-चान अकसर खाने की छुट्टी के समय या स्कूल के बाद ऊपर चढ़ी मिलती। वहां से वह सामने दूर तक, ऊपर आकाश को, या नीचे सड़क पर चलते लोगों को देखा करती थी।

बच्चे अपने-अपने पेड़ को निजी संपत्ति मानते थे। किसी दूसरे के पेड़ पर चढ़ना हो तो उससे पहले पूरी शिष्टता से, "माफ कीजिए, क्या मैं अंदर आ जाऊं?" पूछना पड़ता था।

यासुकी-चान को पोलियो था, इसलिए वह न तो किसी पेड़ पर चढ़ पाता था और न किसी पेड़ को निजी संपत्ति मानता था। अतः तोत्तो-चान ने उसे अपने पेड़ पर आमंत्रित किया था। पर यह बात उन्होंने किसी से नहीं कही, क्योंकि अगर बड़े सुनते तो जरूर डांटते।

घर से निकलते समय तोत्तो-चान ने मां से कहा कि वह यासुकी-चान के घर डेनेनचोफु जा रही है। चूंकि वह झूठ बोल रही थी, इसलिए उसने मां की आंखों में नहीं झांका। अपनी नजरें वह जूतों ने फीतों पर ही गड़ाए रखी। रॉकी उसके पीछे-पीछे स्टेशन तक आया। जाने से पहले उसे सच बताए बिना तोत्तो-चान से रहा नहीं गया।

"मैं यासुकी-चान को अपने पेड़ पर चढ़ने देने वाली हूँ।" उसने बताया।

जब तोत्तो-चान स्कूल पहुंची तो रेल-पास उसके गले के आसपास हवा में छड़ रहा था। यासुकी-चान उसे मैदान में क्यारियों के पास मिला। गर्मी की छुट्टियों के कारण सब सूना पड़ा था। यासुकी-चान उससे कुल जमा एक ही वर्ष बड़ा था, पर तोत्तो-चान को वह अपने से बहुत बड़ा लगता था।

जैसे ही यासुकी-चान ने तोत्तो-चान को देखा, वह पैर घसीटता हुआ उसकी ओर बढ़ा। उसके हाथ अपनी चाल को स्थिर करने के लिए दोनों ओर फैले हुए थे। तोत्तो-चान उत्तेजित थी। वे दोनों आज कुछ ऐसा जो करने वाले थे जिसका भेद किसी को भी पता न था। वह उत्तेजना में ठिठिया कर हंसने लगी। यासुकी-चान भी हंसने लगा।

तोत्तो-चान यासुकी-चान को अपने पेड़ की ओर ले गयी। और उसके बाद वह तुरंत चौकीदार के छप्पर की ओर भागी, जैसा उसने रात को ही तय कर लिया था। वहां से वह एक सीढ़ी घसीटती हुई लाई। उसे तने के सहारे ऐसे लगाया,

जिससे वह दिशाखा तक पहुंच जाये। वह फुर्सी से ऊपर चढ़ी और सीढ़ी के किनारे को पकड़ लिया। तब उसने पुकारा, “ठीक है, अब ऊपर चढ़ने की कोशिश करो।”

यासुकी-चान के हाथ-पैर इतने कमजोर थे कि वह पहली सीढ़ी पर भी बिना सहारे के चढ़ नहीं पाया। इस पर तोतो-चान नीचे उतर आई और यासुकी-चान को पीछे से धकियाने लगी। पर तोतो-चान थी छोटी और नाजुक सी, इससे अधिक सहायता क्या करती। यासुकी-चान ने अपना पैर सीढ़ी पर से हटा लिया और हताशा से सिर झुका कर खड़ा हो गया। तोतो-चान को पहली बार लगा कि काम



उतना आसान नहीं है जितना वह सोचे बैठी थी। अब क्या करे वह ?

यासुकी-चान उसके पेड़ पर चढ़े, यह उसकी हार्दिक इच्छा थी। यासुकी-चान के मन में भी उत्साह था। वह उसके सामने गयी। उसका लटका चेहरा इतना उदास था कि तोतो-चान को उसे हंसाने के लिए गाल फुलाकर तरह-तरह के चेहरे बनाने पड़े।

“ठहरो, एक बात सूझी है।”

वह फिर चौकीदार के छप्पर की ओर दौड़ी और हरेक चीज उलट-पुलट कर देखने लगी। आखिर उसे एक तिपाई-सीढ़ी मिली जिसे धामे रहना भी जरूरी नहीं था।

वह तिपाई-सीढ़ी को घसीटकर ले आयी तो अपनी शक्ति पर हैरान होने लगी। तिपाई की ऊपरी सीढ़ी दिशाखा तक पहुंच रही थी।

“देखो, अब डरना मत,” उसने बड़ी बहन की सी आवाज में कहा, “यह डगमगाएगी नहीं।”

यासुकी-चान ने धबकाकर तिपाई-सीढ़ी की तरफ देखा। तब उसने पसीने से तरबतर तोतो-चान को देखा। यासुकी-चान को भी काफी पसीना आ रहा था। उसने पेड़ की ओर देखा और तब निश्चय के साथ पांव उठाकर पहली सीढ़ी पर रखा।

उन दोनों को यह बिल्कुल भी पता न चला कि कितना समय यासुकी-चान को ऊपर तक चढ़ने में लगा। सूरज का ताप उन पर पड़ रहा था, पर दोनों का ध्यान यासुकी-चान के ऊपर तक पहुंचने में रमा था। तोतो-चान नीचे से उसका एक-एक पैर सीढ़ी पर धरने में मदद कर रही थी। अपने सिर से वह उसके पिछले हिस्से को भी स्थिर करती रही। यासुकी-चान पूरी शक्ति के साथ जूझ रहा था, और आखिर वह ऊपर पहुंच गया।

“हुर्रे !”

पर अचानक सारी की हुई मेहनत बेकार लगने लगी। तोतो-चान तो सीढ़ी पर से दिशाखा पर छलांग लगा कर पहुंच गयी, पर यासुकी-चान को सीढ़ी से पेड़ पर लाने की हर कोशिश बेकार रही। यासुकी-चान सीढ़ी धामे तोतो-चान की ओर ताकने लगा। तोतो-चान की रुलाई छूटने को हुई। उसने चाहा था कि यासुकी-चान को अपने पेड़ पर आमंत्रित कर तमाम नयी-नयी चीजें दिखाये।

पर वह रोई नहीं। उसे डर था कि उसके रोने पर यासुकी-चान भी रो पड़ेगा। उसने यासुकी-चान की पोलियों से पिचकी और अकड़ी उंगलियों वाला हाथ अपने हाथ में धाम लिया। उसके खुद के हाथ से वह बड़ा था, उंगलियां भी लंबी थीं। देर तक तोतो-चान उसका हाथ धामे रही। तब बोली, “तुम लेट जाओ, मैं तुम्हें पेड़ पर खींचने की कोशिश करती हूँ।”

उस समय द्विशाखा पर खड़ी तोत्तो-चान द्वारा यासुकी-चान को पेड़ की ओर खींचते अगर कोई बड़ा देखता तो वह जरूर डर के मारे चीख उठता। उसे वे सच में जोखिम उठाते ही दिखाई देते। पर यासुकी-चान को तोत्तो-चान पर पूरा भरोसा था और वह खुद भी यासुकी-चान के लिए भारी खतरा उठा रही थी। अपने नन्हे-नन्हे हाथों से वह पूरी ताकत से यासुकी-चान को खींचने लगी। बादल का एक बड़ा टुकड़ा बीच-बीच में छाया करके उन्हें कड़कती धूप से बचा रहा था।

काफी मेहनत के बाद दोनों आमने-सामने पेड़ की द्विशाखा पर थे। पसीने से तरबतर अपने बालों को चेहरे पर से हटाते हुए तोत्तो-चान ने सम्मान से झुककर कहा, “मेरे पेड़ पर तुम्हारा स्वागत है।”

यासुकी-चान डाल के सहारे खड़ा था। कुछ झिझकता हुआ वह मुस्कराया। तब उसने पूछा, “क्या मैं अंदर आ सकता हूँ?”

उस दिन यासुकी-चान ने दुनिया की एक नयी झलक देखी जिसे उसने पहले कभी न देखा था। “तो ऐसा होता है पेड़ पर चढ़ना,” यासुकी-चान ने खुश होते हुए कहा।

वे बड़ी देर तक पेड़ पर बैठे-बैठे इधर-उधर की गप्पें लड़ाते रहे।

“मेरी बहन अमरीका में है। उसने बताया है कि वहाँ एक चीज होती है—टेलीविजन।” यासुकी-चान उमंग से भरा बता रहा था। “वह कहती है कि जब वह जापान में आ जायेगा तो हम घर बैठे-बैठे ही सूमो-कुश्ती देख सकेंगे। वह कहती है कि टेलीविजन एक डिब्बे जैसा होता है।”

तोत्तो-चान उस समय यह तो न समझ पाई कि यासुकी-चान के लिए, जो कहीं भी दूर तक चल नहीं सकता था, घर बैठे चीजों को देख लेने के क्या अर्थ होंगे।

वह तो यह ही सोचती रही कि सूमो पहलवान घर में रखे किसी डिब्बे में कैसे समा जायेंगे? उनका आकार तो बड़ा होता है। पर बात उसे बड़ी लुभावनी लगी। उन दिनों टेलीविजन के बारे में कोई नहीं जानता था। पहले-पहल यासुकी-चान ने ही तोत्तो-चान को उसके बारे में बताया था।

पेड़ मानो गीत गा रहे थे और दोनों बेहद खुश थे। यासुकी-चान के लिए पेड़ पर चढ़ने का यह पहला और अंतिम मौका था।

बहादुरी की परीक्षा

“वह क्या है जो डरावना है, जिससे बदबू आती है, पर जिसका स्वाद अच्छा है?”

बच्चों को यह पहेली इतनी पसंद थी कि उत्तर जानते हुए भी तोत्तो-चान और उसके साथी एक दूसरे से यही पहेली बूझते न थकते। “क्या डरावना है,

जिससे बू आती है वाली पहेली मुझसे पूछो।”

उत्तर था, “शौचालय में बैठा भूत जो मीठी रोटी खा रहा हो।”

और जिस तरह से तोमोए में शौर्य-परीक्षण हुआ उसकी भी एक अच्छी पहेली बनती, “वह क्या है जो डरावना है, खुजली करता है और सबको हंसाता है।”

जिस रात सभागार में शिविर प्रारंभ हुआ था, तंबू लगे थे, उसी रात को हेडमास्टर जी ने एक घोषणा की थी। “हम एक रात कुहोन्बुत्सु मंदिर में जाकर बहादुरी की परीक्षा करेंगे। जो भूत बनना चाहे हाथ उठा दे।”

सात लड़कों में भूत बनने की होड़ लगी। जब निश्चित शाम को बच्चे स्कूल में इकट्ठे हुए तब भूत बनने वाले बच्चे अपने साथ अपनी-अपनी हाथ से बनी पोशाकें लाये थे। तैयार होकर वे कुहोन्बुत्सु के बाग में जा चुके।

“हम तुम लोगों को इतना डरायेंगे कि तुम्हारी सिट्ठी-पिट्ठी गुम हो जाएगी।” उन्होंने चलते-चलते कहा था।

बाकी बचे हुए कोई तीस बच्चे पांच-पांच की छोटी टुकड़ियों में बंट गए। थोड़ी-थोड़ी देर के अंतर पर वे कुहोन्बुत्सु की ओर चले। उन्हें मंदिर परिसर और फिर कब्रिस्तान के चारों ओर चक्कर लगाकर स्कूल पहुंचना था।

हेडमास्टर जी ने यह तो पहले ही समझा दिया था बहादुरी की परीक्षा थी तो जरूरी, पर अगर कोई बच्चा पूरा रास्ता तय किये बिना भी स्कूल लौट आएगा तो भी कोई बात नहीं।

तोत्तो-चान मां से टार्च मांग कर लाई थी।

“खोना मत,” मां ने देते समय कहा था।

कुछ बच्चों ने कहा था कि वे भूतों को पकड़ेंगे। इसलिए वे अपने साथ तितलियां पकड़ने की जालियां लेते आए थे। दूसरों ने कहा था कि वे भूतों को बांध देंगे, इसलिए वे रस्सियां साथ लेते आए थे।

जब तक हेडमास्टर जी ने बच्चों को पूरी बात समझाई और बच्चों की टुकड़ियां बनीं, तब तक अंधेरा हो चला था। बच्चे उत्तेजना में हल्ला-गुल्ला करते स्कूल के दरवाजे से बाहर निकले। आखिर तोत्तो-चान की टुकड़ी के बाहर निकलने का समय आया।

हेडमास्टर जी ने बता दिया था कि कुहोन्बुत्सु तक पहुंचने के पहले उन्हें कोई भूत नहीं मिलेगा। पर बच्चों को बात पर पूरा भरोसा नहीं हुआ और वे डरते-ठिठकते ही मंदिर के दरवाजे तक पहुंचे। द्वारपाल की तरह देव-राजाओं की बड़ी मूर्तियां दिखने लगीं। चांदनी होने पर भी मंदिर स्थल बड़ा अंधेरा था। दिन में यही जगह बच्चों को भली लगती थी पर रात में, खासकर तब जब कभी भी कोई भूत कहीं से निकल आने वाला था, उन्हें वहां जगह डरावनी लगने लगी। हवा से पेड़ों में सरसराहट हुई। कोई बच्चा ‘उईईई’ कहकर चीखा। किसी दूसरे का पैर किसी

मुलायम सी चीज से टकराया और वह 'भूत आया' कहकर चिल्ला पड़ा। डर इतना बढ़ा कि जिस साथी का हाथ थामे बच्चा चल रहा था उसके ही भूत होने की आशंका होने लगी। तोत्तो-चान ने तय कर लिया कि वह किसी भी हालत में कब्रिस्तान तक नहीं जाएगी, क्योंकि उसी जगह तो भूत होने की आशंका थी।

और फिर बहादुरी की परीक्षा होती कैसे है यह भी उसे पता चल गया था। उसने सोच लिया कि अब लौटा जा सकता है। उसकी टुकड़ी के दूसरे बच्चे भी इसी निर्णय पर अब तक पहुंच चुके थे। उसे तसल्ली थी कि यह निर्णय उसका अकेले का न था। वे सब जितनी तेजी से उनके पांव उन्हें ले जा सकते थे, उतनी तेजी से भागे।

स्कूल लौटने पर उनसे पहले निकली बाकी टुकड़ियों को भी उन्होंने वहीं पाया। पता चला कब्रिस्तान तक पहुंचने की हिम्मत किसी की नहीं हुई थी।

ठीक उसी समय सिर पर सफेद कपड़ा ओढ़े एक बच्चा रोता हुआ शिक्षक के साथ दरवाजे से अंदर घुसा। वह उन भूतों में से था जो कब्रिस्तान में छुपकर बच्चों के आने का इंतजार कर रहे थे। वहां तो कोई पहुंचा ही न था। धीरे-धीरे उसे स्वयं इतना डर लगने लगा था कि वह रोते हुए भागा। रास्ते में इंतजार करते शिक्षक उसे साथ ले आये। सब बच्चे उसे चुप कराने की कोशिश कर ही रहे थे कि एक और रोता हुआ भूत एक रोते हुए लड़के के साथ वापस लौटा। यह भूत कब्रिस्तान में दुबका बैठा था। अचानक किसी के भागने की आहट आई। जो आया था उसे डराने जैसे ही वह उछला कि दोनों की टक्कर हो गयी। दर्द और डर के मारे दोनों हाथ थामे उलटे भागे। बच्चों को उनकी बात इतनी हास्यास्पद लगी कि वे तनाव से उबरे और उबरते ही हंसने लगे। रोने वाले भूतों का हाल अजीब था—वे कभी हंसते, कभी रोते। कुछ देर बाद तोत्तो-चान का एक सहपाठी मिगिता वापस लौटा। उसने अखबार के कागज का मुखौटा लगाया हुआ था। वह बेहद नाराज था कि उसके पास कोई पहुंचा क्यों नहीं।

“मैं इतनी देर इंतजार करता रहा,” उसने अपने हाथों और पैरों को खुजलाते हुए शिकायत की। ढेरों मच्छरों ने उसे काट खाया था।

“अरे देखो तो, भूत को ही मच्छरों ने काट लिया,” किसी ने कहा। एक बार फिर सब खिलखिलाने लगे।

“अब मैं बाकी भूतों को भी ले आता हूँ,” पांचवीं कक्षा के शिक्षक श्री माखुयामा ने चलते हुए कहा। उन्हें कुछ परेशान भूत सड़क की बत्ती के नीचे मिले। कुछ के बारे में पता चला कि वे डर के मारे घर भाग चुके हैं। वे उन सबको इकट्ठा कर स्कूल में ले आए।

उस रात के बाद तोमोए के बच्चे भूतों से नहीं डरे क्योंकि उन्होंने भूतों को खुद डरते हुए जो देखा था।

अभ्यास कक्ष

तोत्तो-चान की चाल गंभीर थी। रॉकी भी बेहद गंभीरता से चल रहा था। बीच-बीच में वह तोत्तो-चान की ओर नजर डाल लेता था। इसका एक ही अर्थ हो सकता था कि वे दोनों डैडी के अभ्यास कक्ष की ओर जा रहे होंगे। वरना बाकी समय तो तोत्तो-चान जितनी तेज हो सके दौड़ा करती, या चलते-चलते इधर-उधर तांक-झांक करती थी, या फिर लोगों के बगीचों की मेड़ों के नीचे से सरकती रहती।

डैडी का अभ्यास कक्ष घर से लगभग पांच मिनट चलने पर ही आ जाता था। वे आर्कैस्ट्रा के मुखिया थे। इसका मतलब था कि वे वायलिन बजाते थे। जिस बात से तोत्तो-चान को हर बार अचंभा होता, वह यह थी कि जब संगीत का कार्यक्रम समाप्त हो जाता और लोग तालियां बजाना बंद कर चुकते तो पसीने से लथपथ संगीत निर्देशक श्रोताओं की ओर मुड़ता, अपने ऊंचे स्थान से उतरता और जाकर डैडी से हाथ मिलाता। तब डैडी और उनके दूसरे साथी खड़े हो जाते थे।

“वे हाथ क्यों मिला रहे हैं ?” तोत्तो-चान ने पहली बार फुसफुसा कर मां से पूछा था।

“निर्देशक अपने सभी साथियों को अच्छा संगीत बजाने के लिए धन्यवाद देना चाहते हैं। डैडी को उन सबका प्रतिनिधि मानकर धन्यवाद दे रहे हैं।” मां ने समझाया था।

तोत्तो-चान को अभ्यास कक्ष में जाना इसलिए पसंद था कि यह जगह स्कूल से बिल्कुल ही अलग थी। स्कूल में तो ज्यादातर बच्चे होते थे। पर यहां सिर्फ बड़े। वे तरह-तरह के साज बजाया करते थे और फिर निर्देशक श्री रोजेनस्टॉक की जापानी भी तो बड़ी अजीबो-गरीब थी।

जोसेफ रोजेनस्टॉक यूरोप के जाने-माने आर्कैस्ट्रा निर्देशक थे। यह डैडी ने ही बताया था। लेकिन हिटलर नामक एक आदमी ने यूरोप में गड़बड़ी फैलानी शुरू कर दी तो वे वहां से निकलकर जापान में आ बसे ताकि अपना संगीत का काम जारी रख सकें। डैडी श्री रोजेनस्टॉक का बेहद सम्मान करते थे। तोत्तो-चान तब विश्व-परिस्थितियों की बात नहीं समझती थी। हिटलर ने तब ज्यू लोगों पर अत्याचार आरंभ किये थे। अगर ऐसा न होता तो श्री रोजेनस्टॉक कभी भी जापान न आते। और तब कोस्काक यामादा की शुरू की हुई आर्कैस्ट्रा टीम कभी इतने कम समय में इतनी प्रगति न कर पाती जितनी एक अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त निर्देशक के साथ यह टीम कर पाई। रोजेनस्टॉक अपनी टीम से उस स्तर की उम्मीद करते थे जो वे यूरोप के किसी प्रथम श्रेणी के वाद्य-वृंद से करते। यही कारण था कि हर अभ्यास के बाद श्री रोजेनस्टॉक रो पड़ते थे।

“मैं इतनी कोशिश करता हूँ, पर आप लोगों पर कोई असर ही नहीं होता।”

हाइदो साइतो ही सबसे अच्छी जर्मन बोलते थे। वे सैलो बजाया करते थे। जिस समय रोजेनस्टॉक विश्राम करते उस समय वे निर्देश भी देते थे। वे ही सबकी ओर से उत्तर देते, “हम अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं। पर हमारी तकनीक अभी कमजोर है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि हम जान-बूझकर भूल नहीं करते हैं।”

स्थिति की पेचीदगी तोत्तो-चान समझ न पाती, पर यह तो देखती ही थी कि अकसर श्री रोजेनस्टॉक का चेहरा लाल हो जाता। इतना, कि लगता जैसे उसके सिर पर से भाप ही निकल रही हो। और ऐसे में वे जर्मन भाषा में चिल्ला पड़ते। उस वक्त तोत्तो-चान खिड़की पर से अपनी जगह छोड़ देती, जहां वह अपनी हथेलियों पर टुडू टिकाए संगीत सुना करती थी। रॉकी के साथ वहां से खिसक कर तब वह कोई दूसरी जगह ढूंढ़ लेती और फिर से संगीत प्रारंभ होने का इंतजार करने लगती

पर औमतौर पर श्री रोजेनस्टॉक ठीक से पेश आते थे। तोत्तो-चान को उनकी जापानी बोली बेहद मजेदार लगती थी।

“बहुत अच्छे कुरोयांगी-सान,” वे अच्छा बजाने पर अपने विचित्र उच्चारण



में कहते। या कहते, “अद्भुत !”

तोत्तो-चान कभी भी अभ्यास के दौरान कमरे के अंदर नहीं गयी थी। उसे खिड़की से ही झांककर संगीत सुनना पसंद था। इसलिए जब सब बीच में सुस्ताने को रुकते और सिगरेट पीने बाहर आते तो डैडी उसे अकसर वहां पाते।

“ओह, तो तुम यहां हो तोत्तोको !” वे कहते।

अगर श्री रोजेनस्टॉक उसे वहां देख लेते तो अपने विचित्र उच्चारण में कहते “गुद मार्निंग” या “गुद दे”। इसके बाद वे उसे किसी छोटे बच्चे की तरह ऊपर उठाकर उसके गाल पर अपना गाल रख देते। उसे यह थोड़ा अटपटा तो जरूर लगता पर बेहद अच्छा लगता था। वे चांदी की पतली कमानी का चश्मा पहनते थे। नाक उनकी बड़ी सी थी। और खुद थे नमटे से। पर उनका चेहरा सुंदर था। एक कलाकार के रूप में उन्हें देखते ही पहचाना जा सकता था।

तोत्तो-चान को अभ्यास कक्ष अच्छा लगता था। वह पश्चिमी शैली में बना हुआ, लेकिन थोड़ा टूटा-फूटा सा था।

संजोकु दरिया से बहने वाली हवा संगीत को अपने साथ दूर-दूर तक उड़ा ले जाती। कई बार सोन मछली (किंग्यो) के फेरी वाले की हांक भी संगीत में घुल-मिल जाती।



किंग्यो,

ई किंग्यो।

यात्रा गर्म सोते की

गर्मी की छुट्टियां खत्म हुई और अंततः गर्म सोते की यात्रा का दिन आ गया। तोमोए के सभी विद्यार्थी उसे स्कूल की सबसे बड़ी घटना मानते थे। बहुत सारी चीजों से मां को आश्चर्य नहीं होता था। पर जब एक दिन तोत्तो-चान ने स्कूल से लौटकर पूछा, “मैं भी क्या दूसरे बच्चों के साथ गर्म सोते की यात्रा पर जा सकती हूँ ?” तो वह विस्मय से भर उठी। उसने बड़े-बुजुर्गों की टोलियों के गर्म सोते की यात्रा पर जाने की बात तो सुनी थी, पर पहली कक्षा के बच्चों को वहां ले जाने की बात नहीं। जब उसने ध्यान से हेडमास्टर जी की चिट्ठी पढ़ ली तो उसका मन भी इस श्रेष्ठ योजना से प्रभावित हुए बिना न रहा। योजना थी “समुद्र किनारे स्कूल की।” शिजुओका में ईजु प्रायद्वीप था। वहां एक छोटी-सी जगह थी तोई। तोई

में ठीक समुद्र के बीच था एक गर्म सोता। यात्रा में पूरे तीन दिन और दो रातें लगने वाली थीं। तोमोए के एक छात्र के पिता का तोई में एक अवकाश-घर था। वहां पहली से छठी कक्षा तक के पूरे 50 बच्चे एक साथ रहने वाले थे। मां तुरंत मान गयी।

तोमोए के सभी छात्र जाने से पहले निश्चित दिन स्कूल में इकट्ठे हुए।

“तो, अब ध्यान से सुनो,” हेडमास्टर जी ने सब बच्चों के इकट्ठे हो जाने पर कहा। “हम पहले ट्रेन से और फिर पानी के जहाज से यात्रा करेंगे। मैं यह नहीं चाहता कि तुम में से कोई भी खो जाए। सब समझ गए न ? तो ठीक है। अब चलते हैं।”

बस यही कहा था उन्होंने। जब वे जियुगाओका के स्टेशन पर तोक्यो की गाड़ी पकड़ने पहुंचे तो बच्चे व्यवस्थित थे। कोई बच्चा डिम्बे में इधर-उधर दौड़ नहीं रहा था। बातें भी वे सिर्फ अपने पास बैठे बच्चों से कर रहे थे। तोमोए में बच्चों को किसी भी शिक्षक ने एक बार भी कतार बांधकर ढंग से चलने को नहीं कहा था। खाते समय इधर-उधर कूड़ा न डालने की बात का भी जिक्र नहीं हुआ था। पर कुछ बातें स्कूल में हर दिन अपने आप सहज ही उभर कर सामने आती रहती थीं। जैसे, अपने से छोटे या कमजोर को धक्का लगाना अच्छा नहीं है। हुल्लड़ और अव्यवस्था पर स्वयं को ही शर्म आनी चाहिए। कहीं कचरा पड़ा हो तो उसे उठा देना चाहिए। ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहिए जिससे दूसरों को असुविधा हो। आश्चर्य की बात तो यह थी कि तोत्तो-चान जो कुछ महीने पहले अपने पिछले स्कूल में बैड़वालों को खिड़की के पास बुलाकर पूरी कक्षा को अस्त-व्यस्त कर डालती थी, वह भी अपनी सीट पर बैठकर शांति से अपना काम करती रहती थी। अगर उसके पिछले स्कूल की कोई भी शिक्षिका उसे रेलगाड़ी में यों शांत बैठा देखती तो जरूर कह उठती, “यह बच्ची कोई दूसरी ही होगी।”

जब वे नुमाजु में पानी के जहाज में बैठे तो वह ठीक वैसा ही निकला जैसी उसकी कल्पना बच्चों ने की थी। जहाज बहुत बड़ा नहीं था। बच्चे इतने उत्सुक थे कि उन्होंने जहाज का कोना-कोना छान मारा। आखिर जहाज जब चलने लगा तो बच्चों ने बंदरगाह पर खड़े लोगों से हाथ हिला-हिलाकर विदा ली। कुछ ही दूर जाने पर बरसात शुरू हो गयी। सभी बच्चे अंदर चले गये। जल्दी ही समुद्र अशांत हो गया। तोत्तो-चान और उसके कुछ साथियों को तो चक्कर आने लगे। बच्चों में से एक बड़ा लड़का खड़ा हुआ और यों स्वांग करने लगा मानो वह संतुलक हो। जैसे ही जहाज एक ओर झुकता वह ‘ओहो’ कहता हुआ उससे उलटी ओर दौड़ता। तब जहाज दूसरी ओर झुकता वह फिर ‘ओहो’ कहता विपरीत दिशा पकड़ता। यह इतना मजेदार दृश्य था कि बच्चे अपनी तकलीफ भुलाकर हंसने लगे। जब जहाज अंततः तोई पहुंचा, तब भी वे हंस ही रहे थे। सबसे मजेदार बात यह

रही कि जब यात्रा समाप्त होने को आई तो सब बच्चे स्वस्थ महसूस कर रहे थे, लेकिन वह ‘ओहो’ वाला लड़का अस्वस्थ होने लगा था।

समुद्र के ठीक किनारे पर बसा तोई एक शांत और सुंदर गांव था। उसके चारों तरफ जंगल थे। कुछ देर आराम कर लेने के बाद शिक्षक बच्चों को समुद्र के किनारे ले गए। यह स्कूल के तरण-ताल जैसा नहीं था, इसलिए सभी बच्चों ने अपनी-अपनी तैरने की पोशाकें पहन लीं।

समुद्र का गर्म सोता एक करिश्मा ही था। सोते को बाकी समुद्र से अलग करने की कोई रेखा तो बनी नहीं थी। सोते के पास पानी बच्चों के गले तक आता था। पानी बिल्कुल गर्म था, जैसा स्नानघर में होता है। पर उसके पंद्रह फुट दाएं-बाएं होते ही पानी ठंडा होने लगता। दूरी जितनी बढ़ती जाती, पानी उतना ठंडा होता जाता। तब पता चलता कि हां, यहां सच में समुद्र है। इधर-उधर तैरते-तैरते जैसे ही बदन ठंडा हो जाता तो लौटकर सोते के पास आना काफी था। ऐसा करते ही तुरंत लगने लगता मानो घर में ही नहा रहे हों। अजीब सा नजारा था। तैरने की टोपियां लगाए बच्चे समुद्र में तैरते दिख रहे थे। पर सोते में बच्चे घेरा बनाए मजे से बातें कर रहे थे। उन्हें कोई भी देखता तो कहता—“अरे, छोटे-छोटे बच्चे भी गर्म सोते में आते ही बिल्कुल बड़ों जैसा व्यवहार क्यों करते हैं।”

उन दिनों वहां पर्यटकों की भीड़-भाड़ नहीं थी। ऐसा लगता था मानो वे सब किसी निजी तट पर ही हों। बच्चों ने इस नए अनुभव का आनंद उठाया। वे दिन भर ज्यादातर समय पानी में बिताकर जब शाम को अवकाश-घर लौटे तो उनकी उंगलियां झुर्रियों से भरी हुई थीं।

हर रात जब रजाइयों में बच्चे दुबक जाते, तब वे भूतों की कहानियां सुनाते। तोत्तो-चान और उसकी कक्षा के दूसरे बच्चे इतने डर जाते कि उनकी रुलाई छूटने लगती। पर आंसुओं के बावजूद वे कहते, “फिर आगे क्या हुआ ?”

स्कूल में लगे शिविर या बहादुरी परीक्षा से अलग तोई स्या में बिताए वे तीन दिन जीवन के सत्यानुभव के दिन थे। उदाहरण के लिए वहां वे बारी-बारी से खाने के लिए साग-सब्जी और मछली खरीदने जाते और जब अजनबी उनसे पूछते कि वे किस स्कूल के बच्चे हैं, किस कक्षा में पढ़ते हैं, तो उन्हें शिष्टता से उत्तर देना पड़ता। कुछ बच्चे जंगल में ऐसे भटके कि वे खो ही गए। कुछ दूसरे तैर कर इतनी दूर निकल गए कि वापस लौटना ही मुश्किल हो गया। एक बार तो सब डर गए। कुछ के पैर तट पर पड़े कांच के टुकड़ों से कट गए। हरेक को इन परिस्थितियों में यथाशक्ति मदद करनी पड़ी।

लेकिन उल्लास-आनंद की कमी न थी वहां। आसपास जंगल था। एक दुकान थी जहां से चबेना खरीदा जा सकता था। वे एक ऐसे आदमी से भी मिले

जो लकड़ी की एक नाव बना रहा था। नाव का ढांचा साफ-साफ दिखने लगा था। बच्चे हर सुबह यह देखने दौड़ते कि नाव कितनी बनी गयी। तोत्तो-चान को उस आदमी ने लकड़ी की एक बड़ी-सी मुड़ी हुई छीलन भी दी थी।

“यादगार के लिए एक सामूहिक फोटो कैसा रहेगा ?” हेडमास्टर जी ने लौटने वाले दिन पूछा। बच्चों का एक साथ कोई चित्र खिंचा ही न था। वे भी जोश में आ गए। पर जैसे ही शिक्षिका कैमरे के साथ तैयार हुई कि किसी को पेशाव करने भागना पड़ा। तब कोई चेता कि उसने जूते ही उल्टे पहने हैं। आखिरकार जब शिक्षिका ने पूछा, “क्या अब सब तैयार हैं ?” तब कुछ बच्चे जमीन पर लंबलेट मिले। वे थककर ढेर हो चुके थे। इस प्रकार, फोटो खिंचवाने में काफी समय लग गया।

लेकिन समुद्र की पृष्ठभूमि में खिंचा वह चित्र, जिसमें हर बच्चा अपनी मर्जी से बैठा था, उन सब के लिए एक खजाना बन गया। उसे देखते ही सालों पुरानी यादें तैरती आतीं। जहाज की यात्रा, गर्म सोता, भूतों की कहानियां और ‘आहो’ लड़का। तोत्तो-चान को अपनी ये पहली गर्मी की छुट्टियां कभी-कभी न भूलें।

यह उन दिनों की बात है जब तोक्यो में घरों के पास वाले तालाब में चिंगट होते थे, और कूड़ा-गाड़ियों को बैल खींचा करते थे।

ताल व्यायाम

गर्मी की छुट्टियां खत्म हुईं। दूसरा सत्र प्रारंभ हुआ। जापान में स्कूलों का नया साल अप्रैल में शुरू होता है। साथ-साथ छुट्टियां बिताने के कारण तोत्तो-चान की अपनी कक्षा के बच्चों के अलावा दूसरे बच्चों से भी अच्छी दोस्ती हो गयी थी। इससे उसे तोमोए गाकुएन और अच्छा लगने लगा था।

तोमोए में कक्षाएं लगने का तरीका दूसरे स्कूलों से भिन्न था। संगीत पर वहां विशेष बल दिया जाता था। संगीत की कक्षाएं वहां तरह-तरह से लगा करती थीं। हर दिन लगने वाली एक कक्षा होती थी ताल व्यायाम (यूरिथमिक्स) की। स्विस् संगीत शिक्षक एमिले जैक्स-डेलक्रोज ने ताल शिक्षा का एक नया तरीका ढूंढ निकाला था। उनकी यह पद्धति 1904 में ज्ञात हुई। जल्दी ही यह पद्धति पूरे यूरोप और अमरीका में काम आने लगी थी। उसके प्रशिक्षण और शोध के लिए जगह-जगह संस्थान बनने लगे थे। तोमोए में ताल व्यायाम की पद्धति किस तरह अपनाई गयी, उसकी भी एक कहानी है।

तोमोए गाकुएन को शुरू करने से पहले हेडमास्टर सोसाकु कोबायाशी यह देखने के लिए यूरोप गए थे कि वहां बच्चे कैसे शिक्षित किये जाते हैं। वहां देरों प्राथमिक शालाएं उन्होंने देखीं। अनेक शिक्षाविदों से चर्चा की। पेरिस में वे डेलक्रोज

से मिले। डेलक्रोज एक अच्छे संगीतकार भी थे और शिक्षाविद् भी।

डेलक्रोज ने एक लंबे समय तक इस बात पर विचार किया था कि बच्चों को किस तरह केवल कान से नहीं दिल और दिमाग से भी संगीत सुनना सिखाया जाए। उन्हें यह कैसे समझाया जाए कि संगीत कोई नीरस निर्जीव विषय मात्र नहीं है; बल्कि उसमें भी गति है। इस सबके प्रति बच्चों की संवेदनशीलता कैसे विकसित की जाए ?

अपने चिंतन के दौरान उन्होंने गौर किया कि बच्चे किस तरह उछलते-कूदते हैं, या पैर पटक कर धमधम चलते हैं। तब उनके मन में यह विचार उपजा कि कुछ ऐसी कसरतें बनाई जाएं जो लयात्मक हों। इन्हीं को बाद में यूरिथमिक्स का नाम दिया गया।

कोबायाशी पेरिस में डेलक्रोज के स्कूल में साल भर से भी अधिक रहे। पद्धति को ठीक से सीखा। दूसरे जापानवासी भी डेलक्रोज से प्रभावित हुए हैं, जैसे—जापानी संगीतकार कोस्काक यामादा; जापान में आधुनिक नृत्य के जन्मदाता बाकु इशी; काबुकी अभिनेता इचिकावा सदनजी द्वितीय; आधुनिक नाटक प्रारंभ करने वालों में से काओरू ओसन्नाई; नर्तकी मिचिओ इतो। इन सबका मानना था कि डेलक्रोज की पद्धति कई कलाओं की आधारशिला है। पर सोसाकु कोबायाशी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इस पद्धति का प्राथमिक शिक्षा में उपयोग किया।

अगर आप उनसे यह पूछें कि आखिर यह यूरिथमिक्स है क्या बला, तो उनका जवाब होगा, “यह ऐसा खेल है जो अंग-संचालन को परिष्कृत करता है। ऐसा खेल, जो दिमाग को यह सिखाता है कि शरीर को किस तरह काम में लाया जाए, किस तरह नियंत्रित किया जाए। ताल व्यायाम पूरे व्यक्तित्व को ही लयात्मक बना डालता है। और लयात्मक व्यक्तित्व होता है सुंदर और बलिष्ठ। और तो और, ऐसा व्यक्तित्व सभी प्राकृतिक नियमों का पालन करता है।”

तोत्तो-चान की कक्षा ने अपना प्रशिक्षण शरीर को लय-ताल सिखाने से प्रारंभ किया था। हेडमास्टर जी सभागार के छोटे से मंच पर बैठे पियानो बजाते। तब बच्चे जहां भी खड़े होते, संगीत की लय के साथ चलना शुरू कर देते। वे जैसी उनकी इच्छा होती वैसे चल सकते थे। बस इतना भर ख्याल उन्हें रखना पड़ता कि वे आपस में टकरा न जाएं। इसलिए अक्सर वे एक घेरे में एक ही दिशा में चलते। अगर उन्हें लगता कि संगीत में दो मात्राएं हैं तो वे ताल में चलने के साथ अपने हाथ भी उठाते-गिराते—ठीक किसी संगीत निर्देशक की तरह। पैर जोर से न पटकने की ताकीद भी उन्हें थी। पर इसका मतलब यह न था कि वे बैले-नर्तकों की तरह पैर की उंगलियां सिकोड़ कर चलें। बल्कि उन्हें हिदायत यह थी कि वे अपने शरीर को पूरी तरह ढीला छोड़ दें। तब पैर यों चलायें मानो उन्हें घसीटना पड़ रहा हो। खास बात तो यह थी कि उन्हें पूरी सहजता के साथ चलना था।

इसलिए वे जैसे चाहते चल सकते थे। अगर संगीत की लय दो मात्रा से बदल कर तीन की हो जाती तो वे अपनी गति और हस्त-संचालन को बदल डालते। संगीत के तेज और धीमे होने के साथ उनकी चाल बदल जाती। उन्हें अपने हाथों को छह मात्राओं तक की लय के साथ उठाना-गिराना भी सीखना पड़ता था। चार मात्रा तक चलना कठिन न था। उनके हाथ तब 'नीचे, अपने इर्द-गिर्द, बगल की ओर, और तब ऊपर' की ओर रहते।

पर पांचवीं मात्रा के आते ही :

'नीचे, अपने इर्द-गिर्द, सामने बाहर को, बगल की ओर तथा तब ऊपर' करना पड़ता।

छह मात्राओं पर उनके हाथ चलते :

'नीचे, अपने इर्द-गिर्द, सामने बाहर को, एक बार फिर अपने इर्द-गिर्द और तब ऊपर।'

जब लय बार-बार बदलती रहती, तो यह सब करना काफी कठिन होता।

पर, इससे भी कठिन बात तब होती जब हेडमास्टर जी आवाज लगा कर कहते, "प्यानो पर लय बदल जाने पर भी जब तक मैं न कहूँ तुम लोग अपनी चाल न बदलना।" मान लीजिए कि बच्चे दो मात्रा की लय में चल रहे हों और अचानक संगीत बदल कर तीन मात्रा का हो जाए, पर बच्चे तीन कदम का संगीत सुनकर भी दो कदम की ही चाल चलते रहें। बहुत ही कठिन था ऐसा करना। पर हेडमास्टर जी का कहना था कि बच्चों की एकाग्रता विकसित करना भी जरूरी बात है।

बड़ी देर बाद वे कहते, "अब बदलो अपनी चाल।"

तब बच्चे राहत की सांस लेते हुए तुरंत तीन कदम की चाल पर आ जाते। पर यही समय होता था जब उन्हें खास ध्यान रखना पड़ता था। दो मात्रा पर चलते रहने के बाद दिमाग और मांसपेशियों को तीन मात्रा में आने में समय लगता था। और फिर संगीत अचानक पांच मात्रा में भी बदल सकता था। शुरू में सबके हाथ-पैर गड़बड़ाने लगते। वे चिल्लाते, "रुकिए, मास्टर जी ज़रा रुकिए।" पर रोज-रोज अभ्यास से धीरे-धीरे व्यायाम में रस आने लगा। इतना कि बच्चे अपने आप भी ताल-लय बदलने के सुझाव भी देने लगे।

वैसे तो बच्चे अकेले ही चलते थे। पर कभी-कभी वे हाथ पकड़ कर जोड़ी भी बना लेते। अगर दो ही मात्रा में चलना होता तो वे आंखें बंद कर चलने की चेष्टा करते। मनाही बस एक ही चीज की थी—बातें करने की।

कई बार अभिभावकों और शिक्षकों की गोष्ठी में आई माताएं खिड़की से झांकतीं। उन्हें भी आनंद आता क्योंकि हर बच्चा बड़ी सहजता से अपने हाथ-पैर चलाता या उछलता-कूदता दिखाई देता।

इस प्रकार ताल व्यायाम का पहला ध्येय था बच्चे के शरीर और दिमाग को ताल के प्रति चेतन बनाना। इससे जन्मती थी शरीर और आत्मा की सुसंगति। और अंततः कल्पनाशक्ति व रचनात्मकता का विकास होता था।

जिस दिन पहली बार तोतो-चान स्कूल आई थी तो उसने गेट पर स्कूल का नाम पढ़कर मां से पूछा था, "तोमोए के माने क्या होते हैं?"

तोमोए असल में अर्द्धविराम के आकार का एक पुरातन-चिह्न है। हेडमास्टर जी ने दो तोमोए आकारों—एक काला और दूसरा सफेद—को जोड़कर एक पूरा गोला बनाया था। यही चिह्न बच्चों की शिक्षा में उनके लक्ष्य का भी प्रतीक था : शरीर व मस्तिष्क का समान विकास जिससे पूर्ण सामंजस्य तक पहुंचा जा सके।

यूरियमिक्स को अपनी शाला के पाठ्यक्रम में रखने के पीछे भी उनकी यही मान्यता थी कि बच्चों के व्यक्तित्व पर ताल व्यायाम का प्रभाव पड़े और वे सहजता से विकसित हों।

हेडमास्टर जी समसामयिक शिक्षा के आलोचक थे क्योंकि उसमें लिखित शब्द पर बहुत जोर था। उनका मानना था कि यह गलत है। ऐसा करने पर बच्चे का ऐंद्रिय-बोध, उसकी सहज-ग्रहणशीलता और अंतर्मन की आवाज सब क्षीण हो जाते हैं जबकि वास्तव में ये ही उसके लिए सही प्रेरणा के स्रोत बन सकते हैं।

कवि बाशो ने कभी लिखा था :

सुनों ! एक मेंढक
कूदता है मौन में
एक पुरातन ताल के।

पर कवि बाशो के पहले भी ना जाने कितनों ने ताल में कूदते मेंढकों को देखा होगा। वॉट और न्यूटन भी संसार भर में पहले व्यक्ति नहीं थे जिन्होंने केतली में उबलते पानी या पेड़ से गिरते सेब को देखा हो।

आंखें तो हों पर सौंदर्य दिखे ही नहीं; कान हों पर संगीत न सुनाई दे; दिमाग हो पर सत्य अबूझा ही रह जाए; दिल हो पर ना वह दहले, ना ही दहके। इन्हीं सब स्थितियों से डरना चाहिए। ऐसा हेडमास्टर जी कहते थे।

और तोतो-चान, वह तो इसेडोरा डंकन की तरह ही नंगे पैर उछलती-दौड़ती, बेहद खुश रहती। उसे विश्वास ही न होता कि यह सब भी स्कूल जाने का हिस्सा हो सकता है।



“मुझे सिर्फ यही चाहिए !”

मंदिर मेले में जाने का तोतो-चान का यह पहला मौका था। उसके पहले वाले स्कूल के पास ही सेंजोकु ताल के बीचों-बीच एक छोटा-सा द्वीप था। द्वीप में सौंदर्य और संगीत की देवी बेंटेन का मंदिर था। वहां लगने वाले वार्षिक मेले की रात वह मां और डैडी के साथ झुटपुटे प्रकाश में सड़कें-गलियां पार कर रही थी। मेले के पास पहुंचते ही अंधेरी रात अचानक प्रकाश की चकाचौंध से जगमगा उठी। तोतो-चान ने हर दुकान में झांक-झांक कर देखा। तरह-तरह की आवाजों—खड़खड़, चरचर—और खुशबुओं से भरा था वह मेला। तोतो-चान के लिए हर चीज नयी और अजीब थी।

वहां खिलौनों के हुक्के थे जिन्हें गुड़गुड़ाने पर पीपरमेंट का धुआं गले में पहुंचता था। इन हुक्कों पर कुत्तों-बिल्लियों के चित्र बने थे। लालीपॉप और बुढ़िया के बाल भी थे। बांस की बंदूकें थीं, जिनसे खास तरह की लकड़ी की खपच्चियां छोड़ने पर ‘धांय’ की आवाज होती थी।

सड़क के पास ही खड़ा एक आदमी तलवारें और कांच के टुकड़े निगल रहा था। एक दूसरा आदमी एक पाउडर बेच रहा था। किसी कटोरे के किनारे पर उसे मलने के बाद उससे आवाजें निकाली जा सकती थीं। जादुई अंगूठियां भी मेले में बिक रही थीं जिनसे पैसा गायब हो जाता था। अदृश्य चित्र थे जो सूरज के प्रकाश में उभर आते थे। कागज की कलियां थीं जो पानी में डालने पर खिलने लगतीं। तोतो-चान चलती ही जा रही थी। उसकी आंखें इधर-उधर मंडराती सब कुछ अंदर सोखती जा रही थीं। हठात् वह रुकी।

“अरे देखो !” एक छोटी-सी टोकरी में रखे चीं-चीं करते पीले चूजों को देखकर वह बोली। “मुझे भी एक चाहिए,” उसने मां-डैडी को अपनी ओर खींचते हुए कहा, “एक मुझे भी ले दो” उसने चिरौरी की।

चूजे भी तोतो-चान की ओर मुड़े, अपने नन्हे सिर उन्होंने ऊपर को उठाए और पूरा शरीर हिलाते-डुलाते जोर से चीं-चीं करने लगे।

“कितने प्यारे हैं, हैं ना ?” तोतो-चान को लगा कि उसने इतनी प्यारी कोई भी चीज पहले कभी देखी ही नहीं थी। वह वहीं नीचे बैठ गयी।

“प्लीज,” उसने फिर विनती करते हुए मां-डैडी को देखा। पर उसे आश्चर्य हुआ कि वे उसे वहां से घसीट कर दूर ले जाना चाहते थे।

“पर आपने तो कहा था कि मैं मेले से कुछ भी खरीद सकती हूँ। मुझे सिर्फ यही चाहिए !”

“ना, बेटे,” मां ने धीमे से कहा। “ये छोटे-छोटे चूजे बेचारे जल्दी ही मर जाएंगे !”

“क्यों ?” तोतो-चान ने रोते हुए पूछा।

डैडी उसे दुकानदार से ज़रा दूर ले गए और समझाते हुए बोले, “वे अभी प्यारे लगते हैं तोत्की। पर वे बड़े कमजोर हैं। ज्यादा समय जिंदा नहीं रह सकेंगे। और जब वे मर जाएंगे तो तुम और ज्यादा रोओगी। इसीलिए हम तुम्हें चूजे नहीं लेकर देना चाहते।” पर तोतो-चान का मन तो चूजे में ही अटक चुका था। वह कुछ भी सुनने को तैयार न थी।

“मैं उसे मरने नहीं दूंगी। मैं उसकी देख-रेख करूंगी।”

मां और डैडी उसे दूर ले जाने की कोशिश करते रहे पर वह चाहत भरी आंखों से चूजों को देखती रही और चूजे चिंचियाते हुए उसे देखते रहे। तोतो-चान ने ठान लिया था कि अगर उसे कुछ चाहिए तो बस एक चूजा ही। वह बराबर चिरौरी करती रही, “मुझे एक चूजा ले दीजिए !” पर मां और डैडी भी दृढ़ थे।

“हम तुम्हें चूजा नहीं खरीद कर दे सकते क्योंकि उससे तुम्हें बाद में रोना पड़ेगा !”

तोतो-चान अब दहाड़ें मार-मार कर रोने लगी और घर की तरफ चल दी।

उसकी आंखों से गंगा-जमुना बह रही थीं। जब वे अंधेरी सड़क पर वापस पहुंचे तो वह इतना सुबक रही थी कि उसका पूरा शरीर हिल रहा था। “मुझे किसी चीज को लेने की इतनी इच्छा कभी नहीं हुई। अब मैं कभी भी कुछ भी लेकर देने को नहीं कहूंगी। बस मुझे एक चूजा ले दो।”

और आखिर मां-डैडी को उसकी बात माननी पड़ी।

बरसात के बाद मानो सूरज चमक उठा हो।

छोटे से डिब्बे में, तोत्तो-चान दो छोटे-छोटे चूजों को लिये मुस्कान बिखरेती चल रही थी।

अगले ही दिन मां ने बड़ई से एक खास डिब्बा बनवाया, जिसमें बिजली का लट्टू जलता था, ताकि चूजे गर्म रहें। तोत्तो-चान दिन भर उन्हें निहारती रहती। पीले-पीले चूजे बेहद प्यारे थे। पर चौथे दिन एक ने चलना-फिरना बंद कर दिया। और पांचवें दिन दूसरे ने भी। वह उन्हें पुचकारती रही, उनसे बतियाती रही, पर उनके मुंह से चूं तक नहीं निकली। वह देर तक पास बैठी इंतजार करती रही पर उनकी आंखें नहीं खुलीं। जैसा मां-डैडी ने कहा था, वैसा ही हुआ। मन ही मन में रोते-रोते उसने बाग में एक गड्ढा खोदा। दोनों को वहां गाड़ा। उस जगह कुछ फूल रहे। जिस डिब्बे में उन्हें रखा गया था, वह अब सूना और बहुत बड़ा लग रहा था। कोने में पड़े एक पीले पंख को देख उसे उनका मेले में चिंचियाना याद हो आया। वह दांत भीचकर निश्शब्द रोने लगी।

उसे किसी भी दूसरी चीज को पाने की इतनी जबरदस्त इच्छा कभी नहीं हुई थी। और वे ही इतनी जल्दी मर गए ! कुछ खोने और जुदाई का यह उसका पहला अनुभव था।

सबसे खराब कपड़े

हेडमास्टर जी बच्चों के माता-पिता से बराबर यह कहा करते थे कि वे बच्चों को स्कूल में सबसे खराब कपड़े पहना कर भेजें। ऐसा वे इसलिए कहते ताकि बच्चे खेलते समय कपड़ों को कीचड़ में सान डालें या फाड़ बैठें तो किसी को कोई तकलीफ न हो। उन्हें लगता था कि बच्चों को कपड़े गंदे करने या फाड़ने के लिए डांटना या डांट के डर से बच्चों का खेलों में हिस्सा न लेना शर्मनाक बातें हैं। तोमोए के पास ही दूसरी प्राथमिक शालाएं भी थीं। वहां बच्चियां नौसेना की पोशाक जैसी यूनिफार्म पहनतीं और लड़के ऊंची कालर के जैकेट और निकर पहनते। तोमोए के बच्चे अपने साधारण कपड़े पहनते और उनके शिक्षक उनके कपड़ों की चिंता किये बिना उन्हें जी भर कर खेलने देते। आज की तरह उन दिनों जींस की पैंटें तो बनती न थीं। सो सभी लड़कों की पैंटों पर थैगलियां सिली होती थीं। लड़कियों

की स्कर्टें भी सबसे टिकाऊ कपड़े की बनी होती थीं।

तोत्तो-चान का मनपसंद खेल था लोगों के बगीचों तथा खाली जगहों की बाड़ों के नीचे से सरकना। इसलिए उसके लिए तो कपड़ों की चिंता न करना ही सुख की बात थी। उन दिनों बाड़ें कंटीले तारों की बनी होती थीं। कड़ियों में तो कंटीले तार बिल्कुल जमीन तक लगे होते थे। उनके नीचे से निकलने के लिए बिल्कुल किसी कुत्ते की तरह जमीन खोदनी पड़ती थी। सावधानी बरतने के बावजूद तोत्तो-चान के कपड़े कंटीले तारों में उलझकर फट ही जाते थे। एक बार तो उसकी मलमल की एक फ्रॉक ऊपर से नीचे तक तार-तार हो गयी थी। फ्रॉक थी तो पुरानी, पर उसे पता था कि मां को वह बेहद पसंद है। तोत्तो-चान बार-बार सोचती रही कि मां से आखिर क्या कहे ? यह बताने की उसकी बिल्कुल भी इच्छा न थी कि फ्रॉक असल में कंटीले तारों में उलझ कर फटी है। उसने सोचा कि कोई झूठ बोलना ही बेहतर होगा ताकि मां को लगे कि फ्रॉक के फटने में उसका कोई दोष न था। उसने तब मां को कुछ ऐसी कहानी सुनाई :

“मैं जब सड़क पर जा रही थी,” उसने घर पहुंच कर झूठी कहानी गढ़ी। “अचानक बहुत से बच्चों ने मुझ पर छुरे फेंके। मैं उन्हें पहचानती तक नहीं। इसीलिए यह फ्रॉक ऐसे फट गयी।” पर कहानी सुनाते समय वह बराबर यह सोच रही थी कि अगर मां ने कोई सवाल पूछा तो वह क्या जवाब देगी।

पर मां ने बस इतना भर कहा, “अरे, तब तो तुम्हें बहुत बुरा लगा होगा।”

तोत्तो-चान ने राहत की सांस ली। उसे लगा मां जरूर यह समझ गयी है कि ऐसी परिस्थिति में पड़कर अगर तोत्तो-चान से मां की पसंदीदा फ्रॉक फट जाती है तो इसमें उस बेचारी का क्या दोष ?

पर जाहिर है कि मां ने छुरों वाली कहानी पर कतई विश्वास नहीं किया था। पीठ पर फेंके गए छुरों से आखिर चोटें भी तो लगतीं। और फिर तोत्तो-चान घटना से डरी भी न थी। मां को विश्वास था कि उसने यह कहानी बनाई है। पर तोत्तो-चान के लिए ऐसी झूठी कहानी गढ़ना असामान्य बात थी। मां यह समझ गयी कि फ्रॉक के फटने का तोत्तो-चान को बेहद अफसोस है। तभी उसे कहानी बनानी पड़ी है। पर मां एक बात काफी समय से जानना चाह रही थी और उसे लगा कि यह सही मौका है।

“यह तो मैं समझ गयी कि तुम्हारी फ्रॉकें छुरों वगैरा से फट जाती हैं। पर तुम्हारी चड़ियां हर दिन कैसे फट जाती हैं ?” मां यह समझ ही न पाती थी कि लेस से सजी-सजाई उसकी चड़ियां रोज-रोज पीछे से कैसे फट जाती थीं। उसे चड़ियों का गंदा होना या फिसलपट्टी से फिसलते हुए घिस जाना तो समझ आता था, पर हर दिन यों फटना नहीं।

तोत्तो-चान ने कुछ देर विचारा, तब कहा, “देखो, जब कोई बाड़ कंटीले तारों

की बनी हो और उसके नीचे खुदाई करके उसे पार करना हो तो घुसते समय फ्रॉक या स्कर्ट और वापस बाहर निकलते समय चड़ियां तो फटेंगी ही। और फिर हर बार घुसते समय, 'क्या मैं अंदर आ सकती हूँ?' और लौटते समय, 'अच्छा, तो अब विदा' भी तो कहना पड़ता है।"

मां बात को ठीक-ठीक समझ नहीं पाई। पर उसे मजा आ रहा था।

मां ने पूछा, "क्या ऐसा करने में बहुत मजा आता है।"

"तुम करके तो देखो," तोतो-चान ने प्रश्न पर अचंभा करते हुए कहा।

"बड़ा मजा आएगा। और तुम्हारी चड़ियां भी फट जाएंगी।"

यह खेल जो तोतो-चान ने ईजाद किया था और जिसमें उसे इतना आनंद आता था, कुछ यों था :

सबसे पहले जमीन की एक ऐसी जगह जिसकी बाड़ कंटीले तारों से बनी हो, ढूँढ़नी पड़ती थी। "माफ करना, क्या मैं अंदर आ सकती हूँ" का तरीका यह था कि कंटीले तार कुछ ऊपर उठा कर, मिट्टी में एक गड्ढा खोदना पड़ता था। तब पेट के बल रेंग कर उस पार पहुंचना होता था। अंदर पहुंचने के बाद पिछले गड्ढे के ही पास एक दूसरा गड्ढा खोद कर, "अच्छा, तो अब विदा" कहना होता था। तब रेंग कर वापस लौट आया जा सकता था। तोतो-चान की मां को अब कुछ-कुछ समझ में आने लगा था कि बाहर निकलते समय चड़ियां तारों में उलझ कर कैसे फटती थीं। और फिर यह प्रक्रिया बार-बार दोहराई जाती थी। हर बार "माफ करना, क्या मैं अंदर आ सकती हूँ" कह कर गड्ढा खोदना और बाहर निकलते समय "अच्छा, तो अब विदा" कहकर वापस रेंगना। फ्रॉक-चड़ियां तो फटती हीं। तोतो-चान बड़ी तन्मयता से तारों के एक छोर से दूसरे छोर तक रेंगती-रेंगती आती-जाती रहती। चड़ियों के फटने में तब आश्चर्य कैसा !

ऐसे किसी खेल की कल्पना करना जो बड़ों को थका भी दे और उबाऊ भी लगे, बच्चों के लिए बड़े ही मजे की बात हो सकती है। तोतो-चान के गंदे हाथों, मिट्टी से भरे नाखूनों और कानों को देखकर मां को कुछ ईर्ष्या हुई। साथ ही, हेडमास्टर जी के लिए मन में आदर भाव बढ़ा। आखिर उन्होंने ही तो सुझाया था कि बच्चों को ऐसे कपड़े पहनाये जिन्हें वे जी भर कर गंदे कर सकें। यह इस बात का एक और प्रमाण था कि वे बच्चों को बखूबी समझते थे।

ताकाहाशी

एक सुबह जब सब बच्चे मैदान में दौड़ रहे थे, हेडमास्टर जी ने आकर कहा, "यह तुम्हारा नया दोस्त है। इसका नाम है ताकाहाशी। यह भी पहली कक्षा वाले डिब्बे में बैठेगा।"

तोतो-चान और उसके साथियों ने ताकाहाशी को देखा। उसने अपनी टोपी उतारी और कुछ शर्माते हुए कहा, "तुम सब कैसे हो?"

तोतो-चान और उसके साथी पहली कक्षा में थे, इसलिए छोटे-छोटे ही थे, पर ताकाहाशी था तो लड़का फिर भी उन सबसे छोटा था। उसके हाथ-पैर नन्हे-नन्हे थे। जिस हाथ में उसने टोपी पकड़ी थी, उसकी वह हथेली भी छोटी सी थी। लेकिन उसके कंधे चौड़े थे। वह कुछ उदास-सा सामने खड़ा था।

"चलो बात करते हैं।" तोतो-चान ने मियो-चान और सावको-चान से कहा। वे सब ताकाहाशी के पास गए। जब वे बिल्कुल पास पहुंचे तब वह मुस्कराया। उसकी आंखें बड़ी-बड़ी और मोल थीं। लगता था मानो वह कुछ कहना चाहता हो।

"तुम क्या अपनी कक्षा वाला डिब्बा देखना चाहोगे?" तोतो-चान ने पूछा।

"हूँ।" उसने टोपी वापस पहनते हुए कहा।

तोतो-चान को उसे रेल का डिब्बा दिखा देने की जल्दी थी। वह आतुरता से उस ओर दौड़ी और दरवाजे पर पहुंच कर हांक लगाने लगी, "जल्दी करो ना।"

तोतो-चान को लगा मानो ताकाहाशी चल तो बड़ी तेजी से रहा है, पर दूरी अभी भी बनी हुई थी।

"आ रहा हूँ।" उसने भागने की कोशिश में प्रायः लुढ़कते हुए कहा।

तोतो-चान अब तक यह तो समझ गयी कि भले ही यासुकी-चान की तरह ताकाहाशी को पोलियो नहीं था, और उसके पैर चलते समय घिसटते भी नहीं थे, फिर भी रेल के डिब्बे तक पहुंचने में उसे काफी समय लग रहा था। इसलिए तोतो-चान शांति से इंतजार करने लगी। ताकाहाशी अपनी ओर से तेज चलने की पूरी कोशिश कर रहा था, इसलिए उससे 'जल्दी करो' कहना भी बेकार ही था। जल्दी तो वह कर ही रहा था। उसकी टांगें काफी छोटी थीं और पैर मुड़े हुए थे। शिक्षक और बड़े तो उसे देखकर यह समझ जाते होंगे कि उसका बढ़ना बंद हो चुका है। जब उसने तोतो-चान को अपनी ओर ताकते हुए पाया तो वह और तेज चलने की कोशिश करने लगा। उसके दोनों हाथ इस कोशिश में जोरों से हिल रहे थे। जब वह दरवाजे पर पहुंचा तो उसने कहा, "तुम सच में तेज दौड़ती हो।" तब उसने कहा, "मैं ओसाका से हूँ।"

"ओसाका!" तोतो-चान ने उत्साह से भर कहा। ओसाका था उसके सपनों का शहर, जिसे उसने कभी देखा न था। मां के छोटे भाई, उसके मामा, जो विश्वविद्यालय में पढ़ते थे, जब भी घर आते, उसका सिर दोनों हाथों में पकड़ उसे ऊंचा उठा देते थे। तब कहते, "मैं तुझे ओसाका दिखाता हूँ। दिख रहा है न अब ओसाका?"

यह तो खैर एक खेल था जो बड़े अक्सर बच्चों के साथ खेलते हैं। पर तोतो-चान उसे सच मान लेती थी। उसके चेहरे की चमड़ी जोर से खिंच जाती।

आंखें और कान भी दर्द करने लगते, पर वह तब भी ओसाका देखने की कोशिश करती। उसे लगता कि एक न एक दिन वह जरूर ओसाका देख पाएगी। इसलिए जब भी मामा आते, वह कहती, “मुझे ओसाका दिखाओ।” और इस तरह ओसाका उसके सपनों का शहर बन गया था। और ताकाहाशी उसी शहर से आया था।

“मुझे ओसाका के बारे में बताओ ना,” उसने ताकाहाशी से कहा।

“ओसाका के बारे में ?” उसने खुशी से मुस्कराते हुए कहा। उसकी आवाज साफ और बड़ों जैसी भारी थी। उसी समय पहली घंटी बज उठी।

“अरे, कितने दुख की बात है।” तोत्तो-चान ने कहा। ताकाहाशी खुश-खुश पूरा शरीर हिलाते-हिलाते अंदर जाने लगा। उसके बस्ते से उसका छोटा-सा शरीर पूरी तरह छिप गया था। वह जाकर पहली पंक्ति में बैठ गया। तोत्तो-चान भी जल्दी से उसके पास जा बैठी। उसे खुशी हुई कि तोमोए में बच्चे जहां चाहे वहां बैठ सकते थे, क्योंकि वह ताकाहाशी से दूर नहीं बैठना चाहती थी। ऐसे शुरू हुई ताकाहाशी और तोत्तो-चान की दोस्ती।

“कूदने के पहले देखो !”

स्कूल से घर के रास्ते में, घर के बिल्कुल पास ही, तोत्तो-चान को सड़क के किनारे एक लुभावनी चीज दिखी। रेत का एक बड़ा-सा ढेर। समुद्र से इतनी दूर रेत का ढेर देख वह आश्चर्य से भर उठी। कहीं यह सपना तो नहीं ? वह खुशी से भर उठी। एक छोटी-सी कूद मार कर तेजी से ढेर के शिखर पर चढ़ी और जोर से उसके बीचों-बीच कूदी। पर ढेर असल में रेत का नहीं था। बीच में था दीवारों पर लगने वाला सलेटी प्लास्टर। छपाक से वह अंदर जा डूबी। तुरंत ही छाती तक वह किसी मूर्ति की तरह प्लास्टर से पुत गयी—अपने बस्ते और जूतों वाले झोले के साथ। जितना निकलना चाहती, उतना उसके पैर फिसलते। जूता मानो पैर से निकलना ही चाहता था। निकल ही ना जाए, इसका ध्यान रखना पड़ रहा था उसे। बिना हिले-डुले स्थिर खड़े रहने के अलावा कोई चारा न था। जूते का झोला पकड़े उसका बायां हाथ भी उस गिलगिले प्लास्टर में धंसा हुआ था। पास से एक दो बार कुछ स्त्रियां गुजरतीं। वह उन्हें जानती नहीं थी। हर बार उसने धीमी आवाज में कहा, “भाफ़ कीजिए...”。 पर उन्होंने सोचा कि बच्ची खेल रही है, और वे मुस्कराती हुई आगे बढ़ गयीं।

शाम हो चली। धीरे-धीरे अंधेरा घिरने लगा। मां उसे ढूंढ़ने निकली। उस ढेर में से तोत्तो-चान का सिर निकला देख वह अवाक रह गयी। कहीं से उसने एक बांस ढूंढ़ा। उसका सिरा तोत्तो-चान को धामने को कहा और उसे बाहर निकाल लिया। पहले मां ने भी उसे हाथ से खींचकर निकालना चाहा था, पर तब उसका

अपना ही पैर प्लास्टर में धंसने लगा था।

प्लास्टर से सनी तोत्तो-चान बिल्कुल किसी दीवार-सी लग रही थी। “मेरे ख्याल से मैं एक बार पहले भी बता चुकी हूँ,” मां ने कहा, “कि जब भी कोई नयी चीज दिखे तो सीधे उसमें कूदो मत। कूदने से पहले देखो !”

मां जिस ‘एक बार पहले’ का जिक्र कर रही थी, वह घटना घटी थी स्कूल में खाने की घंटी के दौरान। तोत्तो-चान उस दिन अपने दोस्तों के साथ सभागार के पास ही टहल रही थी। रास्ते में एक अखबार पड़ा दिखा। उसने सोचा कि अखबार पर कूदने में मजा आएगा। इसलिए वह तेजी से दौड़ी और अखबार के बीचों-बीच ज़ोर से कूदी। पर अखबार का वह टुकड़ा चौकीदार ने मलकुंड को ढंकने के लिए रखा था। उसे कुछ काम था, इसलिए वह कंक्रीट का ढकना हटाने के बाद गड़दे के मुंह को अखबार से ढंक कर चला गया था ताकि बाहर बदबू न फैले। सच बहुत ही बुरा हुआ था उस दिन। तोत्तो-चान सीधी मल के अंदर धड़ाम से जा गिरी थी। बेहद मेहनत के बाद वे लोग तोत्तो-चान को फिर से साफ-सुथरा बना पाए थे। मां इसी घटना का जिक्र कर रही थी।

“ना, अब मैं किसी भी चीज पर कभी नहीं कूदा करूंगी।” तोत्तो-चान ने शांत-गंभीर आवाज में कहा। मां ने चैन की सांस ली। पर अगले ही क्षण उसने जो कुछ कहा, उससे मां को लगा कि उसने चैन की सांस लेने में कुछ जल्दी कर दी है।

“मैं कभी भी किसी अखबार या रेत के ढेर पर नहीं कूदा करूंगी।”

मां को लगा कि तोत्तो-चान के दिमाग में इन दोनों को छोड़कर किसी तीसरी चीज पर कूदने की बात किसी भी समय उपज सकती है।

दिन अब छोटे हो चले थे और जब मां और तोत्तो-चान घर पहुंचीं, उस समय बिल्कुल अंधेरा हो चुका था।

“और फिर...ओह...”

तोमोए में दोपहर आधी छुड़ी का घंटी हमेशा से ही मौज-मस्ती से बरी होती थी। लेकिन पिछले दिनों उसमें एक और नयी रोचक बात जुड़ गयी थी।

हेडमास्टर जी अब भी सभी बच्चों के डिब्बे ध्यान से देखा करते थे कि वे सब ‘कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से’ लाए हैं या नहीं। उनकी पत्नी भी दो भगोने धामे उनके साथ-साथ रहती थीं ताकि जिस डिब्बे में कमी हो वह पूरी की जा सके। इसके बाद सब बच्चे ‘चबाओ, चबाओ, ठीक से चबाओ, जो कुछ भी तुम खाओ’ गाते। और तब सब कहते ‘मैं साभार खाता/खाती हूँ।’ पर अब नया यह होने वाला था कि ‘हम साभार खाते हैं’ कह लेने के बाद किसी एक बच्चे को भाषण होगा।

एक दिन हेडमास्टर जी ने कहा, “मुझे लगता है कि हम सबको बेहतर बोलना सीखना चाहिए। तुम लोग क्या सोचते हो ? अब से दोपहर का खाना खाते समय हर रोज तुम में से एक घेरे के बीच में खड़े होकर बाकी सब को कुछ बतायेगा। क्यों, कैसा रहेगा यह करना ?”

कुछ बच्चों ने सोचा कि उन्हें बोलना तो बहुत अच्छा नहीं आता, पर दूसरों को सुनने में तो मजा आयेगा ही। दूसरे बच्चों ने सोचा—वाह ! दूसरों को अपनी जानी-सुनी बात बताने में कितना आनंद आयेगा। तोतो-चान को यह तो पता नहीं था कि वह कैसा बोल पायेगी, पर कोशिश करके देखने में उसे कोई आपत्ति नहीं थी। चूंकि अधिकांश बच्चे इस सुझाव के पक्ष में थे, अगले ही दिन से यह काम शुरू करने का निश्चय किया गया।



वैसे घर पर तो जापानी बच्चों को खाना खाते समय चुप रहना ही सिखाया जाता है। पर अपने विदेशी अनुभव के कारण हेडमास्टर जी अपने छात्रों से कहते कि वे खाने में ज्यादा समय लगायें और साथ में बातचीत का आनंद उठाना भी सीखें।

वे यह भी मानते थे कि लोगों के सामने उठकर अपनी बात या विचार साफ-साफ, बिना झिझक कहना सीखना भी जरूरी है। उन्होंने सोचा कि इस विचार की भी परीक्षा कर लेनी चाहिए।

बच्चे जब सहमत हो गए, तब उन्होंने जो कुछ कहा वह सब तोतो-चान ने बड़े ध्यान से सुना।

“अच्छा वक्ता बनने की चिंता नहीं करनी चाहिए। जो मन हो, वही बोलो। तुम जो करना चाहते हो, वह भी बता सकते हो। कौन पहले बोलेंगा कौन बाद में, यह भी तय कर लिया गया। यह भी तय हुआ कि जिस दिन जिस बच्चे को बोलना हो वह गीत खत्म होते ही जल्दी से अपना खाना खा लेगा।

बच्चों को यह तो जल्दी ही पता लग गया कि बच्चों के घेरे के बीच खड़े होकर बोलना दो-तीन दोस्तों के साथ बतियाने से अलग होता है। काफी साहस चाहिए इसके लिए। कठिन काम था। कुछ बच्चे तो पहले-पहल इतना शरमाए कि वे खड़े होकर सिर्फ धिधिया कर ही रह गए। एक बच्चे ने तो बड़ी मेहनत से अपनी वार्ता तैयार की थी, पर जिस पल वह बोलने को उठा, सब कुछ भूल गया। उसने पहले कई बार अपनी बात का शीर्षक दोहराया, “क्यों कूदते हैं मेंढक एक तरफ ?” तब बोला, “जब बरसात होती है...” पर वह इससे आगे न बढ़ सका। आखिर उसने कहा “बस इतना ही।” तब उसने झुककर नमस्कार किया, और अपनी जगह लौट गया।

तोतो-चान की बारी अब तक न आयी थी। उसने तय कर लिया था कि जब भी उसकी बारी आयेगी तो वह अपनी मनपसंद कहानी ‘राजकुमार और राजकुमारी’ ही सुनायेगी। वह कहानी सब जानते थे। जब भी खेल की घंटी में वह यह कहानी सुनाना चाहती तो उसके साथी कह देते, “उस कहानी से हम तंग आ गए हैं।” इसके बावजूद भी उसने तय कर लिया था कि वह यही कहानी सुनायेगी।

नयी योजना धारण सिद्ध हो रही थी। लेकिन एक दिन जब एक बच्चे की बारी आयी तो उसने बड़ी दृढ़ता से मना कर दिया।

“मुझे कुछ भी नहीं कहना है।” उसने ऐलान किया।

तोतो-चान को हैरानी हुई कि उसके पास कहने को कुछ नहीं था। पर सच, उस लड़के के पास कहने को कुछ था ही नहीं। तब हेडमास्टर जी उसकी मेज तक गए जिस पर उसका खाली डिब्बा रखा था।

“तो तुम्हारे पास कहने को कुछ नहीं है।” उन्होंने कहा।

“कुछ भी नहीं।”

ऐसा नहीं था कि वह लड़का चतुराई दिखा रहा हो। सच में उसके पास बताने को कुछ भी न था।

हेडमास्टर जी अपना सिर पीछे की ओर कर अपने टूटे दांतों की परवाह किये बिना जोर से हंसने लगे।

“चलो, हम तुम्हारे कहने के लिए कुछ खोजते हैं।”

“मेरे कहने के लिए कुछ खोजते हैं ?” बच्चे को आश्चर्य हुआ। हेडमास्टर जी ने उसे बच्चों के घेरे के बीचों-बीच खड़ा कर दिया। वे खुद उसकी जगह जा बैठे।



“याद करने की कोशिश करो,” उन्होंने कहा। “आज सुबह उठने के बाद, स्कूल आने के पहले तुमने क्या-क्या किया ? उठकर सबसे पहले क्या किया था ?”

“ऊं S S S,” लड़के ने कहा और सिर खुजलाने लगा।

“वाह।” हेडमास्टर जी ने कहा, “तुमने ऊंSSSS कहा, मतलब कहने को तुम्हारे पास जरूर कुछ है। ऊंSSSS के बाद तुमने क्या किया ?”

“ऊंSSSS मैं उठा।” उसने फिर से अपना सिर खुजलाते हुए कहा।

तोतो-चान और दूसरे बच्चों को यह सब बड़ा मजेदार लग रहा था। लेकिन वे सब बड़े ध्यान से सुन रहे थे। बच्चे ने आगे कहा, “तब ऊंSSSS” उसने फिर अपना सिर खुजलाया। हेडमास्टर जी धीरज से बैठे उस लड़के को देखते रहे। उनके चेहरे पर मुस्कराहट थी और उनके हाथ मेज पर थे। तब उन्होंने कहा, “वाह, बड़ा अच्छा रहा। इतना काफी है। तुम आज सुबह उठे, यह तुमने सबको समझा दिया है। अच्छा वक्ता बनने के लिए यह कतई जरूरी नहीं है कि हम कोई मजेदार बात कहें या सबको हंसाएं। तुमने पहले कहा था कि कहने को तुम्हारे पास कुछ नहीं है। पर अब तुमने कहने के लिए कुछ ढूंढ़ ही लिया।”

लेकिन वह लड़का अब बैठा नहीं। उसने ऊंची आवाज में कहा, “और तब?”

सभी बच्चे आगे की तरफ झुके। लड़के ने गहरा सांस लिया और बोला, “ऊंSSSS मां ऊंSSSS ने कहा ‘तुम दांत मांज लो’ ऊंSSSS और मैंने तब मांज किया।”

हेडमास्टर जी ने ताली बजाई। सब बच्चों ने भी ताली बजाई। इस पर उस लड़के ने और ऊंची आवाज में फिर कहना शुरू किया।

“और तब ऊंSSSS”

बच्चों ने ताली बजाना बंद किया और सांस रोक कर सुनने लगे।

अंत में लड़के ने मानो गढ़ जीत लिया हो, उस आवाज में कहा : “और तब ऊंSSSS मैं स्कूल आ गया।”

बड़े बच्चों में से एक इतना आगे झुककर बात सुन रहा था कि उसका मुंह खाने के डिब्बे से ही टकरा गया। पर सभी बच्चे इस बात से वेहद खुश थे कि उसे कहने को कुछ मिल गया था।

हेडमास्टर जी ने जोर-जोर से तालियां बजाईं। तोतो-चान और दूसरे बच्चों ने भी। और तो और सबके बीच खड़े उस ‘और तब ऊंSSSS’ बच्चे ने भी ताली बजाई। पूरा सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा।

बड़े हो जाने पर भी उस बच्चे को अपनी प्रशंसा में बजी तालियों को आवाज कभी न भूली होगी।

“हम तो खेल भर रहे थे !”

तोतो-चान के साथ बड़ी दुर्घटना घटी। स्कूल से घर लौटने पर हुआ वह सब। जब वह रॉकी के साथ खाना खाने के पहले अपने कमरे में भेड़िया-भेड़िया खेल रही थी, उस समय।

इस खेल में वे दोनों कमरे के दो कोनों से एक दूसरे की ओर लुढ़कने लगते और आखिरकार एक दूसरे से टकरा जाते। कई बार यह दोहरा लेने के बाद उन्होंने खेल को कुछ और कठिन बनाने की बात सोची। निर्णय तो असल में तोतो-चान ही लेती थी। खैर, तब यह हुआ कि लुढ़कते-लुढ़कते जब दोनों कमरे के बीच मिलेंगे तो जो भी ज्यादा भयानक मुंह बनायेगा, वही जीतेगा। रॉकी तो था जर्मन शेफर्ड कुत्ता। उसके लिए भेड़िए सा लगना कठिन न था। उसे तो बस अपने कान खड़े कर, मुंह खोलकर, दांत ही दिखाने पड़ते थे। अपनी आंखें वह वैसे ही डरावनी बना सकता था। तोतो-चान के लिए ही यह सब कठिन था। उसे अपने हाथ कानों के पास लगाने पड़ते थे। मुंह और आंखें चौड़े फाड़ने पड़ते थे। तब रॉकी को काटने का नाटक करते हुए गुरगुराने की आवाज निकालनी पड़ती थी। शुरू-शुरू में रॉकी ने यह खेल अच्छी तरह खेला। पर था तो वह छोटा-सा पिल्ला ही। कुछ ही देर में वह यह भूल गया कि यह खेल ही है और उसने तोतो-चान को जोर से काट लिया।

वह था तो पिल्ला पर था तोतो-चान से दो गुना बड़ा। उसके दांत भी पैने और लंबे थे। पता चलने से पहले ही तोतो-चान का दाहिना कान अलग लटकने लगा और खून की धारा बहने लगी।

उसकी चीखें सुनकर मां रसोई से भागी आयी। उसने देखा कि तोतो-चान कमरे के कोने में रॉकी के पास खड़ी है। उसने अपना दायां कान खून से सने दोनों हाथों से ढांप रखा है। उसकी फ्रॉक भी खून से सनी है। डैडी बैठक में वायलिन का अभ्यास कर रहे थे। वे भी भागे आये। इस बीच रॉकी को पता चल गया कि उससे कोई भारी गलती हो गयी है। उसकी पूंछ पिछले पैरों के बीच दबी थी। वह बड़े दुख के साथ तोतो-चान की ओर ताक रहा था।

तोतो-चान को उस समय केवल एक ही चिंता सता रही थी। अगर मां-डैडी इतना नाराज हो गये कि उन्होंने रॉकी को घर से ही निकाल दिया या किसी को दे दिया तो वह क्या करेगी ? उसे लगा कि इससे बुरा और कुछ न होगा। वह रॉकी के ही पास बैठ गयी। अपना दायां कान पकड़े रोती-रोती वह बार-बार कहने लगी, “रॉकी को मत डांटना। रॉकी को मत डांटना।”

मां-डैडी तो यह देखना चाहते थे कि आखिर उसके कान को हुआ क्या है ? उन्होंने उसका हाथ हटाना चाहा, पर तोतो-चान चीखती ही रही, “नहीं, नहीं, मुझे

दर्द नहीं हो रहा है। रॉकी से गुस्सा मत होना। उससे नाराज मत होना।” और सच उस समय उसे अपने दर्द का कोई अहसास था भी नहीं। बस रॉकी की ही चिंता थी।

खून टपकता जा रहा था। बड़ी देर बाद मां-डैडी को समझ में आया कि रॉकी ने उसे काटा होगा। पर उन्हें पहले तोतो-चान को आश्वासन देना पड़ा कि वे रॉकी से नाराज नहीं होंगे। तब कहीं जाकर उसने अपना हाथ कान पर से हटाया। तोतो-चान का लटकता कान देख मां तो चीख ही पड़ी। डैडी अपनी नन्ही बिटिया को उठाये डाक्टर के घर की ओर भागे। मां रास्ता दिखाती आगे दौड़ रही थी। चूंकि वे समय पर पहुंच गए, डाक्टर ने टांके लगाकर कान वापस जगह पर सी दिया। मां-डैडी की जान में जान आयी। पर तोतो-चान को फिक्र थी कि कहीं मां-डैडी रॉकी को न डांटने का अपना वादा भूल तो नहीं जाएंगे।

तोतो-चान सिर से कान तक पट्टी बांधे घर लौटी। बिल्कुल किसी सफेद खरगोश सी लग रही थी वह। अपने वादे के बावजूद डैडी की इच्छा तो रॉकी को किसी तरह दंडित करने की थी, पर मां ने अनुनय भरी नजर से उन्हें देखा। मानो कह रही हो, ‘देखो, अपना वादा ना भूलना।’ और डैडी को बेमन से बात माननी पड़ी।

तोतो-चान बड़ी तेजी से घर में घुसी। वह रॉकी को जल्दी से जल्दी बता देना चाहती थी कि अब सब कुछ ठीक है। कोई भी उसे डाटेगा नहीं। पर रॉकी कहीं मिला ही नहीं। तोतो-चान अब पहली बार रोई। डाक्टर के पास भी वह रोई नहीं थी। उसे डर था कि उसके रोने से मां-डैडी कहीं रॉकी से और नाराज न हो जाएं। पर अब उसके आंसू थमते ही न थे। वह रोते-रोते ही रॉकी को पुकारने लगी, “रॉकी ! रॉकी ! तुम कहाँ हो ?”

कई बार पुकारने के बाद रॉकी धीरे से सोफे के पीछे से निकला। आंसुओं से भीगा उसका चेहरा मुस्कान से खिल उठा। तोतो-चान के पास पहुंच कर रॉकी ने पट्टियों के बीच से झांकते उसके सही सलामत कान को धीमे से चाटा। तोतो-चान ने अपनी बांहें उसके गले में डाल दीं। उसका कान सूंघा। मां-डैडी का कहना था कि रॉकी के कान से बू आती है। पर तोतो-चान को यह जानी-पहचानी गंध अच्छी लगती थी।

रॉकी और तोतो-चान, दोनों ही थके और उनींद हो चले थे।

गर्मी के अंत का चांद दूर ऊपर बाग की ओर से पट्टी बंधी उस नन्ही बच्ची और कुत्ते को देख रहा था, जो अब कभी भी भेड़िया-भेड़िया नहीं खेलना चाहते थे। पर अब वे दोनों पहले से भी कहीं अधिक गहरे दोस्त थे।

खेल दिवस

हर साल तीन नवंबर को तोमोए में खेल दिवस मनाया जाता था। काफी छानबीन के बाद हेडमास्टर जी ने यह दिन तय किया था। उन्होंने पाया कि पतझड़ के पूरे मौसम में यही एक दिन था जब सबसे कम बरसात हुई थी। या तो यह उनकी मौसम संबंधी जानकारी इकट्ठी करने का कमाल था या फिर सूरज और बादल ही उनका कहा मानते रहे होंगे कि खेल दिवस पर बच्चों द्वारा सजाए-संवारे मैदान को बरसात ने कभी खराब नहीं किया। उत्सुक बच्चों की आशाएं कभी नहीं टूटें। यह एक अजूबा ही था कि उस दिन कभी बरसात नहीं हुई। जैसे दूसरी कई चीजें तोमोए में अलग ही होती थीं, खेल दिवस भी वहां अनूठा ही होता था। रस्साकशी और तीन टांग की दौड़ के अलावा, जो दूसरे स्कूलों में भी खेले जाते थे, बाकी सभी खेल-दौड़ अलग ही थे। उन्हें ईजाद किया था हेडमास्टर जी ने। इन खेलों के लिए कोई खास उपकरण नहीं चाहिए होता था। स्कूल की ही चीजों से काम चल जाता था।

उदाहरण के लिए तोमोए में कार्प-मछली दौड़ होती थी। बड़ी बेलनाकार कपड़े की बनी मछली-पताका एक बड़े डंडे से बांध कर मैदान के बीच लिटा दी जाती थी। इशारा पाते ही बच्चों को उस ओर दौड़ना पड़ता था। तब सिर की ओर से घुस कर पूंछ की ओर से निकलना पड़ता था। स्कूल में तीन ही कार्प मछलियां थीं—एक लाल और दो नीली। सो, एक बार में तीन बच्चे ही भाग ले सकते थे। दौड़ देखने में आसान लगती थी, पर थी असल में कठिन। बेलनाकार कपड़े की लंबी मछली के अंदर अंधेरा होता था। बच्चे दिशा भी भूल जाते थे। तोत्तो-चान और दूसरे बच्चे कई बार पूंछ की जगह सिर की ओर से ही बाहर निकल आते। भूल का अहसास होते ही वापस भीतर घुसते। आगे-पीछे रेंगते बच्चों के कारण कपड़े की मछलियां मानो जी उठतीं। यह सब देखने में बड़ा आनंद आता।

एक और दौड़ हुआ करती थी वहां। नाम था 'एक मां को ढूंढो'। इसमें निर्देश पाते ही एक लकड़ी की आड़ी रखी सीढ़ी तक दौड़ना पड़ता था। तब उसके एक-एक खांचे से निकल कर सामने रखी टोकरी में से एक लिफाफा उठाना पड़ता था। भीतर रखे कागज के टुकड़े पर 'साक्को-चान की मां' का नाम हो सकता था। तब दर्शकों की भीड़ में से उसे ढूंढकर उसका हाथ थामे-थामे शुरू करने की जगह वापस लौटना होता था। सीढ़ी के खांचों से निकलते समय किसी बिल्ली की तरह शरीर को मोड़कर निकलना जरूरी था, नहीं तो फंस जाने का डर रहता था। और फिर बच्चा साक्को-चान की मां को पहचानता भी हो, तो भी यह संभव था कि पर्ची पर 'कुमारी ओकू की बहन' या 'श्री त्सूए की मां' या 'श्रीमती कुनी नोरी का बेटा' लिखा हो जिन्हें उसने पहले कभी देखा ही न हो। ऐसा होने पर दर्शकों

के पास जाकर जोर से कहना पड़ता, "कुमारी ओकू की बहन!" और यह कह पाने के लिए चाहिए होती थी हिम्मत। जब भी भाग्य से किसी बच्चे की पर्ची पर उसकी ही मां का नाम आ जाता तो वह बेहद खुशी से उछलता कूदता, "मां ! मां ! जल्दी आओ!" चिल्लाता। इस दौड़ में दर्शकों को भी चौकन्ना रहना पड़ता था। ना जाने कब उनका नाम पुकारा जाए। ऐसा होते ही उन्हें अपनी बेंच या चटाई पर से तुरंत उठकर, सबसे माफी मांगकर, उनके बीच से निकल कर बच्चे तक आना पड़ता था। तब बच्चे का हाथ पकड़कर वापस दौड़ना पड़ता था। इसलिए जब भी कोई बच्चा बड़ों के सामने आकर रुकता, सब सांस रोक कर नाम का इंतजार करने लगते। यह समय गपशप करने का या खाले-पीते रहने का नहीं था। बड़ों की भागीदारी उतनी ही जरूरी थी जितनी कि बच्चों की।

हेडमास्टर जी और बाकी शिक्षक दो दलों में बच्चों के साथ रस्साकशी में शामिल होते थे। तब सब चिल्लाते, "जोर लगा के, हैया !" यासुकी-चान जैसे विकलांग बच्चे रस्सी के बीच बंधे रूमाल पर नजर रखते ताकि हार-जीत का फैसला हो सके।

सबसे अंत में होती थी रिले-दौड़। पूरा स्कूल इसमें भाग लेता था। यह दौड़ भी तोमोए में अलग तरह से होती थी। किसी को भी ज्यादा दूर तक दौड़ना नहीं पड़ता था। सभागार तक पहुंचने वाली अर्ध-चक्राकार सीढ़ियों के ही ऊपर-नीचे चढ़ना-उतरना होता था। यह दौड़ भी देखने में आसान लगती थी। लेकिन इसमें पास-पास बनी छोटी-छोटी हर सीढ़ी पर पांव रखना पड़ता था, उन्हें उलांघने की इजाजत न थी; इसलिए पांव या कद जरा भी बड़े हों तो काम टेढ़ा था। जिन परिचित सीढ़ियों को हर दिन बच्चे खाने के समय पार करते, वे ही खेल-दिवस के दिन एक नए अनोखे रस से भर उठतीं। बड़ी खुशी से चीखते-पुकारते बच्चे उन पर चढ़ते-उतरते। दूर से देखने पर यह दृश्य कैलिडोस्कोप से बनती-बिगड़ती सुंदर आकृतियों सा लगता। ऊपरी सीढ़ी को भी गिन लेने पर वहां कुल जमा आठ ही सीढ़ियां तो थीं।

जिस पहले खेल दिवस में तोत्तो-चान और उसके साथियों ने हिस्सा लिया था, वह दिन भी हेडमास्टर जी की आशा के अनुरूप खुशनुमा था। कागज की लड़ियां और सुनहरे तारों से बच्चों ने एक दिन पहले ही मैदान को सजाया था। तेज धुन का संगीत बज रहा था। उत्सव का माहौल था।

तोत्तो-चान ने गहरे नीले रंग की निकर और सफेज कमीज पहन रखी थी। इच्छा तो असल में उसकी कसरती ब्लूमर पहनने की थी। बेहद चाव था ब्लूमर पहनने का उसे। हुआ यों कि एक दिन हेडमास्टर जी कुछ पूर्व-प्राथमिक शालाओं की शिक्षिकाओं को यूरिथमिक्स का अभ्यास करवा रहे थे। तब तोत्तो-चान ने उन महिलाओं को ब्लूमर पहने देखा था। तोत्तो-चान को जो अच्छा लगा, वह यह था

कि वे जब भी पैर पटकतीं तो उनकी जांघों की मांसपेशियां तनतीं और हिलतीं। तोतो-चान भागी-भागी घर गयी, निकर-कमीज पहनी और उन महिलाओं की तरह पैर पटका। उसकी खुद की टांगें तो थीं पतली-बचकानी सी। कई बार कोशिश करने पर वह इस नतीजे पर पहुंची कि ब्लूमर पहनने से ही जांघें ऐसे तनती-हिलती होंगी। उसने पहले मां से जानना चाहा कि उन्होंने आखिर पहन क्या रखा होगा। मां ने बताया कि वे ब्लूमर कहलाते हैं। उसने इच्छा जताई कि खेल दिवस पर वह भी ब्लूमर पहनेगी। पर दुर्भाग्य से उसके नाप की ब्लूमर मिला ही नहीं। मन मसोस कर तोतो-चान को निकर ही पहननी पड़ी, पर उसे पहनने से उसकी जांघें तनती-हिलती न थीं।

उस खेल दिवस पर कुछ विचित्र घटा। ताकाहाशी, जिसके नन्हे-नन्हे हाथ-पैर थे और कद स्कूल में सबसे छोटा था, वही हर दौड़ में प्रथम रहा। किसी को विश्वास ही न हो, यह ऐसी बात थी। जब बाकी बच्चे कार्प मछली के अंदर रेंग ही रहे थे, ताकाहाशी झटके से बाहर निकल चुका था। जब सीढ़ी के खांचों से दूसरे बच्चे निकल ही रहे थे, तब ताकाहाशी उनसे कई गज आगे निकल चुका था। और रिले-दौड़ में बाकी बच्चे सभागार की सीढ़ियां एक-एक कर पार कर ही रहे थे, तब तक ताकाहाशी तीर की तरह ऊपर-नीचे चढ़-उतर चुका था। लग रहा था, मानो किसी चलचित्र को तेजी से दिखाया जा रहा हो।

“हमें कोशिश कर ताकाहाशी को हराना चाहिए,” सबने कहा।

उसे हराने का निश्चय कर, हर बच्चे ने भरसक कोशिश की, पर ताकाहाशी हर बार जीता। तोतो-चान ने भी जोर लगाया पर ताकाहाशी उससे भी न हारा। सीधी दौड़ में बच्चे उससे आगे शायद निकल भी जाते, पर जैसे ही बाधाएं आतीं, ताकाहाशी उनसे आगे होता।

ताकाहाशी जब अपने इनाम लेने गया, वह खुशी से फूलकर कुप्पा हो रहा था। हर दौड़ में फर्स्ट जो आया था। एक के बाद एक इनाम उसे मिलते जा रहे थे। सब बच्चे उसे बड़ी उत्सुकता से देख रहे थे।

“अगले साल मैं ताकाहाशी को जरूर हराऊंगा,” हर बच्चे ने अपने आप से कहा। लेकिन हर साल ताकाहाशी उन्हें हराता रहा।

और मिलने वाले इनाम, वे भी हेडमास्टर जी का मार्का लिए अपनी ही तरह के थे। पहले इनाम में एक बड़ी-सी मूली भी मिल सकती थी। दूसरा इनाम हो सकता था—दो कंद। तीसरे में मिल सकती थी पालक की एक गड्डी। या ऐसी ही दूसरी चीजें। काफी बड़े हो जाने तक तोतो-चान यही सोचती थी कि स्कूलों में इनाम के रूप में सब्जियां ही मिला करती हैं।

बाकी स्कूलों में उन दिनों इनाम में कापियां, पेंसिलें या रबड़ दिए जाते थे। तोमोए के बच्चों को यह बात मालूम भी नहीं थी। पर फिर भी सब्जियां पाकर

वे खुश न थे। तोतो-चान को इनाम में मिले थे दो कंद और कुछ प्याज। उन्हें रेल में घर ले जाने के विचार से ही उसे शर्म आई। दूसरे आयोजनों के इनाम भी खेल दिवस के अंत में उसी दिन बंटते थे, इसलिए तोमोए के हर बच्चे के पास किसी न किसी तरह की सब्जी थी। बच्चों को सब्जियां उठाने में झिझक क्यों होती थी? आखिर अपनी-अपनी मां के लिए वे कभी न कभी सब्जियां उठाते या लेकर तो आते ही थे। असल में बच्चों को लगता था कि स्कूल से घर जाते समय हाथ में सब्जी होना ही अटपटी बात है।

एक मोटे से लड़के ने एक पत्तागोभी जीती थी। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि वह उसका क्या करे।

“मैं इसे ढोते नहीं फिरेगा,” उसने कहा। “सोचता हूं, इसे फेंक ही दूं।” हेडमास्टर जी ने शायद यह शिकायत सुन ली होगी। वे गाजर-मूली संभालते बच्चों के पास जा पहुंचे।

“बात क्या है? तुम्हें क्या अपने इनाम नहीं चाहिए?” उन्होंने पूछा। तब आगे कहा, “अपनी-अपनी मां से कहना कि आज रात खाने में वे यही पकाएं। ये सब्जियां तो तुम्हारी कमाई हुई हैं। यानी आज रात के खाने में अपने परिवार के लिए तुम भी अपनी मेहनत से लाया हुआ कुछ जोड़ रहे हो। सोचकर देखो, कैसी लगती है यह बात? जरूर खाने में बड़ा स्वाद आयेगा।”

और सच, बात तो सही थी। जिंदगी में पहली बार तोतो-चान की ओर से खाने में कोई योगदान होने वाला था।

“मैं मां से कहूंगी कि वे आज रात मसालेदार कंद ही बनाएं।” उसने हेडमास्टर जी से कहा। “प्याज का क्या बनेगा यह मैं अभी तक तय नहीं कर पायी हूं।”

इसके बाद तो दूसरे बच्चों ने भी सोचना शुरू कर दिया कि वे क्या-क्या बनवा सकते हैं। सब हेडमास्टर जी को बताने लगे।

“वाह, तो बात तुम्हारी समझ में आ ही गयी।” उन्होंने खुश होते हुए कहा। उनके गालों पर सुर्खी आ गयी। वे शायद सोच रहे होंगे कि क्या ही अच्छा हो कि खाना खाते समय बच्चे और उनके परिवार खेल दिवस की ही चर्चा करें।

बेशक, वे खासतौर से ताकाहाशी के बारे में भी सोच रहे होंगे जिसके घर की मेज उसके जीते इनामों से भर गयी होगी। वे शायद यह भी आशा कर रहे होंगे कि ताकाहाशी को उस दिन का गर्व, उस दिन की प्रसन्नता याद रहे, ताकि बौने होने की हीन-भावना उसमें पनप ही न पाए। और कौन जाने हेडमास्टर जी ने जान-बूझकर ही ऐसी दौड़ों को रखा हो, जिससे हर बार ताकाहाशी ही प्रथम आए।

कवि इस्सा

बच्चों को हेडमास्टर जी को 'इस्सा कोबायाशी' नाम से पुकारना अच्छा लगता था। उन्होंने तुक जोड़कर उनके लिए कुछ इस प्रकार की प्रेम भरी पंक्तियाँ भी गढ़ डाली थीं :

इस्सा कोबायाशी,
इस्सा है हमारा बूढ़ा
सिर जिसका है गंजा।

यह इसलिए हुआ क्योंकि हेडमास्टर जी का पारिवारिक नाम भी कोबायाशी था, जो उन्नीसवीं शताब्दी के प्रसिद्ध कवि इस्सा कोबायाशी से मिलता था। इस्सा कोबायाशी के रचे हाइकू (क्यूटि) हेडमास्टर जी को बेहद पसंद थे। वे इस्सा के हाइकू बार-बार सुनाते। इतनी बार कि बच्चों को लगने लगा था कि इस्सा भी उनके उतने ही अच्छे दोस्त हैं जितने हेडमास्टर सोसाकु कोबायाशी।

हेडमास्टर जी इस्सा के हाइकू इसलिए पसंद करते थे क्योंकि वे सरल भी थे और सामान्य जीवन से सीधे जुड़े हुए भी। कवि इस्सा ने अपने समय में हजारों हाइकू रचनाकारों के बीच अपनी जगह बनाई थी। और उनकी नकल कोई भी नहीं कर पाया था। हेडमास्टर जी उन रचनाओं से बाल-सुलभ आनंद उठाते थे। मौका मिलते ही इस्सा की कोई रचना बच्चों को सिखाने लग जाते। बच्चे भी उनको तुरंत कंठस्थ कर लेते। यों सीखी कुछ रचनाएं थीं :

कमजोर मेंढक
तुम ना झुकना
इस्सा तुम्हारे साथ है।

नन्ही अनुभवहीन चिड़ियो
छोड़ो रास्ता, छोड़ो रास्ता
रास्ता राजसी घोड़े के लिए।

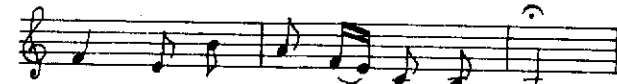
मक्खी को बख़्शो
देखो हाथ मसोसती, पैर मरोड़ती
वह मांगती है दया की भीख।

एक बार तो उन्होंने एक हाइकू के लिए धुन भी बना डाली। तब सबने साथ मिल उसे गाया :

सोसाकु कोबायाशी



आ खेल मेरे साथ नन्ही लावारिस



चिड़िया, तू बिना मां की है

हेडमास्टर जी प्रायः हाइकू कक्षाएं लेते, पर वे पाठ्यक्रम का हिस्सा न थीं। तोत्तो-चान ने जब हाइकू रचने की पहली कोशिश की तो उसमें अपने चहेते चित्रकथा (कॉमिक) पात्र नोराकुरो की बात कही। नोराकुरो एक अनाथ और लावारिस काला कुत्ता था जो सेना में भर्ती हुआ और वहां कई अड़चनों के बाद धीरे-धीरे ऊंचे ओहदों तक पहुंचता गया। नोराकुरो की चित्रकथाएं लड़कों की एक पत्रिका में छपा करती थीं। तोत्तो चान ने लिखा था :

लावारिस काला कुत्ता चला
यूरोप की ओर, अब
सेना से छुट्टी पाकर।

हेडमास्टर जी ने पढ़कर कहा था, "सीधा और सच्चा हाइकू लिखो। पर देखो, विषय अपना सोचा हुआ होना चाहिए।" तोत्तो-चान का हाइकू असली हाइकू नहीं कहला सकता था। पर एक बात तो फिर भी उससे समझ आती थी। वह यह कि किस तरह की बातों का असर उन दिनों उस पर पड़ता था। उसके हाइकू में 5-7-5 का छंद नहीं था। उसका छंद था 5-7-7 का। लेकिन स्वयं इस्सा की 'अनुभवहीन चिड़ियों' वाली रचना का छंद 5-8-7 का, इसलिए तोत्तो-चान ने सोचा कि उसका छंद भी चल जाएगा।

कुहोन्बुत्सु मंदिर के पास सैर करते समय या बरसात में जब सैर करना संभव न होता तो सभागार में इकट्ठे हुए बच्चों को तोमोए के इस्सा कोबायाशी हाइकू के बारे में बताते। प्रकृति और जीवन के बारे में अपने विचार वे हाइकू के ही माध्यम से सामने रखते थे। अक्सर यह लगता था कि कवि इस्सा ने कुछ हाइकू तो खास तोमोए के लिए लिखे होंगे। जैसे :

बर्फ पिघलती है जब
अचानक सारा गांव तब
बच्चों से भर उठता है।

एक रहस्य

तोतो-चान को जिंदगी में पहली बार कुछ पैसे पड़े मिले। उसे पैसे उस वक्त मिले जब वह स्कूल से घर आ रही थी। जियुगाओका से वह ओइमाची रेल में चढ़ी थी। अगले स्टेशन मिदोरीगाओका पहुंचने के पहले एक पैना घुमाव पड़ता था। तोतो-चान डिब्बे के दाएं दरवाजे के पास खड़ी रहती थी क्योंकि उसे अपने स्टेशन पर उसी ओर उतरना होता था। घुमाव आते ही तोतो-चान को अपने पैर जमा कर खुद को संभालना पड़ता था।

उस दिन जैसे ही ट्रेन घुमाव पर मुड़ी तो तोतो-चान ने अपने पैरों के पास कुछ पड़ा पाया। इससे पहले भी एक बार उसने जब सिक्का समझ कर कुछ उठाया था तो वह एक बटन निकला था। इसलिए ट्रेन जैसे ही सीधी चलने लगी तो उसने उठाने से पहले बड़े ध्यान से झुककर उस चीज को देखा। पांच सेन का सिक्का था वह। ट्रेन के पैने मोड़ के समय सिक्का लुढ़क कर शायद उसके पास आ गया था। लेकिन तोतो-चान के आसपास कोई भी सवारी नहीं थी। वह क्या करे, यह सोचने लगी। उसे याद आया कि किसी ने कभी बताया था कि अगर पैसे यों पड़े हुए मिलें तो उन्हें सिपाही को सौंप देना चाहिए। लेकिन ट्रेन में सिपाही कहां मिलता ?

इतने में कंडक्टर का दरवाजा खुला और वह तोतो-चान वाले डिब्बे में घुसा। तोतो-चान कारण तो बता नहीं सकती कि उसने ऐसा क्यों किया, पर उसने तुरंत सिक्के पर अपना दायां पैर रख दिया। कंडक्टर उसे पहचानता था, अतः वह उसे देख मुस्कराया। पर तोतो-चान तो ठीक से मुस्करा भी नहीं पाई। मन पर दाएं पैर के तले छिपे सिक्के का बोझ जो था। उसी समय ऊकायामा स्टेशन पर ट्रेन थमी। अगले ही स्टेशन पर उसे उतरना था। स्टेशन पर कई सवारियों को चढ़ना उतरना था। तोतो-चान उनके धक्के सहती वहीं खड़ी रही, अपना दायां पैर उसने सिक्के पर से नहीं हटाया। वह आगे क्या करना चाहिए, इस बारे में सोचने लगी। सोचा, रेल से उतरकर सिपाही को सिक्का थमा देगी। अचानक एक ख्याल आया, अगर पांच के नीचे से सिक्का उठाते देख किसी बड़े ने उसे चोर समझ लिया, तो क्या होगा ? उन दिनों पांच सेन में कुछ मीठी गोलियां या एक चॉकलेट खरीदी जा सकती थी। इसलिए तोतो-चान के लिए तो यह एक बड़ी पूंजी ही थी, चाहे बड़ों के लिए वह मामूली-सा सिक्का हो। वह इस ख्याल से चिंतित हो गयी।

“वाह, अच्छी सूझी,” उसने अपने आप से ही कहा। “मैं धीमे से कहुंगी ‘अरे मेरे पैसे गिर गए’ तब तो सब यही समझेंगे कि सिक्का मेरा ही है।”

पर मन ने तुरंत एक दूसरी समस्या उठाई। “यह कहकर मैं जब सिक्का उठा ही रही होऊं और इसी बीच कोई दूसरा अगर यह कह बैठा कि ‘सिक्का तो मेरा

है।’ तब क्या होगा ?”

काफी कुछ सोचने-विचारने के बाद उसने तय किया कि सबसे अच्छा होगा कि अपना स्टेशन निकट आते ही वह जूते के फीते बांधने के बहाने झुकें और चुपचाप सिक्का उठा ले। आखिर वही किया उसने। कामयाब रही वह। जब वह उतरी तो पसीने से भीगी हुई थी। पांच सेन का सिक्का उसकी मुट्ठी में था। बेहद थक गयी थी वह। थाना बड़ी दूर था। वहां जाने पर देर हो जाती। मां भी चिंतित हो उठती। स्टेशन की सीढ़ियां उतरते-उतरते उसने जो तय किया, वह यह था—“मैं सिक्का छिपा दूंगी और कल स्कूल ले जाऊंगी। फिर सब से सलाह करूंगी। कम से कम दूसरों को दिखा तो जरूर दूंगी सिक्का। उन्हें कभी यों पड़ा सिक्का थोड़े ही मिला होगा।”

वह देर तक यह सोचती रही कि सिक्का कहां छुपाए। सोचा, घर ले जाने पर मां शायद कुछ पूछ बैठे। कहीं दूसरी जगह छिपाना ही ठीक होगा।

स्टेशन के पास ही पेड़ों के एक झुरमुट में वह घुसी। आड़ में उसे कोई नहीं देख सकता था। यही जगह ठीक थी। डंडी से मिट्टी में गड़दा किया, फिर सिक्का वहीं गाड़ दिया। पहचान के लिए एक अजीब से आकार का छोटा पत्थर दूढ़ कर वहां रखा। तब तेजी से घर की ओर भागी।

अकसर रात को वह देर तक मां को स्कूल के बारे में बताती थी। जब तक मां यह न कह देती, “बस, बस, अब सोने का समय हो गया है।” पर उस रात उसने बातें नहीं कीं, जल्दी सोने चली गयी।

अगली सुबह उठते ही मन में लगा कि आज कुछ जरूरी काम करना है। अचानक उसे अपने गड़े हुए खजाने की याद हो आयी। वह खुश हो गयी।

रोज से जल्दी वह घर से निकली। रॉकी के साथ दौड़ती हुई झुरमुट तक पहुंची।

“यहीं है। यहीं है।”

पहचान का पत्थर वहीं पड़ा था, जहां वह रख कर गयी थी।

“मैं तुम्हें एक बहुत अच्छी चीज दिखाने वाली हूँ,” उसने रॉकी से कहा। पत्थर हटाकर मिट्टी खोदी। पर पांच सेन का सिक्का न जाने कहां गायब हो गया था। उसे इससे पहले कभी इतना आश्चर्य नहीं हुआ था। क्या सिक्का गाड़ते हुए किसी ने देख लिया था ? बेहद निराशा हुई उसे। अब दोस्तों को क्या दिखाएंगी वह ? लेकिन इस सबसे भी ज्यादा उसके मन में इस रहस्य को लेकर आश्चर्य था।

इसके बाद जब भी वह उस झुरमुट के पास से गुजरी, हर बार अंदर घुसी। इधर-उधर खोद-खोद कर देखा। पर सिक्का कभी नहीं मिला।

“शायद कोई छछूंदर ले गया होगा।” वह कभी सोचती। फिर सोचती, “क्या

मैंने उस दिन सपना देखा था।” या “जरूर भगवान ने मुझे सिक्का छिपाते देख लिया होगा।” लेकिन बहुत अटकलें लगाने पर भी गुत्थी कभी नहीं सुलझी। यह एक रहस्य ही रहा, जिसे वह कभी भी भुला नहीं सकी।

हाथों से बातचीत

एक दोपहर जियुगाओका स्टेशन की टिकट-खिड़की के पास तोतो-चान ने अपने से कुछ बड़ी उम्र के दो लड़कों और एक लड़की को खेलते देखा। देखने से लगता था मानो वे ‘पत्थर, कागज, कैंची’ खेल रहे हों। वे अपने हाथों से कुछ आकृतियाँ बना रहे थे। देखकर तोतो-चान को बड़ा मजा आया। ठीक से देख सकने के लिए वह कुछ पास चली गयी। तब अचानक लगा कि मुँह से आवाज निकाले बिना ही वे आपस में बातें कर रहे हैं। पहले एक बच्चा अपने हाथों से तरह-तरह की मुद्राएँ बनाता, तब दूसरा कुछ दूसरी तरह की, उसके बाद तीसरा। और इसके बाद वे सब बिना आवाज किए ही ठठाकर हँस पड़ते। लगा तीनों को बड़ा मजा आ रहा है। कुछ देर देखते रहने के बाद वह इस नतीजे पर पहुँची कि वे आपस में अपने हाथों से बात कर रहे हैं।

“मैं भी अपने हाथों से बात कर सकती तो कितना मजा आता।” उसने कुछ ईर्ष्या के साथ सोचा। मन ही मन विचार किया कि वह उनके साथ खेले, पर हाथों से मुद्रा बनाकर कैसे पूछती वह ? तोमोए के छात्र भी नहीं थे वे। वे उसे डांट भी सकते थे। वह चुपचाप पास खड़ी उन्हें देखती रही, जब तक कि वे वहाँ से तोयोको ट्रेन प्लेटफार्म की ओर चले न गए।

“मैं भी एक दिन अपने हाथों से लोगों के साथ बोलना सीखूँगी।” उसने तय किया।

तोतो-चान उस समय तक बहरे लोगों या उन बच्चों के बारे में जानती न थी, जो ओइमाची के गूंगे-बहरों के सरकारी स्कूल में पढ़ने जाते थे। ओइमाची उसी ट्रेन का आखिरी स्टेशन था जिससे वह रोज स्कूल जाया करती थी।

तोतो-चान के दिल को उस समय एक बात ने मोह लिया था। आँखों में चमक लिए वे बच्चे जिस उल्लास से एक दूसरे के हाथों से बनती मुद्राएँ देखते थे, वह उसे बेहद सुंदर लगा था। उसकी इच्छा थी कि किसी दिन वह उन बच्चों से दोस्ती कर सके।

सैंतालीस रॉनिन

श्री कोबायाशी की शिक्षण पद्धति थी तो अनूठी, पर उनके विचार यूरोप व अन्य देशों के कई शिक्षाविदों से प्रभावित थे। तोमोए में यूरिथमिक्स, दोपहर का खाना, स्कूल से सैर के लिए जाना और ‘रो, रो, रो योर बोट’ सी धुन पर खाने के समय का गीत आदि इस बात के उदाहरण थे।

हेडमास्टर जी का दायाँ हाथ थे श्री मारुयामा। किसी दूसरे स्कूल में वे शायद उप-प्रधानाचार्य कहलाते। वे श्री कोबायाशी से ठीक उलटे थे। उनके नाम का मतलब था ‘गोल-पहाड़’। उनका सिर भी बिल्कुल वैसा ही गोल था। एक भी बाल नहीं था ऊपर। बस कान के पास गर्दन तक थोड़े से सफेद बाल थे। चश्मा भी गोल ही पहनते थे वे। उनके गाल बिल्कुल लाल थे। वे दिखने में ही कोबायाशी से अलग नहीं थे; बल्कि वे गहरी गंभीर आवाज में चीनी शैली में कविताएँ भी सुनाया करते थे।

14 दिसंबर की सुबह, जब सब बच्चे सभागार में इकट्ठे हो गए, तब उन्होंने एक घोषणा की :

“आज के ही दिन, कोई 250 वर्ष पहले सैंतालिस रॉनिन ने अपना प्रसिद्ध बदला लिया था। आज हम सब सेनगाकुजी के मंदिर में जाकर उनकी समाधि पर प्रणाम करेंगे। तुम लोगों के माता-पिता को पहले ही सूचना भेज दी गयी है।”

हेडमास्टर जी ने श्री मारुयामा की बात का कोई विरोध नहीं किया। इस मसले पर वे क्या सोचते थे, यह भी बच्चों के माता-पिता को पता नहीं चला। वे तो यही समझे कि जब उन्होंने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा है तो उनकी अनुमति भी होगी ही। और बच्चे, उन्हें तो समाधि पर जाने की बात अच्छी लगी ही थी।

जाने से पहले श्री मारुयामा ने सैंतालिस रॉनिन की प्रसिद्ध कहानी सुनाई। उन्होंने बताया कि सामंत आसानो के इन वफादार लोगों ने दो साल की मेहनत के बाद अपने स्वामी की मौत का बदला लेने की योजना बनायी थी। उन सैंतालीस वफादारों के साथ था राईहाई आमानोया नाम का एक सौदागर। उसने ही लड़ने के लिए अस्त्र-शस्त्र दिए थे। जब शोगुन के सैनिकों ने उसे गिरफ्तार किया तो उसने बस इतना कहा कि “मैं, राईहाई आमानोया नामक एक आदमी हूँ।” षड्यंत्र के बारे में उसने अपना मुँह बंद ही रखा। एक शब्द तक न बोला वह। बच्चे, पूरी कहानी या उसका तात्पर्य तो समझे नहीं, पर पढ़ाई करने की बजाय कुहोन्बुत्सु मंदिर से भी दूर कहीं सैर करने जाने, और वहाँ जाकर खाना खाने की बात उन्हें पढ़ाई करने से कहीं ज्यादा अच्छी लगी।

हेडमास्टर जी से विदा ले सभी शिक्षक और पचास बच्चे श्री मारुयामा के

साथ स्कूल से चले। कतार में चलते लड़कों में से कोई-कोई कभी-कभार जोश में कहता, “मैं, राईहाई आमानीया नामक एक आदमी हूँ।” लड़कियाँ भी तब जोर से यही दोहरातीं। राह चलते लोग उनके नारे सुन कर हँस देते। सेनगाकुजी स्कूल से करीब सात मील दूर था। मोटरगाड़ियों का चलन उन दिनों कम ही था। दिसंबर का आकाश नीला था और बच्चे जोश में ‘मैं राईहाई आमानीया नामक एक आदमी हूँ’ के नारे लगाते जा रहे थे। अतः रास्ता लंबा न लगा।

जब वे सेनगाकुजी पहुँचे, तब श्री मारुयामा ने हरेक बच्चे को एक-एक अगरबत्ती दी। यह मंदिर कुहोन्बुत्सु के मंदिर से था तो छोटा, पर वहाँ एक पंक्ति



में डेरों कब्रें बनी हुई थीं। यह याद आते ही कि मंदिर सैंतालिस रॉनिन की याद में बना है, तोत्तो-चान गंभीर हो गयी। उसने श्री मारुयामा की नकल करते हुए बड़ी संजीदगी के साथ फूल और अगरबत्ती चढ़ाई। बाकी बच्चे भी अचानक चुप हो गए। तोमोए के छात्रों की चुप्पी एक अजीब-सी घटना थी। प्रत्येक कब्र से चढ़ाई हुई अगरबत्ती का धुआँ ऊपर उठ कर एक चित्र-सा बनाने लगा।

इस घटना के बाद बच्चों को अगरबत्ती की महक से ही श्री मारुयामा और राईहाई आमानीया की याद हो आती। साथ याद आती वह चुप्पी।

बच्चे शायद सैंतालिस रॉनिन के बारे में बहुत कुछ नहीं समझते थे। लेकिन श्री मारुयामा के जोरदार भाषण से उनके मन में उन अपरिचितों के प्रति श्रद्धा पैदा हो गयी थी। हाँ, यह श्रद्धा उससे कुछ अलग थी जो उनके मन में श्री कोबायाशी के लिए थी। तोत्तो-चान को मोटे चश्मे से झांकती हेडमास्टर जी की छोटी-छोटी आँखें बेहद अच्छी लगती थीं। उनकी आवाज मधुर भी, जिसका उनके डीलडौल से कोई तालमेल न था।

“मासाओ-चान !”

स्टेशन से घर आते-जाते वक्त तोत्तो-चान को एक ऐसी बस्ती के पास से गुजरना पड़ता था जिसमें कोरियाई लोग बसे थे। उनके बारे में वह बस एक ही बात जानती थी। वह यह कि वहाँ एक औरत रहती थी जो बीच की माँग निकाल अपने बालों को एक जूड़े में बाँधे रहती थी। उसका शरीर धुलधुल था और वह किसी नाव की तरह नुकीले आकार के सफेद रबड़ के जूते पहनती थी। उसकी पोशाक थी एक लंबा सा स्कर्ट और छोटा ब्लाउज जिसके आगे एक रिबन बंधा रहता था। वह हमेशा अपने बेटे को ही दूँढ़ती रहती थी। वह जोर से पुकारती, “मा-साओ-चान”। नाम का उच्चारण वह मा-सा-ओ-चान न कर हमेशा ‘सा’ पर जोर डालती और ‘चान’ को बेहद लंबा खींचती। तोत्तो-चान को उसका यों पुकारना उदासी से भरा लगता था।

बस्ती ओइमाची ट्रेन की पटरियों की दाईं ओर बसी हुई थी। तोत्तो-चान मासाओ-चान को भी पहचानती थी। उम्र में उससे कुछ बड़ा था वह लड़का। शायद दूसरी में पढ़ता होगा। पर उसके स्कूल का नाम तोत्तो-चान को पता नहीं था। उसके बाल उलझे रहते थे और उसके साथ हमेशा एक कुत्ता रहता था। एक दिन जब वह घर की ओर पैदल बढ़ रही थी, उस समय उसे मासाओ-चान दिखा। पैर चौड़े कर, हाथ कूल्हों पर टिकाए घमंड से भरा खड़ा था वह।

“कोरियाई !” वह तोत्तो-चान की तरफ देखकर चिल्लाया।

उसकी आवाज घृणा से भरी थी। तोत्तो-चान डर गयी। उसने तो उसका कुछ

भी नहीं बिगाड़ा था। उससे कभी बात तक नहीं की थी। अचानक यों चिल्लाने से वह बेहद घबरा गयी।

घर पहुँचते ही उसने मां को सब कुछ बताया। “मासाओ-चान ने मुझे कोरियाई कहकर बुलाया।” उसने कहा। मां ने अपना मुँह हथेलियों से ढाँप लिया। तोतो-चान ने गौर किया कि उसकी आँखें भी डबडबा आयी हैं। तोतो-चान को लगा कि कोरियाई शब्द का मतलब बहुत बुरा होता होगा। मां अपने आंसू पोंछती रही। रुलाई से उसकी नाक भी लाल हो आयी थी। “बेचारा बच्चा !” मां ने कहा। “जरूर लोग उसे कोरियाई, कोरियाई कहकर बुलाते होंगे। उसने सोचा होगा कि यह कोई गाली है। और अपना गुस्सा जताने के लिए वह भी कोरियाई कहने लगा होगा। इतने निर्दय क्यों होते हैं लोग ?”

आंसू पोंछ मां ने धीमे से तोतो-चान को धीरे-धीरे समझाया। “तुम जापानी हो और मासाओ-चान एक ऐसे देश से आया है, जिसका नाम कोरिया है। पर वह भी तुम्हारी ही तरह एक बच्चा है। तोतो-चान बेटे, तुम कभी भी बड़ी होकर यह न सोचना कि लोग अलग-अलग होते हैं। ऐसा न सोचना कि कोई जापानी है, तो कोई कोरियाई। मासाओ-चान से बुरी तरह मत पेश आना। यह बहुत बुरी बात है जो लोग सोचते हैं कि कोरियाई होने से ही कोई बुरा आदमी हो जाता है।”

तोतो-चान के लिए यह सब समझना कठिन था। पर वह इतना जरूर समझ गयी कि मासाओ-चान एक ऐसा लड़का था जिसे लोग अकारण ही बुरा कहते थे। शायद इसीलिए उसकी मां हमेशा उसे ढूँढ़ती रहती थी। अपनी तीखी आवाज में उसे पुकारती रहती थी। शायद वह यह सोचती होगी कि बच्चा आखिर गया कहाँ ? अगली सुबह तोतो-चान बस्ती के पास से गुजरी तो उसने उसकी मां को फिर से पुकारते सुना, “मा-साओ-चान”। उसकी आवाज में घबराहट थी। उसने मन ही मन ठाना वह कोरियाई न सही, पर अगर मासाओ-चान ने उसे फिर से कोरियाई कहकर पुकारा तो वह जवाब देगी, “हम सब तो बच्चे हैं। हम सब एक से हैं।” उससे दोस्ती करने की भी वह कोशिश करेगी।

मासाओ-चान की मां की पुकार में उलझन और आशंका का पुट था। ऐसी आवाज थी उसकी, जो देर तक हवा में तैरती रह जाती थी—जब तक किसी चलती ट्रेन की आवाज उसे डूबो न देती।

“मा-साओ-चान !”

दुख और रुलाई से भरी उस आवाज को एक बार सुनने पर कोई उसे कभी भुला नहीं सकता था।

चोटियां

उन दिनों तोतो-चान की दो ही इच्छाएँ थीं। पहली तो ब्लूजर पहनने की और दूसरी अपने बालों की चोटियां बनाने की। अपने से बड़ी लड़कियों को वह अकसर रेलगाड़ी में चोटियां बांधे देखा करती थी। उसका दिल चाहता था कि उसके भी बाल बड़े हो जाएँ। उसकी खुद की क्लास की सभी लड़कियों के बाल छोटे-छोटे कटे हुए थे। तोतो-चान के बाल उनसे कुछ लंबे ही थे। टेढ़ी मांग निकाल कर मां उन्हें रिबन से बांध दिया करती थी। मां का कहना था कि वह ऐसे ही अच्छी लगती है। पर वह चाहती थी कि बाल इतने लंबे हो जाएँ कि वह चोटियां बनवा सके।

आखिरकार एक दिन मां से उसने दो नन्ही-नन्ही चोटियां बनवा लीं। मां ने मुश्किल से ऊपर रबड़-बैंड लगाकर बारीक रिबन से उन्हें बांधा था। उसे लगने लगा कि वह बेहद बड़ी हो गयी है। आइने में देखते ही उसे यह समझ में आ गया कि उसकी चोटियां ट्रेन में देखी लड़कियों के मुकाबले में पतली थीं और सुअर की पूंछ जैसी लग रही थीं। पर फिर भी वह रॉकी के पास दौड़ी। गर्व से भर उन्हें उसे दिखाने लगी। रॉकी ने दो एक बार आँखें झपकायीं।

“काश मैं तुम्हारे बालों की भी चोटियां बना सकती।” तोतो-चान ने कहा।

जब वह ट्रेन में बैठी तो गर्दन सीधी ताने हुए थी। उसे डर था कि सिर को ज्यादा हिलाने-डुलाने से कहीं चोटियां खुल न जाएँ। “कितना अच्छा हो अगर कोई मेरी चोटियां देखे,” उसने सोचा, “और कहे ‘वाह, कितनी सुंदर चोटियां हैं’।” पर ना, किसी ने उसकी चोटियां नहीं देखीं। पर जब वह स्कूल पहुँची तो मियो-चान, साक्को-चान और काइको आओकी, जो सब उसकी ही क्लास की बच्चियां थीं, चीखने लगीं, “अरे पिगटेल्स !” तोतो-चान फूली न समाई। उसने लड़कियों को अपनी चोटियां छूने दीं।

पर लड़कों पर उसकी चोटियों का कोई असर ही न पड़ा। खाने की घंटी के बाद उसकी क्लास का एक बच्चा ओए अचानक ऊँचे स्वर बोला, “वाह, तोतो-चान ने अपने बाल नयी तरह से बनाए हैं। तोतो-चान तो यह सोचकर फूल उठी कि आखिर किसी लड़के ने उसकी चोटियां देखीं तो सही। उसने गर्व से कहा, “पिगटेल्स हैं।”

तब वह और पास आया। चोटियां हाथ में पकड़ीं, और कहने लगा, “मैं थक गया हूँ। कुछ देर इनका सहारा ले लूँ। अरे ये तो रेल में लटकने वाले चमड़े के हथ्यों से भी अच्छी हैं।” पर इतना सब सुनाने के बाद भी बात खत्म नहीं हुई।

ओए नन्ही सी तोतो-चान से दुगना बड़ा था। अपनी क्लास का वह सबसे बड़ा और मोटा लड़का था। जब उसने जोर से चोटियां खींचीं तो तोतो-चान धम्म

से नीचे गिर पड़ी। अपनी प्यारी चोटियों को यों हत्था कहलवाना तो उसे बुरा लगा ही था, यों जमीन पर गिरना और भी बुरा लगा। पर ओए ने उसे अब भी नहीं छोड़ा। वह अब, “जोर लगा के, हैया” कहता हुआ उन्हें खींचने लगा। ठीक वैसे ही, जैसे खेल दिवस पर रस्साकशी के समय रस्सी को खींचा गया था। तोतो-चान जोर-जोर से रोने लगी।

तोतो-चान के लिए चोटियां बड़प्पन की निशानी थी। उसने सोचा था कि सब उससे बेहद अंदब से पेश आएंगे। वह रोते हुए हेडमास्टर जी के दफ्तर की ओर भागी। दरवाजा खटखटाया। जब उन्होंने दरवाजा खोला और तोतो-चान अंदर घुसी तो वह सुबक रही थी। वे नीचे झुके।

“क्या हुआ है ?” उन्होंने पूछा।

उसने पहले अपनी चोटियां संभालीं। देखा कि कहीं खुल तो नहीं गयी हैं। तब कहा, “ओए ने जोर लगाके, हैया कहते हुए मेरी चोटियां खींचीं।”

हेडमास्टर जी ने उसकी चोटियां देखीं। उसके आंसुओं से भरे चेहरे के विपरीत वे चोटियां खुशी से नाचती-सी लग रही थीं। वे बैठ गए। तोतो-चान को अपने सामने बिठाया, और हमेशा की तरह अपने टूटे दांतों की परवाह किए बिना मुस्कराए।

“रोओ मत,” उन्होंने कहा। “तुम्हारी चोटियां तो बड़ी सुंदर लग रही हैं।”

“आपको पसंद आयी ?” उसने कुछ शर्माते हुए अपना आंसुओं से भरा चेहरा ऊपर उठाया।

“बहुत सुंदर हैं।”

तोतो-चान ने रोना बंद कर दिया, “अब मैं नहीं रोऊंगी। ओए ‘जोर लगाके, हैया’ कहेगा तो भी नहीं।” हेडमास्टर जी ने उससे सहमत होते हुए अपना सिर हिलाया। वे मुस्कराए। तोतो-चान भी मुस्कराने लगी। अब उसका हंसता चेहरा उसकी चोटियों से मेल खाने लगा था। हेडमास्टर जी से झुककर विदा लेने के बाद वह अपने साथियों से खेलने वापस भागी।

रोने की बात वह भूल ही चली थी। इतने में ओए सिर खुजलाता-खुजलाता उसके सामने आ खड़ा हुआ। “मैंने तुम्हारी चोटियां खींचीं उसके लिए माफ करना।” उसने कुछ ज्यादा ही जोर से कहा, “मुझे हेडमास्टर जी ने बुलाकर डांटा। कहा कि लड़कियों से हमेशा अच्छी तरह पेश आना चाहिए। उनका ख्याल रखना चाहिए।”

तोतो-चान को आश्चर्य हुआ। यह तो नयी बात थी। इससे पहले उसने किसी को यह कहते नहीं सुना था कि लड़कियों से अच्छा व्यवहार करना चाहिए। हर जगह लड़कों की ही पूछ होती थी। वह कई परिवारों को जानती थी। ढेरों बच्चे थे उनमें। पर हर जगह नाश्ता, खाना सब लड़कों को ही पहले दिया जाता था।

लड़कियां बोलतीं, शोर मचातीं, तो उनसे कहा जाता—लड़कियां दिखनी चाहिए, पर उनकी आवाज नहीं आनी चाहिए।

इतना होते हुए भी हेडमास्टर जी ने ओए से कहा था कि लड़कियों का ख्याल रखना चाहिए। तोतो-चान को पहले तो बात अजीब लगी। फिर लगा कि बात तो अच्छी है। कोई ख्याल रखे तो कितना अच्छा लगे। और ओए, उसके लिए तो यह एक सदमा ही था। लड़कियों से अच्छा व्यवहार करना, कोमलता बरतना, यह सब उससे कहा गया था। तोमोए में ओए के लिए डांट सुनने का यह पहला और आखिरी मौका था।

“धन्यवाद”

नए साल की छुट्टियां पास आ चलीं थीं। गर्मी की छुट्टियों की तरह इस समय बच्चे स्कूल में इकट्ठे नहीं हुए। उन्होंने अपना पूरा समय अपने परिवारों के साथ बिताया।

“मैं नए साल की छुट्टियां अपने दादाजी के साथ क्यूशू में बिताने वाली हूँ।” मिगिता सबको बताती फिरती। और ताई-चान, जिसे विज्ञान के प्रयोग करना पसंद था, कहता, “मैं अपने बड़े भाई के साथ भौतिकविज्ञान की प्रयोगशाला देखने जाऊंगा।” उसे इसी का इंतजार था। “फिर मिलेंगे,” कहते हुए चलते-चलते भी बच्चे एक दूसरे को अपनी-अपनी योजनाएं बताते जा रहे थे।

तोतो-चान अपने डैडी और मां के साथ स्कीइंग के लिए गयी। डैडी के ही आर्केंस्ट्र में निर्देशक व सैलो बजाने वाले मित्र हाइदो साइतो का शीघा के पहाड़ों पर एक खूबसूरत सा घर था। वे हरेक सर्दी उनके ही साथ उसी जगह बिताते थे। तोतो-चान जब बहुत छोटी थी, तभी से स्कीइंग सीख रही थी।

घोड़े से खिंचने वाली स्लेज गाड़ी पर बैठकर स्टेशन से स्कीइंग करने की जगह तक पहुंचना पड़ता था। वहां चारों ओर सपाट बर्फ की सफेदी रहती थी। सारी पहाड़ियां, सारे ढलान, बर्फ से ढंके रहते। बस कहीं-कहीं बीच में सूखे पेड़ों के टूठ दिखते थे। जिन लोगों के पास ठहरने के लिए श्री साइतो जैसे घर नहीं थे, उनके लिए वहां एक जापानी सराय बनी थी। एक पश्चिमी तरीके का होटल भी था। ढेरों विदेशी वहां आते थे।

पर इस साल तोतो-चान के लिए बात ही कुछ दूसरी थी। आखिर अब वह प्राथमिक शाला के पहले दर्जे में पढ़ने लगी थी। उसने थोड़ी बहुत अंग्रेजी भी सीख ली थी। डैडी ने उसे ‘धन्यवाद’ कहना भी सिखा दिया था।

हरेक विदेशी जो तोतो-चान को बर्फ के बीच स्की पहने देखता, जरूर उससे कुछ कहता। शायद वे कहते हों, “कितनी प्यारी बच्ची है।” या कुछ ऐसी ही दूसरी

बात। तोत्तो-चान वह सब समझती नहीं थी। और इस साल से पहले उन्हें क्या जवाब दे, यह भी वह नहीं जानती थी। पर अब वह अपना सिर हिलाकर जवाब देती, “थैंक यू।”

इस पर वे विदेशी मुस्कराते। आपस में कुछ और कहते। कभी-कभार कोई महिला झुकती और उसके गाल से अपना गाल सटा लेती। या कोई पुरुष उसे कंधों से पकड़कर गले से लगा लेता। तोत्तो-चान को बड़ा अच्छा लगता। उसे यह सोच-सोच कर आश्चर्य होता कि सिर्फ “थैंक यू” कहने से कितने लोगों से दोस्ती की जा सकती है।

एक दिन एक नौजवान सामने आया। उसने इशारों से कुछ कहा। तोत्तो-चान को लगा कि वह जानना चाह रहा है कि “क्या तुम मेरी स्की के अगले हिस्से पर बैठकर मेरे साथ फिसलना चाहोगी?” डैडी ने उसे कहा कि वह जा सकती है।

तोत्तो-चान ने उत्तर में “थैंक यू” कहा। तब उस नौजवान ने अपने दोनों पैर सटा लिये। तोत्तो-चान को स्की के अगले हिस्से में उकड़ू बिठाया। तब वे सबसे लंबी और आसान ढलान पर से नीचे को फिसलने लगे। लगता था मानो वे हवा से भी तेज जा रहे हों। तेजी के कारण कानों में सीटियां सी बजने लगीं। तोत्तो-चान दोनों हाथों से अपने घुटनों को जोर से भींचकर बैठी थी, ताकि वह आगे को न लुढ़क जाए। उसे बेहद डर भी लग रहा था और बेहद मजा भी आ रहा था। आखिर वे नीचे पहुंच कर रुके। पास खड़े दर्शकों ने तालियां बजाईं। स्की पर से उतरकर तोत्तो-चान ने दर्शकों की ओर झुककर उनका अभिवादन स्वीकार किया। साथ में कहा, “थैंक यू।” इस पर सबने और जोर से तालियां बजाईं।

यह तो तोत्तो-चान को काफी बाद में पता चला कि उस नौजवान का नाम शनाइडर था। वह विश्वविद्यालय का विख्यात स्कीअर था और हमेशा चांदी की बनी स्की-छड़ियां इस्तेमाल करता था। उस दिन जो बात उसे अच्छी लगी थी वह कुछ दूसरी ही थी। जब वे ढलान पार कर नीचे पहुंचे, और लोग तालियों से उनका स्वागत कर चुके, तो वह झुककर उसके पास बैठ गया। उसने तोत्तो-चान का हाथ अपने हाथों में थामा और तब उसने भी तोत्तो-चान को “थैंक यू” कहा। मानो वह कोई खास हस्ती हो। उसने तोत्तो-चान को बच्चा नहीं माना था। उसका व्यवहार बिल्कुल ऐसा था मानो तोत्तो-चान भी कोई वयस्क महिला हो। जब वह नीचे झुका था, तभी तोत्तो-चान को पता चल गया था कि वह एक भद्रपुरुष है। उस क्षण उनके पीछे दूर-दूर तक फैली बर्फीली घाटियां-चोटियां थीं जो कहीं खत्म होती नजर नहीं आती थीं।

पुस्तकालय का डिब्बा

जब बच्चे अपनी सर्दी की छुट्टियों के बाद स्कूल वापस आए तो उन्हें एक नयी चीज देखने को मिली, जिसका उन्होंने शोरगुल और चीख-पुकार के साथ स्वागत किया। उन्होंने पाया कि रेल के डिब्बों वाली कक्षाओं की कतार के ठीक सामने नया डिब्बा खड़ा था—सभागार के पास वाली फूलों की क्यारी के बिल्कुल पास। उनकी गैरहाजिरी में नया रेल का डिब्बा पुस्तकालय में बदल चुका था। स्कूल के चौकीदार रयो-चान को ऐसे काम बखूबी करने आते थे। सभी उसका बहुत सम्मान भी करते थे। उसने बेहद मेहनत की थी। डिब्बे में कई सारी शल्फें लगा दी थीं। अब उन शल्फों पर हर रंग की ढेरों किताबें सजी थीं। डिब्बे में कुछ मेजें और कुर्सियां भी थीं, मतलब कि वहां बैठकर भी पढ़ा जा सकता था।

“यह है तुम्हारा पुस्तकालय,” हेडमास्टर जी ने कहा। “कोई भी बच्चा किसी भी किताब को पढ़ सकता है। यह मत सोचना कि कुछ किताबें किसी क्लास के लिए अलग की गयी हैं। जो अच्छा लगे, पढ़ो। तुम लोग किसी भी समय यहां आ सकते हो। चाहो तो किताबें घर भी ले जा सकते हो। पर घर ले जाने पर पुस्तकें वापस लाना भी याद रखना। हां, तुम्हारे पास घर पर अगर ऐसी किताबें हों जो तुम दूसरों को पढ़वाना चाहो, तो उन्हें भी यहां ले आओ। मुझे बेहद खुशी होगी इससे। जो भी करो, तुम सब जितना ज्यादा पढ़ सको, पढ़ो।”

“आज की पहली घंटी पुस्तकालय के लिए होगी।” सभी बच्चों ने एक स्वर में कहा।

“सच, क्या तुम सभी यही चाहते हो,” हेडमास्टर जी ने उसका उत्साह देख खुश होते हुए कहा। “तो ठीक है, ऐसा ही करो आज।”

इसके बाद तोमोए के पचास के पचास बच्चे एक साथ पुस्तकालय वाले रेल डिब्बे में जा घुसे। सबने किताबें चुनीं और बैठने लगे। पर आधे ही बच्चे बैठ पाए। बाकी को खड़ा रहना पड़ा। अब डिब्बा किसी भी भीड़-भाड़ वाले रेल के डिब्बे-सा लगने लगा। वहां भी तो लोग अकसर खड़े-खड़े ही पढ़ते मिलते हैं। बड़ा ही मजेदार दृश्य था यह।

बच्चे बेहद खुश थे। तोत्तो-चान को बहुत अच्छी तरह पढ़ना नहीं आता था। उसने एक सुंदर चित्रों वाली किताब चुनी। जब सब बच्चे हाथों में किताबें ले उनके पन्ने पलटने लगे तो डिब्बे में अचानक शांति छा गयी। पर बहुत देर तक नहीं। कुछ देर बाद अलग-अलग तरह की आवाजें आने लगीं। कुछ बच्चे जोर से पढ़ने लगे। कुछ दूसरे अपरिचित चिह्न-अक्षरों के अर्थ पूछने लगे। और कुछ किताबों की अदला-बदली करने लगे। बच्चों की हंसी और खिलखिलाहट से रेल का डिब्बा गूंज उठा। एक बच्चे ने ‘गाते चित्र’ नामक किताब से एक चेहरा बनाना शुरू कर दिया।

किताब में दी गयी तुकबंदी को वह जोर से पढ़ने लगा।

एक गोला एक बिंदी, एक गोला एक बिंदी,
नाक की जगह क्रास, फिर एक चक्कर, एक बिंदी।
तीन बाल, तीन बाल, तीन बाल और वाओ,
पलक झपकते बनती देखो मोटी हाउसफ्राओ।

चित्र पूरा करने के लिए 'वाओ' कहने के साथ चेहरे का घेरा बनाना पड़ता था। और 'पलक झपकते बनती' कहने के साथ तीन आधे गोले। अगर बच्चा सभी निशान सही-सही बना लेता तो पुराने ढंग से बाल बांधे एक मोटी-सी गृहिणी की शक्ल बन जाती थी।



तोमोए में अलग-अलग विषयों पर बच्चों को अपनी-अपनी तरह से काम करने की आजादी थी। ऐसे में अगर बच्चे एक-दूसरे के लिए बाधा पैदा करते हों तो यह भी अजीब ही बात होती। असल में उन्हें कुछ यों प्रशिक्षित किया जाता था कि वे अपना काम पूरी तन्मयता से करें, आसपास चाहे कुछ भी होता रहे। अतः हाउसफ्राओ बनाते-बनाते गाने वाले बच्चे पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। हां, एक-दो बच्चे जरूर उसके साथ गुनगुनाने लगे। पर बाकी पढ़ने में व्यस्त रहे।

तोतो-चान की किताब में एक लोक कथा थी। कहानी एक अमीर मां-बाप की बेटी की थी। लड़की की शादी ही न हो पाती थी क्योंकि वह हमेशा पादती रहती थी। बड़ी परेशानियों के बाद एक दूल्हा जुटाया गया। शादी की चहल-पहल की उत्तेजना से सुहागरात को दुलहन ने इतनी जोर से बड़ा पाद मारा कि दूल्हा बिस्तर से ही उड़ गया। कमरे के पूरे साढ़े सात चक्कर लगाने के बाद वह धम्म

से नीचे गिरा और बेहोश हो गया। कहानी के साथ दिए चित्रों में से एक में दूल्हे को उड़ते हुए भी दिखाया गया था। इसके बाद इस किताब की हमेशा मांग रहने लगी।

पूरे स्कूल के बच्चे रेल के डिब्बे में यों भरे थे मानो किसी टिन में झींगा-मछली ठूँसी गयी हों। लेकिन सभी मगन हो किताबें पढ़ रहे थे। डिब्बे की खिड़की से सूरज की रोशनी उन पर पड़ रही थी। जरूर हेडमास्टर जी को यह दृश्य देख कर आनंद हुआ होगा।

वह पूरा दिन बच्चों ने पुस्तकालय में ही बिताया।

इसके बाद अन्य अवसरों पर तथा जब भी बच्चे बरसात की वजह से टहलने न जा पाते तो सब पुस्तकालय में आ बैठते। कुछ ही दिनों में पुस्तकालय बच्चों का चहेता अड्डा बन गया।

“सोचता हूँ, पुस्तकालय के पास ही एक शौचालय बनवा दूँ।” एक दिन हेडमास्टर जी ने कहा। असल में बात यह थी कि बच्चे किताबें पढ़ने में कुछ ऐसे मगन हो जाते कि वे पेशाब को रोके बैठे रहते। स्कूल में शौचालय बने तो हुए थे पर ये सभागार के उस पार। जब नहीं रहा जाता तो बच्चे अजीबो-गरीब भंगिमाओं में अपने शरीर को मोड़ते पेशाब को रोके शौचालय की तरफ भाग खड़े होते।

पूछ

एक दिन स्कूल खत्म होने के बाद तोतो-चान घर जाने की तैयारी कर रही थी कि ओए भागता हुआ आया। उसने फुसफुसा कर तोतो-चान से कहा, “हेडमास्टर जी किसी पर बेहद नाराज हो रहे हैं।”

“कहाँ ?” तोतो-चान ने पूछा।

इससे पहले हेडमास्टर जी के बेहद नाराज होने की बात उसने कभी सुनी न थी। उसे आश्चर्य हुआ। ओए भी चकित था। अन्यथा वह यों दौड़ा न आता।

“वे रसोईघर में हैं।” ओए की आंखें उत्तेजना से चौड़ी हो गयी थीं और उसके नथुने भी फैले हुए थे।

“आजो तो।”

तोतो-चान ने उसका हाथ थामा और दोनों हेडमास्टर जी के घर की ओर भागे। घर सभागार के पास था। उनकी रसोई स्कूल के पिछवाड़े वाले दरवाजे के बिल्कुल पास थी। जब तोतोचान मल वाले छेद में गिरी थी तो इसी रसोई से ही उसे सहलाने के लिए स्नान-घर ले गया था। इसी रसोई में हर दिन ‘कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से’ पकता था और बच्चों में बांटा जाता था।

दबे पांव दोनों बच्चे रसोई की ओर बढ़े। बंद दरवाजे को पार करती

हेडमास्टर जी की गुस्से से भरी आवाज उनके कानों में पड़ी।

“आपने ताकाहाशी को यह क्यों पूछा कि उसके पूछ है या नहीं ?”

जिन्हें डांट सुननी पड़ रही थी, वह उनकी ही क्लास टीचर थीं।

“मैंने तो मजाक किया था,” उन्होंने जवाब दिया। “मेरी नजर उस पर अचानक ही पड़ी। वह बेहद प्यारा लग रहा था, मैं उसी से पूछ बैठी।”

“पर आज जो कुछ आपने कहा उसकी गंभीरता को आप समझ रही हैं ? मैं आपको किस तरह समझाऊं कि ताकाहाशी के बारे में मैं कितनी सावधानी बरतता रहा हूँ ?”

तोतो-चान को अब याद आ गया कि उस दिन कक्षा में क्या हुआ था। उनकी क्लास टीचर उन्हें आदमी के विकास की कहानी बता रही थीं। उन्होंने बताया कि पहले उनके पूछ हुआ करती थी। बच्चे सुन-सुनकर खुश हो रहे थे। कोई बयस्क सुनता तो कहता कि डारविन के क्रमिक विकास के सिद्धांत का पहला परिचय बच्चों को दिया जा रहा है। इसके बाद शिक्षिका ने कहा कि आज भी पूछ की जगह हरेक के एक छोटी हड्डी होती है जिसे ‘कोक्सिक्स’ कहते हैं। इस पर हर बच्चा सोचने लगा कि उसकी कोक्सिक्स कहाँ होगी। पूरी क्लास में हल्ला मच गया। तब शिक्षिका ने मजाक में कहा “क्या पता, तुम में से किसी के पूरी की पूरी पूछ ही हो ! क्यों ताकाहाशी, कहीं तुम्हारे पूछ तो नहीं है ?”

ताकाहाशी तुरंत खड़ा हो गया। वह हंसा नहीं। सिर हिलाते हुए उसने पूरी गंभीरता से कहा “ना मेरी पूछ नहीं है।”

तोतो-चान समझ गयी कि हेडमास्टर जी इसी घटना का जिक्र कर रहे हैं। उनकी आवाज में अब और ज्यादा क्रोध समा गया था।

“क्या आपको इस बात का अहसास है कि ताकाहाशी को ‘कहीं तुम्हारे पूछ तो नहीं है’ पूछने पर कैसा लगा होगा ?”

बच्चे अध्यापिका का जवाब नहीं सुन पाए। तोतो-चान यह नहीं समझ पायी कि पूछ की बात से हेडमास्टर जी इतना नाराज क्यों हो रहे हैं। अगर हेडमास्टर जी उससे पूछते कि तोतो-चान तुम्हारे क्या पूछ है तो उसे तो इस बात में मजा ही आता।

पर वह थी एक स्वस्थ बच्ची। उसे ऐसे सवाल का बुरा क्यों लगता ! पर ताकाहाशी बौना था। वह यह जानता था कि वह कद में कभी भी और नहीं बढ़ेगा। और यही कारण था कि खेल दिवस पर हेडमास्टर जी ने ऐसे-ऐसे खेल करवाए थे जिनमें ताकाहाशी जीत सके। स्कूल में वे बच्चों को निर्वस्त्र नहाने देते थे, जिससे ताकाहाशी जैसे बच्चे अपने शरीर को लेकर संकुचाना भूल जाएं। उनकी चेष्टा यही रहती कि ताकाहाशी या यासुकी-चान जैसे विकलांग बच्चे कुठिल न रह जाएं। अपने को दूसरों से कम या हीन न समझने लगे। और इसलिए हेडमास्टर जी यह समझ

ही नहीं पा रहे थे कि उनकी इतनी चेष्टाओं के बाद कोई शिक्षक बिना सोचे-समझे इस तरह का सवाल ताकाहाशी के साथ कैसे कर सका था कि “कहीं तुम्हारे पूछ तो नहीं ?”

असल में हेडमास्टर जी अचानक ठीक उसी समय उनकी कक्षा में पहुंच गए थे। क्लास के पीछे खड़े-खड़े उन्होंने यह बातचीत भी सुन ली थी।

तोतो-चान के कानों में अब शिक्षिका के रोने की आवाज पड़ी। “मुझसे भूल हुई,” उन्होंने सिसकते हुए स्वीकारा। “मैं ताकाहाशी से कैसे माफी मांगूँ ?”

हेडमास्टर जी कुछ न बोले। तोतो-चान को कांच के उस पार उनका चेहरा भी नहीं दिख रहा था, पर उसका मन हो रहा था कि वह उसी वक्त उनके पास दौड़ी जाए। बात तो वह पूरी तरह नहीं समझी थी, पर उसे यह जरूर लग रहा था कि हेडमास्टर जी बच्चों के सच्चे साथी हैं। ओए को भी जरूर यही लगा होगा।

तोतो-चान यह कभी नहीं भूली कि हेडमास्टर जी ने उनकी क्लास टीचर से अकेले रसोई में बात की थी, दूसरे शिक्षकों के सामने नहीं। इस घटना से ही पता चल जाता है कि वे एक सच्चे शिक्षक थे। हालांकि यह बात खुद तोतो-चान उस समय समझ नहीं पायी थी। लेकिन उनके शब्द और स्वर हमेशा के लिए तोतो-चान के मन-मस्तिष्क में समा गये।

वसंत तब आया ही चाहता था। तोतो-चान का तोमोए में यह दूसरा वसंत था। स्कूल का नया सत्र भी आरंभ होने वाला था।

तोमोए में दूसरा साल

स्कूल के मैदान में लगे पेड़ों पर कोमल हरी कोपलें फूटने लगी थीं। सारी क्यारियां भी फूलों से लद चली थीं। नरगिस, डेफोडिल और पैनी के फूल मानो सिर उठा कर हर छात्र-छात्रा से पूछते, “कहो, कैसे हो तुम ?” ट्यूलिप की डालें जैसे अंगड़ाई लेकर चुस्ती से तन कर सीधी हो गयी थीं। चेरी की कलियां धीमी बयार में कुछ यों कांपती लगतीं मानो इशारा पाते ही खिल उठेंगी।

तरण-ताल के पास वाले क्रंकीट के छोटे बेसिन में एक बड़ी काली मछली के पीछे सोन मछलियां कतार बांधे तैर रही थीं। मानो शरीर को झटकाकर आनंद से भर उठी हों।

“वसंत आ गया है,” इस घोषणा की कोई जरूरत थी ही नहीं क्योंकि आसपास हरेक चीज ताजी और जीवंत लगने लगी थी। सब जानते थे कि वसंत आ गया है।

उस बात को अब पूरा एक साल बीत चुका था जब तोतो-चान ने मां का हाथ थामे पहली बार तोमोए में कदम रखा था। उस समय उसने जमीन से

उगते-बढ़ते गेट को देखा था। कक्षाओं को रेल के डिब्बे में लगते देखा था। उस समय वह यह सब देख खुशी से उछल पड़ी थी। वह तो तभी विश्वास से भर चली थी कि हेडमास्टर सोसाकु कोबायाशी उसके दोस्त थे। और अब साल भर बाद तो तोतो-चान और उसके साथियों का नया रुतबा था। अब वे सब दूसरी कक्षा में आ गए थे। पहली कक्षा के नए बच्चे भी इस वातावरण को निरखते-परखते आने लगे थे। ठीक वैसे ही जैसे साल भर पहले तोतो-चान और उसके साथी आये थे।

तोतो-चान के लिए पिछले साल का हर दिन नयी-नयी घटनाओं से भरा था। उसने हर दिन का बेसब्री से स्वागत किया था। सड़क पर फिरने वाले साजिंदे उसे अभी भी बेहद पसंद थे। पर अब उसका ढेरों दूसरी चीजों से परिचय हो गया था जो उसे उतनी ही पसंद आती थीं। आफत मानकर एक स्कूल से निकाल दी गयी वह नन्ही बच्ची साल भर में ही तोमोए की गरिमा के अनुरूप एक जिम्मेदार बच्ची में बदल चुकी थी।

अनेक माता-पिता ऐसे भी थे जो तोमोए की शिक्षा पद्धति के बारे में शक्ति रहते थे। एक समय तो तोतो-चान के मां-डैडी ने भी यह सोचना शुरू कर दिया था कि उन्होंने अपनी बच्ची को तोमोए में दाखिल करवा कर ठीक काम किया भी है या नहीं। कुछ माता-पिता कोबायाशी की शिक्षा-प्रणाली को सतही समझ तोमोए से इतना शक्ति हो गए कि उन्होंने अपने बच्चों को तोमोए से निकाल दूसरे स्कूलों में डाल दिया। वे अपने बच्चों को तोमोए में छोड़ने से घबराने लगे थे। पर बच्चे तोमोए छोड़ना नहीं चाहते थे। जाने की बात से ही रोने लगते। सौभाग्य से, तोतो-चान की क्लास का कोई बच्चा इस साल नहीं जा रहा था। लेकिन बड़ी क्लास का एक बच्चा धाड़ें मार-मारकर रो रहा था। वह इतना हताश हो गया कि उसने अपने आवेश में हेडमास्टर जी की पीठ पर मुक्के बरसाने शुरू कर दिए और गिरने से उसके घुटने छिल गये। हेडमास्टर जी की आंखें भी रोने से लाल हो चली थीं। आखिर उसके मां-बाप उसे लेकर बाहर जाने लगे। जाते-जाते वह मुड़-मुड़कर हाथ हिलाता जा रहा था।

पर ऐसी दुखद घटनाएं कम ही होती थीं। और फिर तोतो-चान अब नयी क्लास में थी। आने वाले अचरजों और नयी खुशियों की आतुरता उसके मन में बसी थी। विशेष बात तो यह थी कि उसकी पीठ और उसके बस्ते की दोस्ती भी अब गहरा चुकी थी।

स्वान-लेक

तोतो-चान को हिबिया हाल में स्वान-लेक नामक बैले नाटिका देखने ले जाया गया। डैडी उसमें एकल वायलिन वादन कर रहे थे और नाचने वालों की टोली अति उत्तम

था। बैले नृत्य देखने का उसका यह पहला मौका था। जो नर्तकी हंसों की रानी बनी थी, उसके सिर पर एक छोटा-सा चमचमाता मुकुट था। वह ऊंची-ऊंची कुदान भर कर नाच रही थी। लगता था मानो सच में कोई हंस ही नाच रहा हो। कम से कम तोतो-चान को तो ऐसा ही लग रहा था। नाटिका में एक राजकुमार को हंसों की रानी से प्रेम हो जाता है। और अंत में दोनों साथ-साथ नाचने लगते हैं। संगीत भी तोतो-चान को बहुत अच्छा लगा। उसे नाटिका इतनी प्रभावशाली लगी कि वह घर लौटने पर भी इस बारे में सोचती रही। अगले दिन सुबह वह उठकर सीधे रसोई घर में पहुंची। उसने बालों में कंधी तक नहीं की थी। मां वहीं थी। उसने मां के सामने घोषणा कर डाली, “मां, मैं जासूस नहीं बनना चाहती, साजिंदा भी नहीं, टिकट बाबू भी नहीं। मैं तो बैलेरिना बनूंगी। स्वान-लेक की नाटिका में नाचूंगी।”

“ओह !” मां को कतई आश्चर्य नहीं हुआ।

खुद जाकर बैले तो तोतो-चान ने पहली बार देखा था। पर इसेडोरा डंकन के बारे में उसने हेडमास्टर जी से बहुत कुछ सुन रखा था। इसेडोरा प्रसिद्ध अमरीकी नर्तकी थी। श्री कोबायाशी की तरह इसेडोरा भी डेलक्रोज से प्रभावित हुई थी। अगर हेडमास्टर जी इसेडोरा से प्रभावित थे तो यह तोतो-चान के लिए काफी था। और इसलिए, गोकि उसने इसेडोरा को कभी नाचते नहीं देखा था, उसे लगता था कि वह उन्हें अच्छी तरह जानती है। यानी नर्तकी बनने का सपना उसके लिए कोई अजीबो-गरीब सपना नहीं था।

श्री कोबायाशी के एक मित्र थे। वे तोमोए में बच्चों को यूथिथिक्स सिखाने आते थे। तोतो-चान के स्कूल के पास ही उनकी नृत्यशाला थी। मां ने यह व्यवस्था कर दी कि वह स्कूल के बाद वहीं बैले नृत्य सीखने चली जाए। मां अपनी तरफ से तोतो-चान से कभी न कहती कि ‘वह करो वह करो’। पर जब भी तोतो-चान कुछ करना या सीखना चाहती तो वह सवाल जवाब में नहीं उलझती। खुद पहल करती और व्यवस्था कर देती।

तोतो-चान ने नृत्यशाला में नाच सीखना शुरू किया। वह पहले ही दिन से उस दिन का इंतजार करने लगी जब वह स्वान-लेक नाच सकेगी। पर नृत्य शिक्षक का अपना ही तरीका था। वे ढेरों यूथिथिक्स की कसरतें करवाते। तब वे सभी छात्राओं को पियानो या ग्रामोफोन के संगीत पर कमर ताल से चलने को कहते। चलते समय बच्चों गीत की कोई एक पंक्ति भी बोलते।

एक प्रार्थना थी “पहाड़ पर चमको और मेरी आत्मा को शुद्ध करो।” यह प्रार्थना फीजी पर्वत पर चढ़ने वाले तीर्थ यात्री गाया करते थे। बच्चे इसी प्रार्थना की एक पंक्ति ‘पहाड़ पर चमको’ दोहराते-दोहराते चलते। तब अचानक शिक्षक कहते, “मुद्रा बनाओ।” इस पर सभी बच्चों को कोई भंगिमा बनाकर स्थिर खड़े

रहना पड़ता था। स्वयं शिक्षक भी तब “आ ५ ५ च ५ ५” जैसी आवाज निकालते और मुद्रा बनाते। उनकी भंगिमा कभी ‘स्वर्ग को ताकते हुए’ होती तो कभी ‘त्रस्त मानव’ की। त्रस्त मानव की मुद्रा बनाते समय वे गुड़ी-मुड़ी होकर नीचे बैठ जाते और अपना सिर दोनों हाथों में धाम लेते।

पर तोतो-चान के मन में तो कुछ और बसा था। उसका बिंब था चमकीला मुकुट और फ्रिलवाली सफेद पोशाक पहने एक राजहंसिनी। ‘पहाड़ पर चमको’ या ‘आ ५ ५ च ५ ५’ उसके मन में बसा बिंब नहीं था।

एक दिन साहस जुटाकर तोतो-चान शिक्षक के पास गयी। तोतो-चान ने अपने हाथ फैलाए और हंस के पंखों की तरह उन्हें फड़फड़ाने लगी।

“क्या हम ऐसा कुछ कभी नहीं करेंगे?” उसने पूछा।

शिक्षक बेहद सुंदर थे, उनकी आंखें बड़ी-बड़ी और नाक वक्र थी।

“उस तरह का नाच हम यहां नहीं करते।” उन्होंने कहा।

इसके बाद तोतो-चान कभी लौटकर नृत्यशाला में नहीं गयी। बिना बैले के जूते पहने नंगे पांव उछलना उसे पसंद था। मन से गढ़कर वह मुद्राएं भी बनाती। और यह इच्छा उसके मन में अब भी बसी थी कि काश वह छोटा-सा चमचमाता मुकुट पहने नाच सकती।

“स्वान-लेक अच्छी नाटिका है,” शिक्षक ने कहा था। “पर मैं चाहता-हूँ कि मैं तुम सबमें स्वेच्छा से, आजादी से नाचने की आदत डाल सकूँ।”

कई साल गुजर जाने के बाद ही तोतो-चान को अपने शिक्षक का नाम पता चला। वे बाकुईशी थे। उन्होंने ही जापान को मुक्त बैले दिया। और तो और उनके ही कारण उस इलाके का नाम “जियुगाओका” (मुक्ति-पर्वत) पड़ा था। जिस समय वह तोतो-चान को स्वेच्छा से नाचने का आनंद सिखाना चाह रहे थे, उस समय उनकी उम्र पचास वर्ष की थी।

खेती-बाड़ी के शिक्षक

“आज ये तुम्हारे शिक्षक हैं। ये तुम्हें ढेरों नयी-नयी बातें बताएंगे।”

यों परिचय दिया था हेडमास्टर जी ने एक नए शिक्षक का। तोतो-चान ने उनकी ओर ध्यान से देखा। एक तो उनकी पोशाक ही शिक्षकों जैसी नहीं थी। उन्होंने धारियों वाली सूती जैकेट बनियान के ऊपर पहन रखी थी। उनके गले में टाई की जगह एक गमछा झूल रहा था। मोटे नीले सूती कपड़े की तंग पहचों वाली पैंट पहने खड़े थे वे। उनके मोजे भी मोटे रबड़ के थे, जैसे मजदूरों के होते हैं। और हाथ में पुआल का उधड़ा सा टोप था।

बच्चे उस समय कुहोन्बुत्सु मंदिर के पास एक खेत में खड़े थे।

तोतो-चान नए शिक्षक को ध्यान से देख रही थी। उसे लगा, उसने पहले भी उन्हें कहीं देखा है। कहां देखा होगा? वह सोचती रही। उनका झुर्रीदार चेहरा धूप में तपा हुआ था। बेल्ट की जगह एक काली रस्सी बंधी थी। रस्सी के एक छोर से एक काला पाइप लटक रहा था। वह भी तोतो-चान को पहचाना-परिचित लग रहा था। और ठीक तभी उसे याद आ गया।

“आप नहर के किनारे खेती करते हैं ना!” उसने खुश होते हुए कहा।

“बिल्कुल ठीक,” नए शिक्षक बोले। उनकी मुस्कान से उनके चेहरे की झुर्रियां और गहरा गयीं। “जब कभी तुम बच्चे कुहोन्बुत्सु की ओर सैर करने निकलते हो तब तुम्हें मेरे खेत के पास से गुजरना पड़ता है। मेरा खेत वही तो है जिसमें सरसों के फूल खिले हुए हैं।”

“ओहो! और आज आप हमारे टीचर होंगे।” बच्चे बड़े उत्साहित होकर चिल्लाए।

“नहीं, नहीं।” उन्होंने हाथ हिलाते हुए कहा, “मैं टीचर-वीचर नहीं हूँ। मैं एक किसान हूँ। तुम्हारे हेडमास्टर जी ने मुझे कहा है कि मैं कुछ बताऊँ। बस इसीलिए आया हूँ।”

“ना, यह बात सच नहीं है। ये सच में शिक्षक हैं। खेती-बाड़ी के शिक्षक।” हेडमास्टर जी ने उनके पास आकर कहा। “और इन्होंने कृपा कर मेरा आग्रह माना है। ये बताएंगे कि खेत में फसल कैसे बोई जाती है। जैसे कोई तंदूर वाला हमें यह सिखा सकता है कि डबलरोटी कैसे बनाई जाती है, वैसे ही यह भी सीखा जा सकता है कि खेत में फसल कैसे बोई जाती है। अब आप बच्चों को बताएं,” उन्होंने किसान से कहा, “ताकि काम शुरू किया जा सके।”

किसी भी सामान्य प्राथमिक पाठशाला में कुछ भी पढ़ाने से पहले शिक्षक की कागजी शैक्षणिक-योग्यता जरूरी मानी जाती है। पर श्री कोबायाशी ऐसी चीजों की परवाह नहीं करते थे। उनका मानना था कि बच्चे किसी को कुछ करते हुए देखने के बाद खुद उसे अपने हाथों से करके सीख सकते हैं।

“तो चलो हम काम शुरू करते हैं।” खेती-बाड़ी के शिक्षक ने कहा।

कुहोन्बुत्सु ताल के पास ही पेड़ों की छाया में सब इकट्ठे थे, जो अपेक्षाकृत शांत जगह थी। हेडमास्टर जी ने एक रेल के डिब्बे का एक हिस्सा वहां पहले ही भिजवा दिया था। उसमें बच्चों के खेती-बाड़ी के औजार, फावड़े और कुदालें, आदि रखे थे। वह आधा डिब्बा एक खेत के बीचों-बीच स्थिर खड़ा था। उसी खेत में बच्चे खेती करने वाले थे।

शिक्षक के कहने पर बच्चे फावड़े, कुदालें ले आए। तब शिक्षक ने उन्हें खरपतवार के बारे में बताया। बताया कि वे बड़ी बेशरमी से उगते हैं। अनाज के पौधों से कहीं तेजी से बढ़ते हैं और इतने ऊंचे हो जाते हैं कि धूप रोक लेते हैं।

उनके बीच हर तरह के कीड़े-मकोड़े, जानवर अपना घर बनाते हैं। और तो और, खरपतवार अपने बढ़ने के लिए जमीन से पानी और खाना भी सोख लेते हैं। नए टीचर सब बातें एक के बाद एक बताते जा रहे थे। पर बोलते समय उनके हाथ एक क्षण भी रुके नहीं थे। हाथ बराबर काम कर रहे थे। हाथों से वे खरपतवार उखाड़ते जा रहे थे। बच्चे भी उनकी देखा-देखी सब ओर का खरपतवार उखाड़ने लगे। इसके बाद उन्होंने कुदाल का इस्तेमाल बताया। बीज बोने के लिए कतारें कैसे बनाते हैं, यह बताया। खाद कैसे छिड़की जाती है, यह बताया। और भी ढेरों बातें बतायीं जो खेती के लिए जरूरी होती हैं। यह सब उन्होंने करके दिखाया।

इतने में खेत के एक कोने से छोटा-सा सांप निकला और एक बड़े लड़के तोतो-चान के हाथ पर उसने डस ही लिया होता। पर खेती-बाड़ी के शिक्षक ने बताया, “यहां के सांप जहरीले नहीं हैं। जब तक आदमी उन्हें तंग न करें, वे नुकसान भी नहीं पहुंचाते।”

खेत को बोने का तरीका बताने के अलावा नए शिक्षक ने कीड़े-मकोड़ों, चिड़ियों, तितलियों, और मौसम के बारे में भी बड़ी मजेदार बातें बतायीं। और काम से गठीले हुए उनके हाथ मानो उनकी कही बातों की पुष्टि कर रहे थे। जो कुछ भी वे कह रहे थे, सब उनके अनुभव से जानी-परखी बातें थीं।

बच्चे पसीने से तरबतर थे। वे नए टीचर की मदद से खेत बो चुके थे। कुछ कतारें टेढ़ी-मेढ़ी थीं, पर उन्हें अनदेखा किया जाये तो पूरा खेत करीने से बोया लगता था।

इस दिन के बाद बच्चे उस किसान का सम्मान करने लगे और जब भी उन्हें देखते, तुरंत चिल्ला पड़ते, “वो रहे हमारे खेती-बाड़ी के शिक्षक।” और जब भी उनके इस नए शिक्षक के पास कुछ खाद बचती, वे आते और बच्चों के खेत में छिड़क जाते। बच्चों के खेत में कोंपलें फूटने लगीं। पौध धीरे-धीरे बढ़ने लगे। हर दिन कोई न कोई बच्चा वहां चक्कर लगा जाता। लौटकर हेडमास्टर जी और बाकी दोस्तों को सारा हाल सुनाता। बच्चों ने अपने नन्हे हाथों से बोए बीजों को पहली बार धरती की कोख से पनपते देखा। यह आनंद अनूठा था। जब भी दो-तीन बच्चे साथ-साथ गपशप करते होते तो बातचीत जरूर खेत की प्रगति की ओर मुड़ जाती थी।

विश्व के कई हिस्सों में अब भयानक घटनाएं घटने लगी थीं। पर तोमोए के बच्चे आपस में अपने नन्हे खेत की बात करते थे। खेतों में ही तो सुख-शांति बसते हैं।

खुले में रसोई

एक दिन स्कूल खत्म होने के बाद तोतो-चान किसी से बात किए बिना, विदा लिए बिना ही स्कूल के गेट से निकलकर जियुगाओका स्टेशन की ओर भागी। वह बड़बड़ाती जा रही थी, “थंडर केन्यान, खुले में रसोई।”

एक छोटी-सी लड़की के याद रखने के लिए यह लंबी चौड़ी और कठिन बात थी। शायद उतनी भी नहीं जितनी कि उसने एक कॉमिक में पढ़ी थी। कहानी कुछ यों थी कि एक आदमी का नाम बेहद लंबा था। एक बार वह एक कुएं में गिर गया। कुछ लोग पास से गुजरे। नाम पूछा। नाम इतना लंबा था कि वह बताए उससे पहले ही वह डूब गया।

तोतो-चान पूरी बात बार-बार दोहराती जा रही थी। पर अगर कोई पास में खड़ा होकर उस प्रसिद्ध लंबे नाम को भी बोलता जो ‘जुगेमू-जुगेमू’ से शुरू होता था, तो वह जरूर अपनी रटी हुई बात भूल जाती। सच तो यह था अगर वह एक बार भी किसी कीचड़ के गड्ढे को पार कर इतना भर कहती कि “ये S S कूदी” तो भी वह अपनी बात भूल सकती थी। इसलिए अपनी बात को बार-बार रटते रहने के अलावा उसके पास कोई चारा नहीं था। भाग्य से उस दिन ट्रेन में उससे किसी ने बात नहीं की। न ही उसने किसी चीज को आतुरता से जानना चाहा। एक बार भी उसने अपने आप से “वह भला क्या था ?” नहीं पूछा। पर फिर भी स्टेशन से निकलते-निकलते किसी ने उसे पहचान लिया। कहा, “हेलो ! क्यों, वापस लौट आई ?” तोतो-चान जवाब देने ही देने वाली थी कि ऐन वक्त पर उसने अपने आप को रोक लिया। इसलिए सिर्फ हाथ हिलाकर अभिवादन किया और जल्दी से घर की ओर भागी।

वह जैसे ही घर के दरवाजे पर पहुंची तो मां को देखा। देखते ही जोर से बोली, “थंडर केन्यान, खुले में रसोई।” मां कुछ समझी नहीं। उसने पहले सोचा कि यह कोई जूड़ो-पुकार होगी। तब सोचा, शायद सैंतालिस रॉनिन का कोई नारा होगा। तब कहीं जाकर उसे समझ में आया। जियुगाओका से तीन स्टेशन पहले एक बेहद सुंदर जगह थी। जगह का नाम था ‘तोदोरोकी केइकोकु’ यानी (थंडर केन्यान—वज्रपात दर्रा)। तोक्यो शहर का जाना-माना दर्शनीय स्थल था वह। वहां एक बड़ा-सा झरना था, एक नदी थी, आसपास घना और सुंदर जंगल था। अब तोतो-चान की बात में समझने को बचा था एक हिस्सा—“खुले में रसोई।” इसका मतलब जरूर यह होगा कि सब बच्चे वहां जाकर रसोई पकाने वाले होंगे। पर कितनी लंबी और कठिन बात थी बच्चों के याद रखने के लिए। पर तोतो-चान याद रख पायी। इससे यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि अगर बच्चों की रुचि जाग उठे तो वे कठिन से कठिन बात को भी याद रख सकते हैं।

याद रखने की बात के बोझ से मुक्त होकर तोतो-चान ने चैन की सांस ली। अब वह जल्दी-जल्दी एक-एक करके दूसरी बातें बताने में लग गयी। अगले शुक्रवार को सुबह बच्चों को स्कूल में इकट्ठा होना था। साथ में उन्हें एक सूप का प्याला, एक चावल का बर्तन, एक जोड़ा चॉपस्टिक्स और एक कटोरी कच्चे चावल ले जाने थे। हेडमास्टर जी का कहना था कि वही पक कर दो कटोरी भात बन जाएगा। हां, वहां वे लोग सुअर के गोشت का सूप भी पकाने वाले थे, इसलिए साथ में थोड़ा-सा मांस और कुछ सब्जियां भी ले जानी थीं। बच्चे अगर दोपहर-बाद कुछ चना-चबेना खाना चाहें तो साथ ले जा सकते थे।

अगले कई दिनों तक तोतो-चान जब भी घर में रहती, मां के इर्द-गिर्द मंडराती रहती। वह बड़े ध्यान से देखती कि मां छुरी कैसे पकड़ती है, भगोना कैसे उठाती है, चावल कैसे परोसती है। मां को रसोई में काम करते देखना उसे अच्छा



लगता था। पर सबसे अच्छा उसे तब लगता जब मां गर्म ढक्कन या भगोना छू लेने पर कहती, “अरे, यह तो बड़ा गर्म है।” और तब चट से अपनी तर्जनी और अंगूठे से अपने कान के कोने को पकड़ लेती।

“ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि कान हमेशा ठंडे रहते हैं।” मां ने समझा कर बताया था।

तोतो-चान के लिए ऐसा करना बड़प्पन की निशानी थी। इस बात का प्रमाण भी कि रसोई करने का मां को लंबा-चौड़ा अनुभव है। उसने अपने आप से कहा, “जब हम थंडर केन्यान में कुछ पकायेंगे तो मैं भी ठीक ऐसा ही करूंगी।”

आखिर शुक्रवार आया। सब ट्रेन से थंडर केन्यान पहुंच गये। हेडमास्टर जी ने जंगल में इकट्ठा हुए बच्चों को ध्यान से देखा। उनके नन्हे-प्यारे चेहरे लंबे, ऊंचे पेड़ों से छनकर आती धूप में चमक रहे थे। उनकी पीठ पर लदे झोले सामान से भरे थे। वे उत्सुकता से हेडमास्टर जी की बात सुनने का इंतजार कर रहे थे। उनके ठीक पीछे विशाल झरना था। झरना अपने ही लय-ताल में बराबर झर रहा था।

“अब,” हेडमास्टर जी ने कहा। “सबसे पहले हम छोटी टुकड़ियों में बंट जाते हैं। कुछ बच्चे चूल्हे बनाएंगे, कुछ चावल साफ कर चावल पकाएंगे। उसके बाद हम सब सूप बनाने का काम करेंगे। तो करें तैयारी ?”

बच्चों ने तब ‘पत्थर, कागज, कैंची’ से पुग कर अपने आप को टुकड़ियों में बांट लिया। चूंकि वे सिर्फ 50 के लगभग थे इसलिए जल्दी ही वे छह टुकड़ियों में बंट गये। तब कुछ गह्वे खोदे गये। ईंटों से चूल्हे बने। ऊपर लोहे की छड़ें रखी गयीं ताकि भगोने रखे जा सकें। कुछ बच्चे लकड़ी चुनने जंगल की ओर भागे तो कुछ दूसरे चावल धोने नदी की ओर। बच्चों ने अपने आप में काम बांट लिए। तोतो-चान ने कहा कि वह सब्जियां काटेगी और पोरक का सूप बनाएगी। तोतो-चान से दो वर्ष बड़ा लड़का भी सब्जियां काट रहा था। लेकिन उसके काटे टुकड़े या तो बहुत बड़े थे या बहुत छोटे। फिर भी वह जुटा रहा। पसीना उसके नाक पर चमकने लगा था। तोतो-चान ने मां की नकल करते हुए बैंगन, आलू, प्याज और जिमीकंद आदि के टुकड़े काटे। उसकी काटी सब्जियों का आकार ठीक था। उसने बैंगन और चुकन्दर के बारीक टुकड़ों में नमक-मिर्च डालकर अचार भी बनाया। अपने से बड़े बच्चों को भी वह सलाह देती जा रही थी। उस समय तोतो-चान को लगा कि वह तो मां ही बन गयी है। सच तो यह था कि सब बच्चे उसके अचार से बड़े प्रभावित भी हुए थे।

“मैंने सोचा कि बनाकर देखते हैं, बनता है या नहीं।” उसने बड़ी विनम्रता से कहा।

जब सूप के बारे में हर एक बच्चे से पूछा गया तो उन्हें बड़ा मजा आया। हर ओर से ‘अरे।’ ‘बाबा रे।’ की आवाजें आने लगीं। बच्चों की खिलखिलाहट

गूंजने लगी। चिड़ियों का चहचहाना भी उस शोरगुल में आकर मिल रहा था। इसी बीच सभी पत्तियों में से खुशबू उड़ने लगी थी। किसी चीज को पकते देखने का अनुभव इसके पहले कम ही बच्चों को था। आंच के ताप को कम-ज्यादा करना होता है, इसका ज्ञान उन्हें नहीं था। उन्होंने तो बस अपने सामने रखा खाना खाया भर था। पकाने का झंझट और सुख पाने का उन सबका पहला ही अनुभव था। हरेक कच्ची चीज का रंग-रूप किस-किस तरह और कितना बदला, यह देखना भी एक अनूठा ही अनुभव था।

अंततः हरेक टुकड़ी का काम खत्म हुआ। हेडमास्टर जी ने बच्चों से एक बड़े घेरे में बैठने को कहा। सबके सामने सूप और चावल का प्याला था। पर तोतो-चान ने अपनी टुकड़ी का पकाया सूप तब तक नहीं ले जाने दिया, जब तक उसने अपने मन की इच्छा पूरी न कर ली। उसने गर्म ढक्कन उठाया। तब कहा, “ओह। यह तो गर्म है।” फिर उसने अपने दोनों हाथों की उंगलियों से दोनों कानों को पकड़ लिया। फिर उसने कहा, “अब ले जाओ” और तब पत्तीला बच्चों के बीच ले जाया गया। उसके ऐसा करने से किसी भी बच्चे पर कोई असर नहीं पड़ा। लेकिन तोतो-चान को मन ही मन बड़ा संतोष हुआ।

सब बच्चे बेहद भूखे थे। पर उनकी आतुरता का खास कारण यह भी था कि यह खाना उनका अपना पकाया हुआ था। बच्चों ने तब “चबाओ, चबाओ, ठीक से चबाओ” गाया। तब ईश्वर को धन्यवाद दिया। इसके बाद अचानक ही जंगल में चुप्पी छा गयी। देर तक बस झरने के अनवरत बहने की आवाज ही सुनाई देती रही।

“तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो !”

“तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो !” यह वह वाक्य था जो हेडमास्टर जी हमेशा तोतो-चान को देखते ही कहते थे। और हर बार जब वह यह कहते तो तोतो-चान मुस्कराकर एक छोटी-सी कुंचाल भरती और कहती, “हां, मैं अच्छी बच्ची हूं।” उसे इस बात पर पूरा-पूरा विश्वास था।

कई अर्थों में तोतो-चान सच में अच्छी लड़की थी। उसके मन में सबके प्रति सहृदयता थी। खासतौर पर अपने विकलांग साथियों के प्रति। कोई दूसरा बच्चा अगर उसके इन साथियों को कड़वी या कठोर बात कहता तो वह पूरे जोश के साथ प्रतिवाद करती। कई बार तो कहा-सुनी में आखिरकार उसे ही रोना पड़ता था। इसके अलावा अगर उसे कहीं भी घायल जानवर मिल जाता तो वह उसकी देखभाल का हर उपाय करती। पर इसके बावजूद अक्सर उसके शिक्षक तोतो-चान के असाधारण के प्रति आकर्षण और हर नयी चीज को जान लेने की उत्कंठा से

लगातार हैरान रहते थे। क्योंकि जब भी वह किसी चीज को जान लेने की मन में ठान लेती तो उसे कोई रोक नहीं सकता था और तब वह तरह-तरह की कड़िनाइयों में जा फंसती थी।

वह तरह-तरह के अचरज भरे काम करती थी। सभागार की ओर कतार बनाकर जाते समय अगर उसके मन में उठता कि बांहों के नीचे से चोटियां पीछे को सीधी खड़ी कर चला जाए तो क्या होगा ? बात सूझने पर वह तुरंत यह करके भी देखती। एक बार रेल का डिब्बा साफ करने की उसकी बारी आयी। उसने कभी वहां फर्श पर छोटा चोर दरवाजा देखा था। दरवाजा शायद रेलगाड़ी की अंदरूनी मंशीन की गड़बड़ी को ठीक करने के लिए बनाया गया था। सफाई करने के बाद उसने कचरे को उसी दरवाजे से फेंकना चाहा। दरवाजा खुला तो सही, पर बंद नहीं हो पाया। ना जाने कितने लोगों की कोशिशों के बाद उसे बंद किया जा सका। एक बार यों हुआ कि उसे किसी ने बताया कि मांस के टुकड़े को किसी हुक से कैसे टांग दिया जाता है। तब वह कसरत करने वाली सबसे ऊंची छड़ को एक हाथ से पकड़कर लटक गयी। पता नहीं वह कितनी देर वहीं लटकी रही। अचानक कोई शिक्षक आये। जानना चाहा कि आखिर वह कर क्या रही है। उसका जवाब था, “आज मैं मांस का टुकड़ा बनी लटक रही हूं।” पर इतने में उसकी पकड़ छूट गयी और वह धड़ाम से नीचे आ गिरी। इतनी जोर से कि सारे दिन उसके मुंह से चूं तक न निकल पाई। इसके अलावा एक बार वह गंदी हौदी में भी जा गिरी थी, पर उसके बारे में सबको पता है ही।

ऐसी कारस्तानियां वह हमेशा करती रहती थी, पर हेडमास्टर जी ने एक बार भी उसकी शिकायत करने के लिए उसके मां-डैडी को नहीं बुलवाया। वे दूसरे बच्चों के माता-पिता को भी नहीं बुलवाते थे। वे ऐसे सारे मसले बच्चों और अपने बीच ही सुलझा लेते थे। जैसे उन्होंने पहले दिन तोतो-चान को चार घंटे बोलते सुना था, वैसे ही वे हर बच्चे की बात सुनते थे। बच्चे ने कैसी भी गलती क्यों न की हो, अगर उसे यह अहसास हो जाता कि उसने भूल की है तो वे उसे माफी मांगने भर को ही कहते थे।

तोतो-चान के बारे में बच्चों के माता-पिता और अध्यापकों की शिकायतें हेडमास्टर जी के कानों तक भी आयी होंगी। शायद यही वजह थी कि वे जब भी उसे देखते तो यह कहना न भूलते, “तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो !” अगर कोई बड़ा व्यक्ति सुनता तो तुरंत समझ लेता कि वे ‘सच में’ पर खास जोर दे रहे हैं।

यह कह कर जो बात वे तोतो-चान को बताना चाहते होंगे वह शायद यह थी कि—लोग शायद कुछ कारणों से तुम्हें अच्छी लड़की न समझते हों, पर तुम्हारा असली रूप कतई खराब नहीं है। तुम में कई गुण हैं। उन्हें मैं बहुत अच्छी तरह पहचानता हूं। वे उस वाक्य से क्या कहना चाहते थे, यह बात तोतो-चान समझे, उसमें कई साल लगे गए। उनकी बात उस समय वह ठीक-ठीक नहीं समझती थी।

पर फिर भी यह विश्वास तो हेडमास्टर जी उस समय भी उसमें फूंक पाए थे कि वह एक “अच्छी बच्ची है।” जिस समय वह अपनी किसी शैतानी में उलझी होती तब भी उसके मन में हेडमास्टर जी की बात बराबर गूँजती रहती। कई बार तो जब वह बाद में अपने किए पर विचारती तो अचानक अपने आप से पूछ बैठती, “हे भगवान, यह क्या किया मैंने ?”

तोमोए में बिताए पूरे समय में श्री कोबायाशी यह बेहद जरूरी बात तोत्तो-चान के लिए दोहराते रहे थे। और शायद ये ही शब्द थे जिन्होंने अंततः उसके जीवन की दिशा निर्धारित की।

“तोत्तो-चान, तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो !”

दुलहन

तोत्तो-चान दुखी थी।

अब वह तीसरी कक्षा में पढ़ती थी। ताई-चान उसे बेहद पसंद था। वह चतुर और तेज था। अंग्रेजी पढ़ना भी जानता था। उसी ने उसे बताया था कि लोमड़ी को अंग्रेजी में क्या कहते हैं।

“तोत्तो-चान !” उसने कहा था, “तुम्हें पता है कित्सुने को अंग्रेजी में क्या कहते हैं ? कित्सुने को कहते हैं फॉक्स !”

“फॉक्स !”

तोत्तो-चान उस पूरे दिन इस नए सीखे शब्द की गूँज में ही मग्न रही थी। इसके बाद हर दिन, जैसे ही वह रेल के डिब्बे वाली कक्षा में पहुंचती, सबसे पहले ताई-चान की डिब्बी की सारी पेंसिलें छीलती। उसके पास एक छोटा-सा चाकू था। अपनी खुद की पेंसिलों की वह परवाह न करती। कभी-कभी तो अपने दांतों से ही उन्हें कुतर कर काम चला लेती।

पर इस सबके बावजूद ताई-चान उससे इतनी रुखाई से पेश आया था। हुआ यों कि एक दिन तोत्तो-चान सभागार के पिछवाड़े हौदी के पास से जा रही थी।

“तोत्तो-चान !”

ताई-चान की आवाज गुस्से से भरी थी। वह सहम कर रुक गयी। एक गहरी सांस खींचने के बाद ताई-चान ने कहा, “जब मैं बड़ा हो जाऊंगा तो तुम चाहे कितना भी कहो, मैं तुमसे शादी नहीं करूंगा !” और इतना कहकर वह वहां से चला गया था। जाते समय उसकी नजरें जमीन में गड़ी हुई थीं।

तोत्तो-चान उसे तब तक देखती रही जब तक वह और उसका मोटा सिर आंखों से ओझल न हो गए। कितना आदर करती थी तोत्तो-चान उसका। पर दूसरे बच्चे कहते थे कि ताई-चान का सिर बड़ा है। वे तो उसे ‘विषम भिन्न’ कहकर बुलाते थे।

तोत्तो-चान ने अपने हाथ जेब में ठूस लिये। वह सोचने लगी। पर ताई-चान की नाराजगी का कोई कारण उसे समझ ही नहीं आया। दुविधा में फंस उसने अपनी सहपाठी मियो-चान से बात की। तोत्तो-चान की पूरी बात सुन लेने के बाद मियो-चान ने बड़ी-बूढ़ियों के अंदाज में कहा, “अरी, मैं समझ गयी। वह इसलिए नाराज है क्योंकि आज सूमो-कुश्टी में तुमने उसे रिंग से बाहर जो फेंक दिया था। वह इसलिए रिंग से बाहर गिर पड़ा क्योंकि उसका सिर ही इतना मोटा है। पर फिर भी तुमसे हार कर नाराज तो वह होगा ही।”

तोत्तो-चान को दिल ही दिल बड़ा दुख हुआ। जरूर यही बात होगी। वह उसे इतना चाहती है कि रोज उसकी पेंसिलें छीला करती है। उसी को कुश्टी में पछाड़ने की क्या जरूरत थी भला ? पर अब ताई-चान की दुलहन तो वह कभी नहीं बन सकेगी।

“लेकिन उसकी पेंसिलें मैं अब भी छीला करूंगी। आखिर उसे इतना प्यार जो करती हूँ।”



घटिया स्कूल

प्राथमिक स्कूलों के बच्चों में उन दिनों एक तुकबंदी बड़ी प्रसिद्ध थी। तोतो-चान के पिछले स्कूल में बच्चे अकसर उसे गाया करते थे। जब वे स्कूल लौटते तो कहते :

अकामत्सु स्कूल पुराना घटिया है,
पर अंदर से बढ़िया है।

पर अगर किसी दूसरे स्कूल के बच्चे अकामत्सु स्कूल के पास से गुजरते तो वे स्कूल की ओर उंगली दिखा कर कहते :

अकामत्सु स्कूल बढ़िया है,
पर अंदर से पुराना घटिया है।

तब वे मुंह बिचका कर जोर से चिढ़ाते।

तुकबंदी में स्कूल के घटिया या बढ़िया होने का पहला मापदंड तो उसके भवन का नया या पुराना होना था। और फिर तुकबंदी का महत्वपूर्ण हिस्सा तो उसकी दूसरी पंक्ति थी—जिसमें स्कूल अंदर से कैसा है यह बताया जाता था। इसलिए पहली पंक्ति में उसे घटिया या बढ़िया कहने से कोई फर्क नहीं पड़ता था। तुकबंदी हमेशा पांच छह बच्चे साथ-साथ दोहराते थे।

एक दोपहर पढ़ाई का काम खत्म कर तोमोए के बच्चे खेल रहे थे। छुट्टी की घंटी बजने तक बच्चों को अपनी मर्जी से कुछ भी करने की छूट थी। हेडमास्टर जी का मानना था कि मन-मर्जी का करने का समय भी बच्चों को मिलना चाहिए। इसलिए पढ़ाई के बाद एक लंबा पीरियड बच्चों को मिला करता था। उस दिन कुछ बच्चे गेंद खेल रहे थे। कुछ छड़ों से लटकते हुए गंदे हो रहे थे, कुछ क्यारियों की देखभाल कर रहे थे। कुछ बड़ी लड़कियां एक तरफ सीढ़ियों पर बैठी गप्पें हांक रही थीं, तो कुछ पेड़ों पर चढ़ रही थीं। यानी जिसकी जैसी इच्छा थी, वही वह कर रहा था। ताई-चान जैसे बच्चे भी थे, जो अपनी क्लास में बैठे भौतिकी के प्रयोग कर रहे थे। कुछ बच्चे पुस्तकालय में थे। और अमाडेरा, जिसे जानवर अच्छे लगते थे, गैर-पालतू बिल्ली को उलट-पलट कर उसके कान देख रहा था। सब अपनी तरह मस्त थे।

अचानक स्कूल से बाहर जोरदार आवाज हुई :

तोमोए स्कूल पुराना घटिया है,
अंदर से भी पुराना घटिया है।

“कितनी बुरी बात है,” तोतो-चान ने सोचा। वह गेट के पास ही खड़ी थी।

सचमुच का गेट तो तोमोए में था नहीं। गेट की जगह दो पेड़ ही थे। वह वहीं उनके पास खड़ी थी। जो भी हो, उसने यह सब साफ-साफ सुना था। सोचने की बात है, उसके स्कूल को अंदर-बाहर दोनों ही तरह से पुराना घटिया कहा गया था। उसे बहुत-बहुत गुस्सा आया। बाकी बच्चों को भी बात चुभी। वे सब गेट के पास दौड़े आए। लड़कों के जिस झुंड ने तोमोए को घटिया कहा था, वे एक बार फिर जोर से बोले, “पुराना घटिया स्कूल” और तुरंत वहां से भाग गए।

तोतो-चान का गुस्सा सहन की सीमा पार कर गया। वह उन लड़कों के पीछे दौड़ी। बिल्कुल अकेले। वे और तेजी से दौड़े और पास की गली में मुड़कर ओझल हो गए। तोतो-चान वापस लौटी। चलते-चलते वह गुनगुनाने लगी :

तोमोए स्कूल बढ़िया है,

कुछ कदम और चलने के बाद उसने अगली कड़ी जोड़ी :

अंदर से भी, बाहर से भी, बढ़िया है।

उसे अपनी तुकबंदी अच्छी लगी। उसका मुरझाया मन धीमे-धीमे खिलने लगा। स्कूल के पास उसने यों नाटक किया मानो वह किसी दूसरे स्कूल की बच्ची हो और झाड़ियों की ओट में छिपकर जोर से गाया, इतनी जोर से कि सब सुन सकें :

तोमोए स्कूल बढ़िया है,
अंदर से भी, बाहर से भी, बढ़िया है।

बाग में खेलते बच्चों को पहले-पहल तो यह समझ में नहीं आया कि गा कौन रहा है। कुछ देर बाद पता चला कि यह तो तोतो-चान है। वे भी तब तोतो-चान के पास बाहर आ गए और साथ-साथ जोर-जोर से गाने लगे। कुछ ही देर में उन्होंने एक दूसरे का हाथ थाम लिया और स्कूल वाली सड़क पर गीत गाते-गाते चलने लगे। जैसे-जैसे वे स्कूल का चक्कर लगाने लगे, वैसे-वैसे उनका जोश बढ़ने लगा।

तोमोए स्कूल बढ़िया है,
अंदर से भी, बाहर से भी, बढ़िया है।

बच्चों को यह पता था कि हेडमास्टर जी अपने आफिस में बैठे हैं। उन्हें यह गीत सुनकर अच्छा ही लगा होगा।

पर सिर्फ उन्हें ही क्यों ? किसी भी शिक्षक को यह गीत सुखदायी लगता। खासकर उन्हें जो सच में बच्चों को प्यार करते हैं, जो हमेशा बच्चों के बारे में

सोचते हैं। और सच तो यह है कि ऐसे ही लोगों को हर दिन नयी-नयी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। और फिर तोमोए एक अलग तरह का स्कूल था। उसके लिए यह बात कहीं ज्यादा सच थी। परंपरा की लीक से हटता देख हर कोई उसकी आलोचना करने लगता था।

ऐसे में बच्चों का यह गीत ही हेडमास्टर जी का सच्चा पुरस्कार था :

तोमोए स्कूल बढ़िया है,
अंदर से भी, बाहर से भी, बढ़िया है।

उस दिन छुट्टी की घंटी बड़ी देर से बजी।

बालों का रिबन

एक दोपहर खाना खाने के बाद तोत्तो-चान सभागार के पास रस्सी कूद रही थी। अचानक वह हेडमास्टर जी से वहां मिली। शायद 'मिली' कहना शायद ठीक न हो, क्योंकि खाने के दौरान पूरा वक्त हेडमास्टर जी बच्चों के साथ ही थे। पर इस अर्थ में वह उनसे मिली कि वे उलटी दिशा से आ रहे थे।

“ओहो, तो तुम यहां हो,” हेडमास्टर जी ने कहा। “मैं तुमसे कुछ पूछना चाहता था।”

“क्या हेडमास्टर जी?” तोत्तो-चान यह सोच खुश होकर बोली कि वह हेडमास्टर जी को कुछ जानकारी दे सकती थी।

“तुमने यह रिबन कहां से खरीदा?” उन्होंने उसके बालों में बंधे रिबन को देखते हुए पूछा।

तोत्तो-चान का चेहरा खिल उठा। कल से उसने वह रिबन बांधा हुआ था। बेहद प्यारा लगता था उसे वह रिबन। वह उनके पास गयी ताकि वे उसे अच्छी तरह से देख सकें।

“यह रिबन मेरी मौसी की पुरानी स्कूल यूनिफार्म पर लगा हुआ था। वे दरज में कपड़े रख रही थीं। मैंने देख लिया। उन्होंने मुझे दे दिया। मौसी ने कहा था कि मेरी आंखें बड़ी तेज हैं।” तोत्तो-चान ने गर्व के साथ कहा।

“तो यह बात है।” हेडमास्टर जी सोच में डूब गए।

तोत्तो-चान को अपने रिबन पर बड़ा गर्व था। उसने उन्हें आगे भी बताया कि संयोग से वह ठीक उस समय वहां पहुंची जब मौसी पुराने कपड़ों को धूप दिखा रही थीं। कपड़ों में एक पुराने किस्म की बैंगनी स्कर्ट भी थी। इसे वह स्कूल जाते समय पहना करती थीं। जब वह स्कर्ट को तह कर रही थीं तो तोत्तो-चान की नजर एक बेहद सुंदर सी चीज पर जा टिकी।

“वह क्या है मौसी?”

तोत्तो-चान के प्रश्न पर मौसी का हाथ रुक गया। देखा तो पाया कि वह सुंदर सी चीज यही रिबन था। यह स्कर्ट के बैल्ट में पीछे की ओर लगा था।

मौसी ने बताया कि उन दिनों रिवाज था कि हाथ की बनी लेस के या रेशमी रिबन बनाकर स्कर्ट पर लगाए जाएं, ताकि पीछे से भी बच्चियां सुंदर लगें।

मौसी ने देखा कि तोत्तो-चान बड़ी ललचाई हुई नजरों से रिबन को देख रही है। “यह रिबन मैं तुम्हें दे देती हूं। मैं यह स्कर्ट अब कहां पहनूंगी।”

उन्होंने कैची उठाई और जिन धागों से रिबन स्कर्ट पर टंका था उन्हें काटा। यों तोत्तो-चान को यह रिबन मिला। रिबन रेशम का था, चौड़ा था। उसमें गुलाब और कई दूसरे फूल भी बुने हुए थे। रिबन को बांधने पर वह कड़क खड़ा रहता था। बांधने पर खूब बड़ा-सा फूल बनता था उसका। मौसी ने बताया था कि रिबन विदेशी धागे का बना हुआ है।

सब बातें बताते-बताते तोत्तो-चान अपना सिर हिलाती जा रही थी ताकि हेडमास्टर जी उसके कड़क रिबन की खड़खड़ाहट भी सुन सकें। पर पूरी बात सुनने के बाद हेडमास्टर जी और अधिक परेशान लगने लगे।

“तो यह बात है।” उन्होंने कहा, “कल मियो-चान ने मुझसे कहा कि उसे भी ठीक वैसा ही रिबन चाहिए जैसा तुम्हारे पास है। मैं जियुगाओका की हर दुकान में देख आया, पर ऐसा रिबन कहीं नहीं मिला। विदेशी है ना, शायद इसलिए।”

यह सब कहते समय उनका चेहरा हेडमास्टर का न होकर एक परेशान पिता का था।

“तोत्तो-चान अगर तुम स्कूल में यह रिबन लगाना बंद कर दो तो मैं हमेशा तुम्हारा आभारी रहूंगा। नहीं तो मियो-चान मुझे इसके लिए परेशान करती ही रहेगी। क्या ऐसा करने में तुम्हें बहुत तकलीफ होगी?”

तोत्तो-चान ने अपनी बांहें बांधीं। कुछ देर सोचती रही। तब उसने जवाब दिया, “ठीक है, मैं स्कूल में यह रिबन बांधकर नहीं आऊंगी।”

“धन्यवाद,” हेडमास्टर जी ने कहा।

तोत्तो-चान का मन दुखी हुआ था। पर हेडमास्टर जी परेशान थे, इसलिए उनको मना कैसे करती ! और फिर उसे यह जानकर भी तो दुख हुआ कि बड़ी आयु के उसके प्यारे हेडमास्टर जी दुकान-दुकान भटक कर रिबन खोजते रहे थे।

तोमोए का यह भी एक तरीका था। एक दूसरे की परेशानियों को समझना और उन्हें सुलझाने में मदद करना वहां आसानी से सीखा जा सकता था। उम्र इसमें कहीं आड़े नहीं आती थी। यह तो सहज ही आ जाता था।

अगले दिन तोत्तो-चान के स्कूल जाने के बाद मां उसका कमरा साफ करने गयी। पाया कि तोत्तो-चान का चहेता रिबन उसके भालू के गले में बंधा था। मां

को समझ में न आया कि अपनी पसंद का रिबन वह यों क्यों छोड़ गयी। मां को लगा कि इतने रंग-बिरंगे रिबन से सजा देने पर भालू भी शरमा रहा है।

घायलों से मिलना

अपनी जिंदगी में पहली बार तोतो-चान घायल सैनिकों के एक अस्पताल में गयी। शहर के तीस प्राथमिक स्कूलों के बच्चों के साथ वह भी गयी थी। किसी से भी परिचित नहीं थी वह। वैसे हर स्कूल से दो-तीन बच्चे भेजे गए थे, पर तोमोए छोटा स्कूल था, इसलिए वहां से एक ही बच्चा भेजा गया था। सारे बच्चों को एक स्कूल की शिक्षिका के मार्गदर्शन में काम करना था। तोतो-चान अकेली तोमोए का प्रतिनिधित्व कर रही थी।

उनके साथ वाली शिक्षिका दुबली-पतली थीं। उन्होंने आंखों पर चश्मा लगाया हुआ था। बच्चों को वह एक वार्ड में ले गयीं। उस वार्ड में सफेद पाजामे पहने कोई पंद्रह घायल सैनिक थे। कुछ बिस्तर पर लेटे हुए थे, तो कुछ चहलकदमी कर रहे थे।

तोतो-चान आने से पहले मन ही मन घबरा रही थी कि घायल सैनिक कैसे लगते होंगे। पर उसने पहुंच कर पाया कि घायल सैनिक पट्टियां तो बांधे थे, पर सब बच्चों को देखकर मुस्करा रहे थे। उन्होंने हाथ हिलाकर बच्चों का स्वागत भी किया। उन्हें यों प्रसन्नचित देख कर तोतो-चान को बड़ी तसल्ली हुई।

शिक्षिका ने बच्चों को वार्ड के बीचों-बीच खड़ा किया और तब सैनिकों को संबोधित किया।

“हम सब आप लोगों से मिलने के लिए आए हैं।” उन्होंने कहा। इस पर बच्चों ने झुककर सैनिकों को नमस्कार किया।

शिक्षिका आगे बोलीं, “आज मई की पांचवीं तारीख है—यानी लड़कों का दिन है। हम आपके लिए इस दिन का ही गीत गावेंगे।” तब उन्होंने अपने हाथ किसी संगीत निर्देशक की तरह उठाए। पूछा, “सब बच्चे तैयार हैं ? एक, दो, तीन, चार।” और वे ताल देने लगीं। बच्चे एक दूसरे को तो नहीं जानते थे, पर गीत से सभी परिचित थे। सब मन लगाकर गाने लगे।

छतों के सागर को करके पार,
बादलों के सागर को करके पार।

तोतो-चान को यह गीत नहीं आता था। तोमोए में कभी गाया ही नहीं गया था। वह चुपचाप पास वाले दयालु दिखने वाले सैनिक के बिस्तर के एक किनारे बैठ गयी। उसे बड़ा अटपटा लग रहा था। गीत खत्म हुआ ही था कि शिक्षिका

ने फिर कहा, “अब हम गुड़ियों का त्योहार वाला गीत गावेंगे।” यह गीत भी सब बच्चों ने मिलकर गाया—तोतो चान के अलावा।

आओ, लालटेन जलायें,
एक-एक कर उन्हें जलायें।

तोतो-चान चुप रहने के अलावा क्या कर सकती थी !

जब वे गा चुके तो सैनिकों ने तालियां बजाईं। शिक्षिका ने मुस्कराकर कहा, “तो अब टटू और घोड़ी वाला गीत हो जाए ? एक साथ।” तीन, चार।” और वह फिर ताल देने लगीं।

तोतो-चान यह गीत भी नहीं जानती थी। गीत खत्म हुआ। जिस सैनिक के बिस्तर पर वह बैठी थी उस सैनिक ने तोतो-चान के सिर पर हाथ फिराया और पूछा, “तुमने कुछ नहीं गाया ?”

तोतो-चान को बड़ा अफसोस हुआ। आई तो वह सैनिकों का मनोरंजन करने के लिए थी। लेकिन एक गीत तक वह नहीं गा पाई उनके लिए ! अतः वह खड़ी हुई और बिस्तर से थोड़ा दूर हटकर पूरा साहस जुटाकर बोली :

“ठीक है, जो गीत मैं जानती हूँ, वही आपको सुना देती हूँ।”

अब वह होने जा रहा था जो शिक्षिका की योजना के मुताबिक नहीं था। वह अस्थिर हो उठीं।

“क्या गाने वाली हो तुम ?” उन्होंने पूछा। पर तब तक तोतो-चान एक गहरी सांस खींचकर गाने लगी थी। उन्हें चुप रह जाना पड़ा।

क्योंकि तोतो-चान तोमोए का प्रतिनिधित्व कर रही थी, उसने गहरी सांस खींचकर तोमोए में हर दिन गाया जाने वाला प्यारा गीत सुनाया :

“चबाओ, चबाओ, ठीक से चबाओ,
जो कुछ भी तुम खाओ”

कुछ बच्चे गीत सुन हंसने लगे। कुछ दूसरे आपस में पूछने लगे, “कौन-सा गीत है यह ?” शिक्षिका ताल देने की कोशिश में थी। पर लय समझ न आने पर उनके हाथ हवा में ही लटके रह गये। तोतो-चान को बहुत शरम आ रही थी। फिर भी उसने पूरे मन से गाया :

चबाओ, चबाओ, ठीक से चबाओ,
चावल, मछली, मांस।

जब गीत गा चुकी तो वह झुकी। नमस्कार किया। सिर उठाया तो देखती क्या है कि उस सैनिक की आंखों से झर-झर आंसू बह रहे हैं। पहले तो उसे लगा शायद उसने कोई भूल कर दी होगी। पर तब तक डैडी से भी उम्र में कुछ बड़े

उस सैनिक ने फिर से उसके सिर पर हाथ फिराया। कहा, “धन्यवाद ! बहुत-बहुत धन्यवाद !”

सैनिक उसके सिर पर हाथ फिराता रहा। उसका रोना थम ही नहीं रहा था। तब शिक्षिका ने गर्मजोशी के साथ संभवतया सैनिक को खुश करने के लिए कहा, “अब बच्चे सैनिकों के लिए अपनी-अपनी रचनाएं पढ़कर सुनायेंगे।”

बच्चों ने बारी-बारी अपनी रचनाएं सुनायीं। तोत्तो-चान ने अपने सैनिक की ओर देखा। उसकी आंखें और नाक रोने से लाल हो आई थीं। पर तोत्तो-चान को देख वह मुस्करा दिया। तोत्तो-चान ने मन में सोचा, “वाह ! कितनी अच्छी बात है, सैनिक हंस रहा है।”

सैनिक रोया क्यों था यह तो वही जाने। संभव है, ठीक तोत्तो-चान जैसी उसकी भी एक नन्ही सी बेटी हो। यह भी हो सकता है कि तोत्तो-चान के गीत गाने का तरीका उसके मन को छू गया हो। या फिर युद्ध के अनुभव ने ही उसे हिला दिया हो कि कैसे मोर्चे पर सैनिक भुखमरी की स्थिति में पहुंच चुके थे। संभव है, चबाने के गीत ने उसे दुखद याद दिला दी हो कि खाने को निकट भविष्य में शायद अब कुछ न मिले। या उस सैनिक को शायद यही लगा हो कि इन नन्हे-मुन्ने बच्चों के जीवन पर भी शीघ्र ही युद्ध के बादल गहरा जाने वाले हैं।

अपनी रचनाएं पढ़कर सुनाने वाले बच्चों को तब यह पता न था कि प्रशांत महासागर का युद्ध तब प्रारंभ हो गया है। यही नहीं, युद्ध तेजी से फैल भी रहा था।

स्वास्थ्य-छाल

अपने परिचित टिकट बाबू को गले में लटका पास दिखा कर तोत्तो-चान जियुगाओका स्टेशन से बाहर निकल आयी।

बाहर कुछ रोचक सा क्रियाकलाप हो रहा था। एक नौजवान चटाई पर बैठा था। उसके सामने पेड़ की छालों का एक ढेर रखा था। पांच-छह लोग उसे घेरे हुए थे। तोत्तो-चान भी घेरे में जा मुसी और नौजवान को देखने लगी। वह कुछ कह रहा था, “मुझे ध्यान से देखिए, ठीक से सुनिए साहेबान।” इतने में उसकी नजर तोत्तो-चान पर पड़ी। बोला, “सेहत आदमी की सबसे बड़ी पूंजी है। अगर आप हर दिन सुबह उठते ही यह जानना चाहें कि आप स्वस्थ हैं या नहीं तो यह छाल आपको बता सकती है। इसका सिर्फ एक छोटा सा टुकड़ा आपको चबाना होगा। अगर छाल कड़वी लगे तो समझ लीजिए कि आप बीमार हैं। न लगे तो आप भले-चंगे हैं। कीमत सिर्फ बीस सेन। आप, साहब आप, आगे आइए। जरा चख कर देखिए।”

एक दुबला-पतला सा आदमी सामने आया। झिझकते हुए उसने छाल का टुकड़ा दांतों के बीच दबाया। फिर सिर झुका कर कुछ सोचने लगा।

“हां, लगती तो कुछ-कुछ कड़वी ही है।”

नौजवान उछला, “साहब, आप स्वस्थ नहीं हैं। जरूर कोई न कोई बीमारी आपको घेरे हुए है। सावधान रहिए। पर चिंता मत करिए। बात हाथ से निकली नहीं है। आपने कहा छाल कुछ-कुछ कड़वी लगी। मेमसाहब आप लेंगी ? चबाकर देखेंगी।” एक बड़ी सी टोकरी लिए खड़ी उस महिला ने भी छाल का एक टुकड़ा लिया। उसे जोर से चबाया। तब हंसते हुए जवाब दिया, “बिलकुल कड़वी नहीं है।”

“बधाई, मेमसाब,” नौजवान ने कहा, “आप बिलकुल स्वस्थ हैं।” तब अपनी आवाज तेज करते हुए वह बोला, “बीस सेन, सिर्फ बीस सेन। हर रोज अपनी सेहत की बात जानने के सिर्फ बीस सेन। आगे बढ़िए साहेबान। खरीदिए साहेबान।”

तोत्तो-चान की भी इच्छा हुई कि वह भी छाल चखे। पर इतने लोगों के बीच उसे छाल मांगते शर्म आयी। अतः उसने कुछ दूसरी ही बात पूछी, “स्कूल खत्म होने पर भी आप यहीं पर मिलेंगे ?”

नौजवान ने उसे ध्यान से देखते हुए कहा, “जरूर।”

तोत्तो-चान स्कूल की तरफ दौड़ी। उसका बस्ता उसकी पीठ पर उछलता जा रहा था। बड़ी ही जल्दी में थी वह। आखिर पढ़ाई शुरू होने से पहले उसे कुछ करना जो था। कक्षा में पहुंचते ही उसे अपने साथियों से कुछ पूछना था।

“मुझे क्या कोई बीस सेन उधार दे सकता है ?”

पर किसी के पास बीस सेन नहीं थे। चाकलेट की गोलियां उन दिनों दस सेन की मिला करती थीं। यानी बीस सेन कोई बड़ी पूंजी न थी। पर किसी के पास बीस सेन न मिले।

“मैं अपने मां-डैडी से मांगूं ?” मियो-चान ने पूछा।

ऐसे मौकों पर मियो-चान का साथ पढ़ना बड़ा काम आया करता था। वह हेडमास्टर जी की बेटी थी। सभागार से सटे हुए घर में ही तो रहती थी। बच्चों को लगता था, जैसे उनकी मां भी स्कूल में ही रहती हो।

“डैडी ने कहा है कि पैसे तुम्हें दे देंगे।” उसने तोत्तो-चान को खाने की छुट्टी में बताया, “पर वह जानना चाहते हैं कि पैसे तुम्हें चाहिए क्यों ?”

तोत्तो-चान आफिस की ओर भागी।

“बीस सेन चाहिए तुम्हें ?” हेडमास्टर जी ने चश्मा उतारते हुए पूछा। “किसलिए ?”

“मैं एक छाल का टुकड़ा खरीदना चाहती हूं। उससे यह पता चल जाता

है कि कोई बीमार है या नहीं।" उसने बड़ी जल्दी-जल्दी जवाब दिया।

हेडमास्टर जी की रुचि बढ़ी।

"कहां बिक रही है यह छाल?"

"स्टेशन के सामने।" उसने तुरंत कहा।

"ठीक है," हेडमास्टर जी बोले। "खरीदना चाहो तो खरीदना। पर एक बात है, मुझे भी एक टुकड़ा चखाना पड़ेगा। ठीक है ना?"

अपनी जेब से बटुआ निकाल कर उन्होंने बीस सेन तोत्तो-चान की हथेली पर रख दिए।

"बहुत-बहुत धन्यवाद।" तोत्तो-चान ने खुश होकर कहा। "मैं मां से लाकर पैसे आपको लौटा दूंगी। मां मुझे किताबों के लिए हमेशा पैसा दे देती है। असल में कुछ दूसरी चीज खरीदनी हो तो उससे पूछना पड़ता है। पर सेहत वाली छाल खरीदना तो बुरी बात नहीं है। मुझे पता है वह मना नहीं करेगी।"

स्कूल खत्म हुआ। तोत्तो-चान बीस सेन मुट्ठी में दबाए स्टेशन की ओर भागी। छाल बेचने वाला वहीं बैठा हांक लगा रहा था। तोत्तो-चान की हथेली में बीस सेन देख वह खुश हो गया।

"वाह, बेटी वाह। तुम्हारे मां-बाप बड़े खुश होंगे।"

"रॉकी भी खुश होगा," तोत्तो-चान ने कहा।

"रॉकी कौन है?" उसने छाल का टुकड़ा चुनते हुए पूछा।

"रॉकी हमारा कुत्ता है। जर्मन शेफर्ड है वह।"

उस आदमी ने कुछ क्षण सोचने के बाद कहा, "कुत्ता? कुत्ते पर भी छाल असर तो करेगी ही। कड़वी लगे तो वह मुंह बिगाड़ेगा, जिसका मतलब होगा कि वह बीमार है।"

नौजवान ने एक इंच चौड़ी और करीब छह इंच लंबी छाल का एक टुकड़ा चुना।

"यह लो, हर सुबह जरा सी चबा कर देखना। कड़वी लगे तो मतलब है कि बीमार हो। न लगे तो भली-चंगी हो।"

तोत्तो-चान अपनी अनमोल छाल को संभाल कर घर ले गयी। घर पहुंच कर सबसे पहले उसने खुद एक टुकड़ा चबाया। छाल उसे सूखी और खुरदरी तो लगी, पर कड़वी नहीं। "वाह, मैं तो बिल्कुल ठीक हूँ।"

"सो तो हो ही," मां ने कहा। "क्यों, तुम्हें क्या हुआ है?"

तब तोत्तो-चान ने मां को पूरी बात समझाई। मां ने भी छाल का टुकड़ा चखा।

"कड़वी तो नहीं है।"

"मां, इसका मतलब है तुम भी बिल्कुल ठीक हो।"

इसके बाद तोत्तो-चान रॉकी के पास गयी। छाल उसके मुंह की ओर की। रॉकी ने सूंघी, तब उसे चाटा।

"नहीं भई। ऐसे नहीं। चबाना होगा।" तोत्तो-चान ने समझाया। "तभी तो पता चलेगा कि तुम बीमार हो या नहीं।"

पर रॉकी ने छाल को चबाने की कोई कोशिश नहीं की। वह तो पंजे से अपने कान को खजलाने लगा। तोत्तो-चान ने छाल उसके मुंह के पास की।

"चलो, एक टुकड़ा चबाकर देखो। कहीं बीमार हुए तो क्या होगा?"

बड़ी ही अनिच्छा से रॉकी ने छाल का छोटा सा टुकड़ा तोड़ा। तब उसे सूंघा। तोत्तो-चान को यह नहीं लगा कि छाल उसे कड़वी लगी हो। इसके बाद उसने बड़ी-सी जम्हाई ली।



“वाह, रॉकी भी बिल्कुल ठीक है।”

अगले दिन मां ने उसे बीस सेन दिये। स्कूल पहुंचते ही तोतो-चान सीधे हेडमास्टर जी के कमरे में गयी। छाल उनके सामने कर दी।

एक मिनट को तो लगा कि वे कहना चाह रहे हों, “अरे, यह क्या है ?” पर इतने में उन्होंने तोतो-चान की दूसरी हथेली पर रखे बीस सेन देख लिए जो वह लौटाने आयी थी। और उन्हें बात याद आ गयी।

“चबा कर देखिए ना,” तोतो-चान बोली। “अगर छाल कड़वी लगे तो आप बीमार हैं।”

हेडमास्टर जी ने एक छोटा-सा टुकड़ा तोड़कर चबाया। इसके बाद छाल को ध्यान से देखने लगे।

“कड़वी है क्या ?” तोतो-चान ने चिंतित होते हुए पूछा।

“नहीं, नहीं। इसका तो कोई स्वाद ही नहीं है।”

छाल तोतो-चान को लौटाते हुए उन्होंने कहा, “मैं तो बिल्कुल स्वस्थ हूं।”

“वाह ! हेडमास्टर जी भी ठीक हैं। मैं कितनी खुश हूं।”

उस दिन तोतो-चान ने स्कूल के हर बच्चे को छाल चखाई। किसी भी बच्चे को वह कड़वी नहीं लगी। मतलब कि सभी स्वस्थ हैं। तोतो-चान खुश हो गयी।

इसके बाद एक-एक कर हर बच्चा हेडमास्टर जी को यह बताने पहुंचा कि वह पूरी तरह स्वस्थ है। हर एक को हेडमास्टर जी ने कहा, “वाह, यह तो बड़ी अच्छी बात है।”

हेडमास्टर जी हरुना-पर्वत की तलहटी में पैदा हुए थे। वहीं बड़े भी हुए थे। उन्हें एक बात जरूर पहले से ही पता होगी। वह यह कि तोतो-चान के पास जो छाल थी वह किसी को भी किसी हालत में कड़वी नहीं लग सकती थी।

लेकिन उन्हें यह भी पता था कि हर एक को स्वस्थ जानकर तोतो-चान को खुशी हो रही थी। उन्हें इस बात को जानकर भी सुख मिला होगा कि अगर किसी बच्चे को छाल कड़वी लगती तो दयालु प्रकार की तोतो-चान बेहद दुखी भी हो उठती।

तोतो-चान ने तो एक सड़क चलते लावारिस कुत्ते के मुंह में भी छाल ठूसने की कोशिश की थी। कुत्ते ने उसे काट ही लिया होता। पर इतने पर भी वह हारी नहीं।

“अरे, तुम्हें पता चल जाएगा कि तुम बीमार हो या नहीं।” उसने कुत्ते को जोर से डांटा। “चलो, आओ एक टुकड़ा काटो। अगर तुम भले-चंगे हुए तो सब ठीक है।”

आखिर उस अनजान कुत्ते को भी छाल का एक टुकड़ा उसने चखा ही दिया। उसके चारों ओर कूदते हुए वह कहने लगी, “वाह ! तुम भी बिल्कुल ठीक हो।”

कुत्ते ने सिर झुकाया। मानो धन्यवाद दे रहा हो। तब वह वहां से भाग गया।

जैसा कि हेडमास्टर जी ने अनुमान लगाया था, वह छाल बेचने वाला नौजवान उस दिन के बाद कभी जियुगाओका में नहीं दिखा।

हर रोज स्कूल आने के पहले तोतो-चान अपनी बेशकीमती छाल का एक टुकड़ा अपने दराज से निकालती। उसे कुतरते समय वह ठीक एक छोटे से ऊदबिलाव जैसी लगा करती थी। घर से निकलते-निकलते वह कहती, “मैं बिल्कुल ठीक हूं।”

और सौभाग्य से तोतो-चान सच में एक स्वस्थ बच्ची थी।

अंग्रेजी बोलने वाला बच्चा

तोमोए में एक नया छात्र आया। वह प्राथमिक शालाओं में पढ़ने वाले बच्चों से कहीं अधिक लंबा-चौड़ा था। तोतो-चान को तो पहली बार देखने पर वह सातवीं कक्षा का लगा था। कपड़े भी उसने कुछ अलग तरह के पहन रखे थे—बिल्कुल बड़ों जैसे।

उस दिन सुबह-सुबह हेडमास्टर जी ने उसका परिचय कराया।

“यह है मियाजाकी। अमरीका में पैदा हुआ, वहीं पला-बढ़ा, इसलिए यह जापानी अच्छी तरह से नहीं जानता। यह तोमोए में इसलिए आया है ताकि यहां अपने मित्र बना सके और धीरे-धीरे सब सीख सके। अब यह तुम्हारा साथी है। किस कक्षा में रखना चाहिए इसे ? क्यों भाई, पांचवीं कक्षा कैसी रहेगी—ता-चान, और दूसरे साथियों के साथ ?

“ठीक है,” ता-चान ने भी बड़े भाई के अंदाज में कहा। ता-चान बहुत अच्छी चित्रकारी करता था।

अब हेडमास्टर जी ने मुस्कराते हुए आगे जोड़ा, “मैं यह तो बता चुका हूं कि मियाजाकी जापानी नहीं जानता, पर उसे अंग्रेजी आती है। तुम सब उससे अंग्रेजी सीखना। वह जापान के तौर-तरीके भी नहीं जानता। इसमें तुम लोग उसकी मदद करना। उससे अमरीकी जीवन के बारे में पूछना। वह तुम्हें ढेरों मजेदार बातें बता सकेगा। क्यों ठीक है ना ! अब मैं इसे तुम लोगों के पास छोड़े जा रहा हूं।”

मियाजाकी ने इस पर झुककर अपने साथियों को नमस्कार किया। सब बच्चे उसके सामने देखने में छोटे-छोटे लग रहे थे। उसके झुकने पर सिर्फ ता-चान की कक्षा के ही नहीं, पूरे स्कूल के बच्चों ने झुककर उसका अभिवादन किया।

दोपहर खाने की घंटी बजी तो मियाजाकी हेडमास्टर जी के घर की ओर जाने लगा। सब उसके पीछे-पीछे गए। पहुंचने पर वह जूते पहने-पहने ही घर में

घुसने लगा। बच्चे एक साथ चिल्लाए, “जूते उतारो। जूते उतार कर अंदर घुसते हैं।”

मियाज़ाकी चौंका। “अरे, माफ करना,” उसने जूते उतारते हुए कहा।

इसके बाद सब बच्चे उसे क्या कैसे करना है, बताने लगे।

“जिन कमरों में दरियां हों, वहां और सभागार में जूते उतार कर जाते हैं। अपनी-अपनी कक्षाओं में और पुस्तकालय में जूते पहने रख सकते हैं।”

“कुहोन्बुत्सु मंदिर के अहाते में जूते पहने जा सकते हैं, पर मंदिर के अंदर जाना हो तो जूते उतारने पड़ते हैं।”

जापान में क्या कैसे किया जाता है, उसकी तुलना विदेशों के तौर-तरीकों से करने में बच्चों को आनंद आने लगा।

अगले दिन मियाज़ाकी बड़ी-सी चित्रों वाली अंग्रेजी की किताब साथ लाया। दोपहर के खाने के बाद सब बच्चे उसके इर्द-गिर्द इकट्ठे होकर किताब देखने लगे। बच्चों को बड़ा आश्चर्य हुआ। असल में अब तक उन्होंने जितनी चित्रों वाली किताबें देखी थीं, वे सब गहरे लाल, हरे, पीले रंगों में छपी होती थीं। पर यह किताब तो निराली थी। इसमें तो हल्का गुलाबी, ठीक चमड़ी जैसा रंग भी था। एक ही नीला रंग सफेद और सलेटी के साथ मिलकर अलग-अलग छटा दिखा रहा था—इतने ढेर से रंग जो बच्चों के क्रेयन रंगों में भी नहीं थे। सबके पास चौबीस रंगीन क्रेयन की डिबियां थीं। उनसे अलग भी न जाने कितने रंग उस किताब में थे। ता-चान के पास तो अड़तालीस रंगों का डिब्बा था। पर उसके डिब्बे में भी वे सब रंग न थे जो इस किताब में थे। सब बच्चे बेहद प्रभावित थे। और चित्र, उनका तो कहना ही क्या? पहले ही चित्र में एक कुत्ता बना था जो एक नन्हे से बच्चे को उसकी चड़ी से पकड़ कर खींच रहा था। सबसे ज्यादा अचरज तो बच्चों को इस बात से हो रहा था कि बच्चे की चमड़ी बिल्कुल असली चमड़ी-सी दिखती थी। इतनी बड़ी और इतने चमकदार मोटे कागज पर छपी चित्रों वाली किताब उन्होंने पहले कभी नहीं देखी थी। तोत्तो-चान उत्सुकता में पास सरकती गयी। जितना पास जा सकती थी, मियाज़ाकी के उतने पास जा बैठी।

मियाज़ाकी ने अंग्रेजी किताब पढ़कर सुनाई। बच्चे उसकी फरटिदार अंग्रेजी सुन मुग्ध हो गए।

इसके बाद वह जापानी से जूझने लगा।

मियाज़ाकी के आने के साथ स्कूल में नया कुछ घटने लगा था।

“अकाचान को अंग्रेजी में बेबी कहते हैं,” उसने प्रारंभ किया।

सब बच्चों ने पूरी बात उसके पीछे दोहराई।

“उत्सुकुशी माने ब्यूटीफुल,” मियाज़ाकी आगे बोला। उसने ‘कू’ पर जोर डाला था और अंतिम ‘इ’ छोटी कर दी थी।

“उत्सुकुशी” माने ब्यूटीफुल,” बच्चों ने सुधार कर कहा।

मियाज़ाकी समझ गया कि उसने उच्चारण की भूल की है। “ओह तो उत्सुकुशी कहते हैं? अब तो ठीक है ना?”

मियाज़ाकी और बाकी बच्चे जल्दी ही अच्छे दोस्त बन गये। वह हर दिन नयी-नयी किताबें लाता और दोपहर को बच्चों को सुनाता।

ऐसा लगता था मानो मियाज़ाकी ही उनका अंग्रेजी शिक्षक हो।

मियाज़ाकी की जापानी दिनों-दिन अच्छी होने लगी। और तो और, अब वह चढ़ावा और माला चढ़ाने वाली पवित्र जगह में जाकर बैठ जाने जैसी गलतियां भी नहीं करता था।

तोत्तो-चान और उसके सभी मित्रों ने अमरीका के बारे में मियाज़ाकी से बहुत कुछ जाना। तोमोए में जापान और अमरीका मित्र बनने लगे थे। पर तोमोए के बाहर अमरीका जापान का दुश्मन था। और चूंकि अंग्रेजी दुश्मनों की भाषा थी, इसलिए सभी स्कूलों के पाठ्यक्रमों में से अंग्रेजी हटा दी गयी थी।

सरकार ने घोषणा की, “अमरीकी शैतान हैं।” पर तोमोए में अभी भी बच्चे कहते थे “उत्सुकुशी माने ब्यूटीफुल।” तोमोए में तब हल्की गर्मी लिए हवा मंद-मंद बहती थी। और वहां के बच्चे भी सच में बड़े ही सुंदर थे।

पहला नाटक

“हम एक नाटक खेलने वाले हैं।”

तोमोए के इतिहास का यह पहला नाटक था। यह सच था कि हर दोपहर खाने के बाद बच्चे अब भी भाषण दिया करते थे। पर मंच पर खड़े होकर, दर्शकों के सामने नाटक खेलने की बात ही कुछ दूसरी थी। मंच पर पियानो भी था जो हेडमास्टर जी यूथिथमिक्स की कसरतें कराते समय बजाया करते थे। पर सच तो यह था कि अब तक किसी बच्चे ने कोई नाटक देखा ही नहीं था—तोत्तो-चान ने भी नहीं। असल में तो स्वान-लेक बैले देखने के अलावा वह कभी किसी रंगमंच में गयी भी नहीं थी। इसके बावजूद बच्चों का निर्णय था कि वार्षिक जलसे पर इस बार नाटक ही करेंगे।

तोत्तो-चान की पूरी क्लास ने यह निर्णय लिया कि वे ‘कांजिंचो’ (दान इकट्ठा करना) करेंगे। नाटक एक पुराना काबुकी नाटक था, जो बिल्कुल भी वैसा नहीं था जिस तरह के नाटक की तोमोए में खेलने की कल्पना भी की जाये। पर नाटक बच्चों की जापानी की किताब में था।

श्री माह्यामा को बच्चों को सिखाने का काम सौंपा गया था। आइको साइशो को ‘बेनकेई’ (पहलवान) की भूमिका के लिए चुना गया था। वही क्लास

में सबसे लंबी चौड़ी थी। अमाडेरा गुस्सैल दिख सकता था, इसलिए उसे 'तोगाशी' (चौकी का कमांडर) की भूमिका के लिए चुना गया। और तब बातचीत कर यह भी निर्णय हुआ कि तोतो-चान को ही योशित्सुने (सामंत) की भूमिका दी जाये। नाटक में सामंत एक मजदूर के वेश में छिप कर निकल भागना चाहता है। क्लास के बाकी बच्चों को घुमंतू साधु बनना था।

नाटक का अभ्यास शुरू हो, उसके पहले जरूरी था कि सब अपने संवाद याद कर लें। तोतो-चान और साधुओं के मजे थे, क्योंकि उन्हें कुछ बोलना ही नहीं था। तोतो-चान को योशित्सुने की भूमिका में घुटनों के बल बैठ कर एक बड़े से टोप में अपना मुंह छुपाए रखना था। बेनकेई को, जो असल में सामंत योशित्सुने का ही नौकर था, अपने ही स्वामी को डांटना-फटकारना, मारना-पीटना था, ताकि वह अताका चौकी के कमांडर की नजरों से बचाकर अपने स्वामी और साधुओं के वेश में छुपे साथियों को उस पार ले जा सके। पूरी टुकड़ी एक मंदिर के जीर्णोद्धार के लिए दान इकट्ठा करने के बहाने निकलती है। आइको साइशो की बेनकेई के रूप में जबरदस्त भूमिका थी। चौकी कमांडर के साथ उसके संवाद बड़े चुटीले थे। इसके अलावा वह हिस्सा भी अच्छा था, जहां बेनकेई दानाड़ा को पढ़कर सुनाता है। जिस कागज से वह पढ़ने का बहाना करता है असल में तो वह कोरा ही था। और आफत में फंसकर वह धर्माधिकारियों की भाषा की नकल कर, मन से गड़ कर सुनाता है, "प्रथम तोदाइजी नामक मंदिर के जीर्णोद्धार के लिए..."

आइको साइशो हर रोज इसी 'प्रथम' संवाद को रटा करती थी।

तांगाशी को भी कई संवाद बोलने थे क्योंकि वह बेनकेई को रोकता है, उससे तर्क करता है। अमाडेरा उन संवादों को याद करने के लिए हर दिन जूझता।

आखिर अभ्यास शुरू हुआ। तोगाशी व बेनकेई एक दूसरे के सामने थे। पीछे की ओर कतार बनाए सारे साधु थे। तोतो-चान योशित्सुने बनी घुटने टेके साधुओं के घेरे के बीचों-बीच झुकी हुई थी। क्या हो रहा है, तोतो-चान ठीक से समझ नहीं पा रही थी। जब बेनकेई को योशित्सुने को मारना-पीटना था, तब तोतो-चान को गुस्सा आ गया। उसने पलट कर आइको साइशो को लतिया दिया। नोंच भी दिया। आइको रोने लगी। साधु बने बच्चे हंसने लगे।

नाटक में तो योशित्सुने को मार खाकर भी चुपचाप सहमे-सहमे रहना था। नाटक की बात तो यह थी कि तोगाशी की असलियत का कुछ-कुछ संदेह तो हो ही रहा था। बेनकेई को अपने सामंत योशित्सुने को पीटने का कितना कष्ट हुआ होगा, यही सोचकर अंततः तोगाशी पूरी टोली को चौकी पार करने देता है।

यानी नाटक के भाव के बिल्कुल विपरीत जाकर अगर योशित्सुने नाराज होने लगता तो नाटक तो मिट्टी ही हो जाता।

श्री मारुयामा ने तोतो-चान को सब बातें बता कर समझाने की कोशिश की,

पर तोतो-चान अड़ गयी। उसने साफ-साफ कह दिया कि आइको साइशो अगर उसकी पिटाई करेगी तो वह भी पलट कर जरूर-जरूर मारेगी। बस गाड़ी यहीं अटक गयी। जितनी बार उन्होंने दृश्य खेलने की कोशिश की, तोतो-चान हर बार पलट कर लड़ने लगी। आखिर श्री मारुयामा को कहना पड़ा, "भई, माफ करना, मुझे लगता है कि ताई-चान से ही योशित्सुने बनने को कहना होगा।

तोतो-चान को चैन पड़ा। यों खड़े होकर चुपचाप पिटना उसे कतई अच्छा नहीं लग रहा था।

"तोतो-चान तुम भी साधु बन जाओ।" मारुयामा ने कहा। अतः तोतो-चान दूसरे साधुओं के साथ मंच के पिछले हिस्से में जा खड़ी हुई।

श्री मारुयामा और बच्चों ने सोचा था कि अब कोई झंझट न होगा। पर यह उनकी भूल थी। असल में उन्हें तोतो-चान को साधुओं वाली छड़ी नहीं पकड़ानी चाहिए थी। चुप खड़े-खड़े तोतो-चान थोड़ी देर में उकता गयी। पहले उसने पास खड़े लड़के को छड़ी से पैर में गोदना शुरू किया। कुछ देर बाद दूसरी ओर खड़े लड़के की कांछों में छड़ी से गुदगुदाया। तब फिर उसने छड़ी को संगीत निर्देशक की तरह दायें-बायें नचाना शुरू किया। बेनकेई और तोगाशी वाला पूरा दृश्य फिर से ढेर हो गया।

अंततः साधु की भूमिका से भी उसे हाथ धोना पड़ा।

जब ताई-चान योशित्सुने बना तो वह दांत भींच कर मार सहता गया। सभी दर्शकों तक को उससे सहानुभूति होने लगी। तोतो-चान के आसपास न होने से अभ्यास ठीक-ठीक होने लगा था।









तोतो-चान वहां से स्कूल के मैदान में आ गयी। पैर से जूते उतारे और अकेले 'तोतो-चान नृत्य' करने लगी। अपनी मर्जी से नाचना बड़ा ही आनंददायक था। वह कभी हंस बनती, कभी हवा, कभी कोई भयानक आदमी, कभी पेड़। अकेले सूने मैदान में तोतो-चान देर तक नाचती रही। मन के किसी कोने में अभी भी यह बात उठ रही थी कि वह योशित्सुने बनी होती तो अच्छा होता। पर सच तो यह था कि अगर अब भी उसे मौका दिया जाता तो वह मार खाकर चुप न रहती। पलट कर आइको साइशो को मारती जरूर।

और यों तोतो-चान तोमोए के पहले नाटक में हिस्सा नहीं ले पायी।

चाक

तोमोए के बच्चों ने कभी भी किसी दीवार या सड़क को खड़िया या पेंसिल से लिखकर बदशक्ल नहीं बनाया, क्योंकि चाक से लिखने की इच्छा वे स्कूल में ही पूरी कर सकते थे।

जब-जब संगीत की कक्षा के लिए बच्चे सभागार में इकट्ठे होते तो हेडमास्टर जी हर एक को सफेद चाक का एक-एक टुकड़ा देते। बच्चे टुकड़ा पकड़ कर सभागार में कहीं भी बैठे या लेटे रह सकते थे। जब सब बच्चे तैयार हो जाते तो हेडमास्टर जी मंच पर बैठकर पियानो बजाते। बच्चे तब स्वरों को पहचान कर फर्श पर ही स्वरलिपि लिखते। सच, लकड़ी के चमकदार भूरे फर्श पर चाक से लिखने का मजा ही कुछ और था। तोतो-चान की क्लास में कुल दस बच्चे थे और सभागार बहुत बड़ा था। फैल जाने पर हरेक बच्चे को लिखने के लिए खूब-खूब जगह मिला करती थी। कोई किसी से अड़ता-भिड़ता भी न था। स्वरलिपि के लिए वैसे लाइनों की जरूरतें पड़ती हैं, पर बच्चे उसकी परवाह न करते। वे यों ही स्वर-चिह्न बना लिया करते। हर एक स्वर-चिह्न को बच्चों ने हेडमास्टर जी से चर्चा करके अपने-आप एक-एक नाम भी दिया था।

-  को बच्चे कुदान कहते थे क्योंकि कूदने के लिए वह अच्छा स्वर था।
-  का नाम उन्होंने झंडा रख छोड़ा था। चिह्न वैसा ही सा लगता था।
-  को वे लोग झंडा-झंडा पुकारते थे।
-  को कहते थे दोहरा-झंडा।
-  को बुलाते काला।
-  को पुकारते सफेद।
-  को सफेद-मस्सा।
-  को गोला कहते।

हर एक बच्चा स्वरलिपि को बखूबी पहचानने और लिखने लगा था। संगीत की घंटी उनकी मनपसंद थी।

फर्श पर चाक से बच्चों को लिखने देने का विचार हेडमास्टर जी का ही था। कागज तो होता था छोटा सा, और अगर सबको लिखना हो तो उतने सारे ब्लैक-बोर्ड कहां मिलते? सब सोचने के बाद उन्होंने तय किया कि फर्श को ही ब्लैकबोर्ड बना लिया जाये ताकि सब आसानी से तेज संगीत की स्वरलिपि भी लिख सकें। बच्चों ने न केवल स्वरलिपि ठीक से सीखी बल्कि उन्होंने ऐसा करते-करते संगीत का रस लेना भी सीख लिया था। संगीत का अभ्यास हो जाने के बाद अगर समय

बचता तो बच्चे फर्श पर चित्र भी बनाते। हवाई जहाज, गुड़िया या दूसरा कोई। जो इच्छा होती बनाते। कभी-कभी बच्चे अपने चित्र इतने पास-पास बनाते कि वे एक दूसरे से जुड़ जाते। तब पूरा फर्श एक विशाल चित्र बन जाता था।

संगीत का अभ्यास जब बीच में बंद होता तो हेडमास्टर जी अक्सर बच्चों के पास जाते। उनकी लिखी स्वरलिपि ध्यान से देखते। कभी टिप्पणी करते, “ना, यहां तो ‘झंडा-झंडा’ नहीं था। यहां कुदान बनाना चाहिए था।”

जब वे हर एक बच्चे की स्वरलिपि जांच चुकते तो वही धुन फिर से बजाते ताकि बच्चे उससे अपनी स्वरलिपि की जांच कर लें और उससे परिचित हो सकें। हेडमास्टर जी कितने भी व्यस्त क्यों न हों, संगीत की कक्षा जरूर लेते। और जहां तक बच्चों का सवाल है, वे भी यही कहते कि हेडमास्टर जी के बिना कोई मजा नहीं।

स्वरलिपि लिखने के बाद फर्श साफ करने का काम बहुत टेढ़ा था। सबसे पहले तो चाक की लिखाई को झाड़न से पोंछना पड़ता था। उसके बाद सब बच्चे मिलकर गीले पोंछे से फर्श साफ करते थे। बहुत मेहनत का काम था यह। और यही कारण था कि तोमोए के बच्चे दीवार या सड़क को चाक से बदशक्ल करने का मतलब खूब समझते थे। वे सभागार के फर्श के अलावा कभी दूसरी जगह को लिखकर गंदा नहीं करते थे। यों भी सप्ताह में दो बार जी भरकर चाक घिसने का मौका मिलने के कारण उनका मन भरा होता था।

तोमोए के बच्चे चाक को भी खूब पहचानते थे—कौन-सा सबसे अच्छा होता है, उसे कैसे पकड़ा जाता है, कैसे लिखने पर अक्षर या चित्र सुंदर बनते हैं। चाक को टूटने से कैसे बचाया जाता है। वे सब चाक के पारखी बन चुके थे।

“यासुकी-चान नहीं रहा।”

वसंत की छुट्टियों के बाद स्कूल में पहला दिन। बच्चे मैदान में इकट्ठे थे। हेडमास्टर जी उनके सामने खड़े थे। उनके हाथ हमेशा की तरह जेबों में थे। वे बहुत देर तक गुमसुम खड़े रहे। चुपचाप। इसके बाद जेबों से हाथ निकाल कर बच्चों की ओर देखा। उनके चेहरे से लग रहा था कि वे काफी रो चुके हैं।

“यासुकी-चान नहीं रहा,” उन्होंने धीमे-धीमे कहा। “आज हम सब उसे दफनाने जायेंगे। मैं जानता हूँ कि तुम सब उसे बेहद प्यार करते थे। बहुत बड़ा सदमा है यह। मुझे भी बहुत-बहुत दुख हो रहा है।” इतना कहते-कहते उनका चेहरा लाल हो उठा और आंखें आंसुओं से भर आयीं। बच्चे जैसे सकते में आ गए। कोई कुछ न बोला। ऐसा सन्नाटा इसके पहले तोमोए में कभी नहीं छाया था।

“इतनी छोटी उम्र में मर गया यासुकी-चान।” तोतो-चान ने सोचा। “और

मैंने तो छुट्टियों में पढ़ने को ली हुई उसकी किताब 'अंकल टाम'स केबिन' पढ़ी भी नहीं।"

उसे याद आया वह दिन जब छुट्टियों के पहले यासुकी-चान उसे हाथ हिलाकर विदा कर रहा था तो उसकी उंगलियां कितनी टेढ़ी-मेढ़ी दिख रही थीं। तभी उसने वह किताब दी थी। तोत्तो-चान को यासुकी-चान से पहली मुलाकात भी याद हो आई, जब उसने पूछा था, "तुम ऐसे क्यों चलते हो?" यासुकी-चान का उत्तर था, "मुझे पोलियो हुआ था।" तोत्तो-चान को उसकी धीमी आवाज और चेहरे पर खेलती हल्की मुस्कान भी याद आयी। और याद आया उस दोपहरी को उनका गुपचुप में मिलना, जब वे पेड़ पर चढ़े थे। उसे याद आया कि यासुकी-चान ने उस पर पूरा भरोसा किया था जबकि वह उससे बड़ा था। और भारी भी। यासुकी-चान ने ही तो उसे बताया था कि अमरीका में टेलीविजन नाम की एक चीज होती है। कितना स्नेह करती थी तोत्तो-चान उससे। वे साथ-साथ खाना खाते थे। आपस में बतियाते थे। साथ-साथ स्टेशन लौटते थे। अब हर समय उसकी कमी अखरा करेगी। अचानक तोत्तो-चान समझ गयी कि यासुकी-चान फिर कभी स्कूल नहीं आयेगा। वह भी चूजों की तरह मर गया है। कितना पुकारा था तोत्तो-चान ने उन चूजों को, पर वे हिले तक नहीं थे।

डेनेचोफ में यासुकी-चान का परिवार रहता था। उसके सामने वाले चर्च में उसकी अंतिम क्रिया होनी थी।

बच्चे चुपचाप एक कतार में जियुगाओका स्टेशन की ओर बढ़े। आज तोत्तो-चान ने कहीं तांक-झांक नहीं की। उसकी नजरें बराबर जमीन पर ही गड़ी रहीं। उसे पता लग रहा था कि जब उसने खबर सुनी थी तब और अब में उसके मन में बहुत कुछ घट चुका था। सुनने पर उसे पहले-पहल तो सिर्फ अविश्वास ही हुआ था। उसके बाद एक गहरा विषाद मन पर छा गया था। पर अब उसका मन कुछ और चाह रहा था। वह एक बार, सिर्फ एक ही बार फिर से यासुकी-चान को चलता-फिरता देखना चाहती थी। वह उससे इतनी बातें करना चाहती थी कि...

चर्च सफेद लिली के फूलों से अटा हुआ था। यासुकी-चान की सुंदर सी मां, उसकी बहन और बाकी सारे संबंधी काले कपड़े पहने चर्च के बाहर खड़े थे। तोत्तो-चान को देखकर वे और जोर से रोने लगे। तोत्तो-चान इसके पहले कभी किसी के अंतिम संस्कार में नहीं गयी थी। उसे सब बड़ा दुखद लग रहा था।

चर्च में कोई बातचीत नहीं कर रहा था। ऑर्गन पर प्रार्थना संगीत बज रहा था। बाहर सूरज का प्रकाश था। सूरज की किरणों से चर्च अंदर से भी उजला-उजला दिख रहा था। पर किसी तरह का उल्लास सूरज की किरणें नहीं बिखेर पा रही थीं। तोमोए के हर बच्चे को किसी ने एक-एक सफेद फूल पकड़ा

दिया था। समझा दिया था कि उन्हें बारी-बारी से फूल कफन पर रखना है।

कफन में लेटे यासुकी-चान की आंखें बंद थीं। वह सफेद-फूलों से घिरा था। वह मर चुका था पर उसका चेहरा अब भी हमेशा की तरह समझदारी और दया से भरा लगता था। तोत्तो-चान ने अपना फूल उसके हाथों के पास रखा। तब उसके हाथ को धीरे से छुआ। पहले भी ना जाने कितनी बार उस हाथ को थामा था उसने। अब वही हाथ सफेद लग रहा था। उसकी उंगलियां पहले से भी लंबी दिख रही थीं, मानो किसी बड़े से आदमी की हों।

"अच्छा तो अब विदा," उसने यासुकी-चान से फुसफुसाकर कहा। "क्या पता हम बड़े होने पर फिर कहीं मिलें। शायद तब तक तुम्हारा पोलियो भी ठीक हो जाए।"

तोत्तो-चान उठी और एक बार फिर यासुकी-चान के चेहरे को देखा। "अरे एक बात तो बताना ही भूल गयी मैं। 'अंकल टाम'स केबिन' मैं नहीं लौटा सकूंगी। मैं उसे रखे लेती हूँ। अगली बार मिलने तक।"

जब वह मुड़कर बाहर जाने लगी तो उसने साफ-साफ यासुकी-चान की आवाज सुनी, "तोत्तो-चान, हमने साथ-साथ खूब मौज-मजा किया। है ना ? मैं तुम्हें कभी नहीं भूलूंगा। कभी भी नहीं।"

दरवाजे पर खड़ी तोत्तो-चान ने भी पलटकर कहा, "मैं भी तुम्हें कभी नहीं भूलूंगी।"

वसंत का सूरज बाहर चमक रहा था। ठीक उस दिन की तरह, जब तोत्तो-चान रेल के डिब्बे वाली क्लास में पहली बार यासुकी-चान से मिली थी। पर आज तोत्तो-चान के गाल आंसुओं से पूरी तरह भीगे हुए थे।

जासूस

बहुत दिनों तक तोमोए के बच्चे दुखी रहे। उन्हें हमेशा यासुकी-चान की याद सताती। खासकर सुबह जब स्कूल लगता, उस समय। बच्चों के दिमाग में इस बात के ठीक से बैठने में समय लगा कि यासुकी-चान सिर्फ लेट नहीं हुआ है, बल्कि वह अब कभी स्कूल नहीं आएगा। कम बच्चों की क्लास वैसे तो अच्छी लगती है, पर इस मौके पर यही बात बेहद अखरने लगी थी। बस एक ही बात अच्छी थी कि बच्चों के बैठने की निश्चित जगह पहले से तय नहीं थी। अगर ऐसा होता तो वह खाली सीट सबको हमेशा मायूस बनाती रहती।

एकाएक, हाल ही में तोत्तो-चान फिर यह सोचने लगी थी कि वह बड़ी होकर क्या बनेगी। कुछ साल पहले वह सड़कों पर घूम कर संगीत बजाने वाले साजिंदों की टोली में शामिल होना चाहती थी। तब वह समय भी आया था जब वह एक

बैलेरिना बनना चाहती थी। जिस दिन वह पहली बार तोमोए आयी थी, उस दिन उसने सोचा था कि वह टिकट बाबू बनेगी। पर अब वह कुछ दूसरा काम करना चाहती थी। वह बड़ी होकर कुछ असाधारण करना चाहती थी। उसे अब यह भी लगता था कि उस काम में स्त्री की कोमलता भी जरूर होनी चाहिए। पहले उसने सोचा कि नर्स बनना भी अच्छी बात होगी। पर सोचते ही उसे वह दिन याद आ गया जब वह घायल सैनिकों के अस्पताल में गयी थी। उस दिन उसने नर्सों को इंजेक्शन लगाते देखा था। इंजेक्शन देना तो मुश्किल काम होगा। तो और क्या कर सकती है वह ? तब अचानक वह खुशी से भर उठी।

“वाह ! तो यही तय रहा। मैं तो पहले से ही सोच चुकी थी कि मैं बनना क्या चाहती हूँ।”

वह ताई-चान के पास गयी। ताई-चान ने अपना बर्नर जलाया ही था।

“मैं जासूस बनना चाहती हूँ।” उसने गर्व से फूलकर कहा।

ताई-चान उसकी ओर मुड़ा। उसने तोत्तो-चान को कुछ देर ध्यान से देखा। फिर उसकी नजरें खिड़की से बाहर झांकने लगीं। लगा, वह सोच रहा है। तब वह वापस तोत्तो-चान की ओर मुड़ा और अति गंभीर आवाज में धीरे-धीरे बोला, “जासूस बनने के लिए तो बहुत चतुर होना पड़ता है। कई भाषाएं भी जाननी होती हैं।”

तब ताई-चान लंबी सांस खींचने के लिए रुका। इसके बाद सीधे तोत्तो-चान की आंखों में झांकता हुआ बोला, “और फिर एक महिला जासूस का बहुत सुंदर होना भी जरूरी होता है।”

तोत्तो-चान ने अपनी नजरें झुका लीं, चेहरा लटका लिया। कुछ और सोचकर बिना तोत्तो-चान की ओर देखे ही ताई-चान बोला, “मुझे नहीं लगता कि इतना बकबक करने वाला जासूस बन सकता है।”

तोत्तो-चान अवाक रह गयी। उसकी बोलती बंद हो गयी। इसलिए नहीं कि ताई-चान का उसके जासूस बनने के खिलाफ होना उसे बुरा लगा हो, बल्कि इसलिए कि जो कुछ भी ताई-चान ने कहा था, बिल्कुल सच था। उसे भी इन्हीं सब बातों का शक था। उसे लगा कि जासूस बनने के गुण उसमें हैं ही नहीं। वह यह भी समझ रही थी कि ताई-चान ने यह सब दुर्भाव से नहीं कहा था। अब जासूस बनने के विचार को भूल जाने के अलावा उसके पास क्या चारा था ! चलो अच्छा ही हुआ कि उसने पहले ही ताई-चान से बात कर ली।

“कमाल है !” उसने मन में सोचा, “ताई-चान भी तो उतना ही बड़ा है जितनी मैं हूँ, फिर भी वह इतना सब जानता है।”

अगर ताई-चान उससे कहता कि वह बड़ा होकर भौतिकशास्त्री बनना चाहता है, तो तोत्तो-चान क्या कहती भला ?

शायद वह कहती, “हां, तुम दियासलाई से बर्नर को अच्छी तरह जला सकते

हों, तुम जरूर भौतिकशास्त्री बन सकते हो।” पर ऐसा कहना तो बड़ा ही बचकाना लगता।

या शायद कहती, “तुम्हें पता है कि कित्सुने को अंग्रेजी में फॉक्स कहते हैं। कुत्सु को शूज कहते हैं। और इसलिए मेरे ख्याल से तुम अच्छे भौतिकशास्त्री बन सकते हो।” पर इतना कहने से भी बात कहां बन पाती !

हां, इतना तोत्तो-चान उस समय भी जानती थी कि ताई-चान बाद में जरूर एक बड़ा आदमी बनेगा। इसलिए उसने और कुछ न कह ताई-चान से स्नेह से



कहा, “धन्यवाद। मैं तो जासूस नहीं बन पाऊंगी। लेकिन मुझे विश्वास है कि तुम जरूर बड़े आदमी बनोगे।”

ताई-चान कुछ बुदबुदाया, अपना सिर खुजलाया और तब अपनी निगाहें सामने रखी किताब में गड़ा दीं।

अगर वह जासूस नहीं बन सकती तो क्या बन सकती है वह ? ताई-चान के पास खड़ी बर्नर की लौ को देखती हुई वह सोचने लगती।

डैडी का वायलिन

बात पूरी समझ में आती, उसके पहले ही तोतो-चान और उसके परिवार पर युद्ध के बादल छाने लगे। हर दिन आस-पड़ोस के परिवारों के पुरुषों और लड़कों को हिलते झंडों और जोरदार ‘बेनज़ाई’ के नारे के साथ विदा दी जाने लगी। बाजार में धीरे-धीरे दुकानों से चीजें गायब होने लगीं। तोमोए के दोपहर के खाने के नियम ‘कुछ समुद्र से और कुछ पहाड़ से’ का पालन करना मुश्किल होने लगा। मां अब तक किसी तरह सूखी समुद्री खरपतवार और आड़ू के मुरब्बे से काम चलाती रही थी। पर अब वह भी नहीं मिलता था। हर चीज का राशन बंध चुका था। बाजार में मिठाई ढूँढ़े नहीं मिलती थी।

तोतो-चान को पता था कि घर के पहले वाले स्टेशन ओकायामा में सीढ़ियां उतरते ही एक मशीन लगी थी। उसमें सिक्का डालने पर गोलियां निकलती थीं। मशीन पर अभी भी रंग-बिरंगी गोलियों का इतना सुंदर चित्र लगा था कि देखते ही मुंह में पानी आने लगता था। पांच सेन का सिक्का डालो और चट से गोलियों का एक छोटा-सा पैकेट निकले आता था। दस डालो तो बड़ा। लेकिन अब मशीन कई दिनों से खाली पड़ी थी। कितने भी सिक्के डालो, अंदर से कुछ निकलता ही नहीं था। हिलाने-डुलाने पर भी नहीं। पर तोतो-चान ने अपनी कोशिश नहीं छोड़ी थी।

“हो सकता है, अंदर किसी कोने में कोई पैकेट अटका पड़ा हो।” वह सोचा करती।

वह हर रोज वहां उतरती। पांच या दस सेन का सिक्का अंदर डालती, पर हर बार खटाक् की आवाज के साथ वह सिक्का ठनठनाता हुआ बाहर निकल आता।

इन्हीं दिनों डैडी को किसी ने एक खबर दी। एक ऐसी खबर, जिसका हर कोई स्वागत करता। डैडी से कहा गया कि अगर वे गोला-बारूद और बंदूकें बनाने वाली फैक्ट्री में जाकर अपने वायलिन पर युद्ध-संगीत बजायें तो बदले में उन्हें चीनी, चावल और खाने-पीने की दूसरी चीजें भी मिल सकती हैं। आखिर वे एक

जाने-माने कलाकार थे और हाल ही में उन्हें संगीत पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उनके मित्रों का कहना था कि उन्हें तो और भी ज्यादा चीजें मिल सकती हैं।

“तुम क्या सोचते हो ?” मां ने डैडी से पूछा “वहां जाकर क्या वायलिन बजाओगे तुम ?”

संगीत सभाएं तो अब हो ही नहीं पाती थीं, क्योंकि जैसे-जैसे लोग मोर्चे पर जाने लगे थे, आर्केस्ट्रा में कलाकारों की भी कमी होने लगी थी। रेडियो कार्यक्रम अब सिर्फ युद्ध के बारे में होते थे। डैडी और उनके बच्चे-खुचे साथी बिल्कुल बेकार थे। ऐसे में उन्हें इस सुझाव का स्वागत ही करना चाहिए था।

डैडी जवाब देने के पहले देर तक सोचते रहे। तब बोले, “अपने वायलिन पर मैं ऐसा संगीत नहीं बजा सकता।”

“ठीक ही कह रहे हो,” मां ने जोड़ा। “मैं होती तो मैं भी मना करती। खाने-पीने का जुगाड़ तो हम किसी न किसी तरह कर ही लेंगे।”

डैडी को यह अच्छी तरह से मालूम था कि तोतो-चान को खाने-पीने के लिए उतना नहीं मिलता जितना किसी बढ़ते बच्चे के लिए जरूरी है। वह यह भी जानते थे कि वह जा-जाकर गोलियों की खाली मशीनों में पैसे डाला करती है। युद्ध संगीत बजाने पर सब व्यवस्था हो सकती है, यह भी वह समझते थे। पर डैडी अपने संगीत का मूल्य इस सबसे कहीं ज्यादा आंकते थे। मां इस बात को बहुत अच्छी तरह समझती थी। उसने डैडी पर कभी भी किसी तरह का दबाव नहीं डाला। “मुझे माफ करना तोत्स्की,” डैडी ने दुखी मन से कहा था।

तोतो-चान उस समय कला, आदर्श और कर्म के सिद्धांतों को समझने की उम्र से छोटी थी। पर एक बात वह तब भी खूब समझती थी कि डैडी अपने वायलिन को बेहद-बेहद प्यार करते थे। इतना प्यार करते थे कि उनके परिवार ने तो उनका त्याग ही कर दिया था। उनके परिवार के कई लोगों और मित्रों तक ने उनसे नाता तोड़ लिया था। बड़ा कठिन समय भी देखा था उन्होंने। लेकिन उन्होंने अपने वायलिन को नहीं छोड़ा था। इसलिए तोतो-चान को लगा कि युद्ध-संगीत न बजाना उनके लिए ठीक ही था। वह डैडी के चारों ओर उछलती-कूदती हुई कहने लगी, “कोई परवाह नहीं, डैडी ! मैं भी आपके वायलिन को प्यार करती हूँ।”

पर दूसरे दिन फिर तोतो-चान ओकायामा पर उतरी और मशीन में झांकने लगी। अंदर से कुछ निकले, इसकी संभावना नहीं थी। पर आशा उसने तब भी नहीं छोड़ी थी।

वादा

खाने के बाद जब बच्चों ने गोल घेरे में लगी अपनी मेज-कुर्सियों को हटा दिया तो सभागार बड़ा लगने लगा।

तोतो-चान ने मन ही मन तय किया, “आज मैं ही सबसे पहले हेडमास्टर जी की पीठ पर चढ़ूँगी।”

असल में तो वह हर दिन यह करना चाहती थी। पर मुश्किल यह थी कि अगर सोचने-विचारने में कुछ क्षणों की भी देर हो जाती तो इसी बीच कोई दूसरा बच्चा उनकी गोद में जा बैठता था क्योंकि वे पालथी मारकर सभागार के फर्श पर बैठते थे। और देखते न देखते दो-तीन बच्चे उनके कंधों या पीठ पर लद जाते थे।

“अरे, बंद करो, रुको।” हेडमास्टर जी झूठमूठ की डांट लगाते। पर उनका चेहरा हंसने से लाल हो जाता। जो बच्चे पीठ पर चढ़ जाते थे, वे अपनी जगह किसी कीमत पर नहीं छोड़ना चाहते थे। यानी ज़रा-सी देर करने का मतलब होता था—सारी जगह का पिर जाना। इसलिए आज तोतो-चान सबसे पहले घेरे के बीच जा खड़ी हुई थी। जैसे ही वे आए, उसने जोर से कहा, “सर, मुझे आपको एक जरूरी बात बतानी है।”

“क्या बताना है, भाई ? हेडमास्टर जी ने खुश होकर नीचे बैठते हुए पूछा। तोतो-चान उन्हें वह बताना चाहती थी जो उसने पिछले दिनों तय किया था। जब हेडमास्टर जी ठीक से पालथी मारकर बैठ गए तो तोतो-चान ने सोचा कि पीठ पर चढ़ना ठीक नहीं होगा। उसे जो कुछ कहना था वह मुंह देखे बिना कैसे कहा जा सकता था ! वह उनके सामने, उनसे सट कर बैठ गयी। उसके चेहरे पर मुस्कान थी और उसकी गर्दन टेढ़ी थी। मां उसके इस भाव को शुरू से ही ‘अच्छा चेहरा’ कहा करती थी। उसका ‘रविवारी चेहरा’ था यह। जब भी वह यों मुस्कराती तो अंदर तक आत्मविश्वास से भर उठती थी। इस वक्त उसके होंठ थोड़े से खुले थे। मन में यह आस्था जगी हुई थी कि यह सच में एक अच्छी बच्ची है।

हेडमास्टर जी उसकी ओर उत्सुकता से देख रहे थे। “क्या बात है ?” उन्होंने कुछ झुकते हुए पूछा।

तोतो-चान ने धीमे से मिठास के साथ किसी बड़ी बहन या मां के अंदाज में कहा, “मैं बड़ी होकर इसी स्कूल में पढ़ाना चाहती हूँ। सच, यही करना चाहती हूँ मैं।”

तोतो-चान ने सोचा था कि हेडमास्टर जी हंसेंगे। पर उन्होंने पूरी गंभीरता से पूछा, “तो इसका वादा रहा ना ?”

उसे लगा वे सच में चाहते हैं कि तोतो-चान वहां पढ़ाए।

तोतो-चान ने जोर-जोर से सिर हिलाकर हामी भरी, “मैं पक्का वादा करती हूँ।” उसके मन में यह संकल्प जग चुका था कि वह तोमोए में ही शिक्षिका बनेगी।

वह उस सुबह के बारे में सोच रही थी, जब वह पहली बार तोमोए में आयी थी और हेडमास्टर जी से मिली थी। युगों पुरानी बात लगती थी वह अब। किस धीरज के साथ हेडमास्टर जी ने उसकी बकबक-चखचख सुनी थी। और सब सुन लेने के बाद कहा था, “अब तुम इस स्कूल की छात्रा हो।” और इतने सालों बाद तो श्री कोबायाशी उसे और ज्यादा प्यारे लगने लगे थे। उसने अपना संकल्प और मजबूत बनाया। वह उन्हीं के लिए काम करेगी। उनकी हर मदद करेगी।

जब उसने पक्का वादा किया तो हेडमास्टर जी खुश होकर मुस्कराने लगे। मुंह से दांत गायब होने की उन्हें कोई झेंप नहीं थी। तोतो-चान ने अपनी छोटी उंगली सामने की। तब हेडमास्टर जी ने भी यही किया। उनकी उंगली कितनी मजबूत थी। भरोसा किया जा सके, उतनी मजबूत। और इसके बाद हेडमास्टर जी और तोतो-चान ने पुरानी जापानी परंपरा के अनुसार अपनी-अपनी छोटी उंगलियों को जोड़कर पक्का वादा किया। हेडमास्टर मुस्करा रहे थे, तोतो-चान भी। वह तोमोए में ही पढ़ाएगी। कितनी-कितनी अच्छी बात है !

“जब मैं टीचर बनूंगी,” वह कल्पना की उड़ान भरने लगी। और तब जो कुछ उसने सोचा वह कुछ यों था : “किताबों की पढ़ाई होगी कम। ढेरों खेल दिवस होंगे, रसोई पकाने वाली पिकनिकें होंगी। कैम्पिंग होगी और खूब सैर किया करेंगे।”

हेडमास्टर जी प्रसन्न थे। तोतो-चान की एक बड़ी महिला के रूप में कल्पना कर पाना मुश्किल तो था पर उनका पक्का विश्वास था कि वह तोमोए में शिक्षिका बन सकती है। बल्कि उनका तो मानना था कि तोमोए का हर बच्चा प्रतिभाशाली शिक्षक बन सकता है। और यह विश्वास इसलिए था क्योंकि ये बच्चे अपना बचपन हमेशा याद रखने वाले थे।

उस क्षण जब तोमोए के हेडमास्टर और उनकी एक छात्रा दस साल आगे की किसी योजना पर पक्का वादा कर रहे थे, बाहर लोग कह रहे थे कि वह दिन दूर नहीं जब अमरीकी हवाई जहाज जापान के आकाश पर उड़ते हुए जापान को बमों से खत्म करने की तैयारी कर रहे होंगे।

रॉकी का गायब होना

लाम पर गये कई सैनिक मर चुके थे। खाने के सामान की किल्लत बढ़ गयी थी। हर एक के मन में डर घर कर रहा था। पर गर्मी हर-बार की तरह इस बार भी आई। सूरज बिना भेदभाव के हारने और जीतने वाले देशों पर चमकने लगा।

तोत्तो-चान कामाकुरा से अपने ताऊजी के घर से लौटकर तोक्यो लौट आयी थी।

तोमोए में अब कैम्प लगना बंद हो चुका था। न ही गर्म सोते की यात्रा जैसी कोई यात्रा अब होती थी। लगता था मानो बच्चों की जिंदगी में फिर कभी उस गर्मी की छुट्टियों जैसा आनंद और उल्लास का मौका नहीं आयेगा। तोत्तो-चान अपने चचेरे भाई-बहनों के साथ कामाकुरा वाले मकान में छुट्टियां बिताने जाया करती थी। पर इस साल वहां भी हर बात कुछ अलग सी ही रही। बच्चों को हर रात डरावनी, भूतों की कहानियां सुनाने वाला उनका एक संबंधी लड़का मोर्चे पर बुलाया जा चुका था। अब हर रात भूतों की कहानी कौन सुनाता ? और फिर हमेशा अपने अमरीका प्रवास के सच्चे-झूठे किस्से सुनाने वाले ताऊजी भी मोर्चे पर थे। उनका नाम था शूजी तागुची। वह एक प्रसिद्ध कैमरामैन थे।

ताऊजी न्यूयार्क में निहोन-न्यूज के ब्यूरो प्रमुख रह चुके थे और अमरीकन मैट्रो न्यूज के सुदूरपूर्व के प्रतिनिधि भी। लोग उन्हें शू तागुची पुकारा करते थे। डैडी के वे बड़े भाई थे। असल में अगर डैडी ने अपनी मां का वंश चलाने के लिए उनका पारिवारिक नाम नहीं अपनाया होता तो वह सब भी तागुची ही कहलाते। उन दिनों शूजी ताऊजी के बनाये 'राबाउल की लड़ाई' जैसे कई चलचित्र सिनेमाघरों में चल रहे थे। पर ताऊजी मोर्चे से चिट्ठी-पत्री नहीं भेजते थे। भेजते थे सिर्फ फिलमें। इसलिये तोत्तो-चान की ताईजी व भाई-बहनें सब चिंतित रहते थे क्योंकि अखबारों में युद्ध के जितने भी चित्र छपते थे उन सब में सैनिकों को हमेशा खतरनाक स्थितियों में दिखाया जाता था। और एक कैमरामैन होने के नाते ताऊजी को और आगे बढ़कर चित्र खींचने पड़ते होंगे। कम से कम परिवार का हर वयस्क सदस्य यही कहता था।

इस बार गर्मी में कामाकुरा का समुद्र तट भी बिल्कुल सुनसान पड़ा था। पर इस सबके बावजूद यात-चान सबको हंसाता रहता। वह ताऊजी का सबसे बड़ा बेटा था। उसकी उम्र तोत्तो-चान से साल भर कम थी। सब बच्चे एक बड़ी सी मसहरी के नीचे सोया करते थे। बच्चे सोने लगते तो वह जोर से कहता, "सम्राट जिंदाबाद!" और इसके बाद वह एक घायल गोली खाए सैनिक की तरह मरने का नाटक करता हुआ धड़ाम से नीचे गिर जाता। यह वह कई बार दोहराता। मजेदार बात यह थी कि जिस रात वह यों नाटक करता, उस रात वह सोते-सोते चलता था। और नींद में चलते-चलते आंगन में गिर जाता। तब घर भर में बड़ा हल्ला मचता।

तोत्तो-चान की मां इस बार कामाकुरा नहीं आयी थी। डैडी के साथ तोक्यो में ही रही क्योंकि डैडी को वहीं कुछ काम था। अब छुट्टियां खत्म हो गयी थीं और तोत्तो-चान तोक्यो लौट आयी थी। तोत्तो-चान को भूतों की कहानियां सुनाने

वाले की बहन तोक्यो लाई थी।

सदा की तरह घर लौटते ही तोत्तो-चान ने सबसे पहले रॉकी को ढूंढा। वह कहीं न मिला। न घर में, न बगीचे में। तब आर्किड की पौधशाला में उसे ढूंढा। अब तोत्तो-चान को चिंता होने लगी क्योंकि रॉकी तो सबसे पहले उसका स्वागत किया करता था। तोत्तो-चान सड़क पर भागी और रॉकी को आवाजें देने लगी। पर वह प्यारी-प्यारी आंखों, कानों और पूंछ वाला कुत्ता दूर-दूर तक न दिखा। अब वह दौड़ती हुई घर लौटी कि शायद रॉकी घर पहुंच गया हो। पर वहां तो वह था ही नहीं।

"रॉकी कहां है ?" उसने मां से पूछा।

मां को यह तो पता ही चल गया होगा कि वह रॉकी को ढूंढती फिर रही है। परेशान है। पर उसने कुछ नहीं कहा।

"कहां है मेरा रॉकी ?" तोत्तो-चान ने मां का स्कर्ट खींचते हुए दूसरी बार पूछा।

मां को जवाब देना भारी पड़ रहा था, "वह गायब हो गया है बेटे।" उसने बुझी-बुझी आवाज में कहा।

तोत्तो-चान को बात पर कतई विश्वास नहीं हुआ। कैसे गायब हो सकता है रॉकी ? "कब ?" उसने मां की ओर सीधे देखते हुए पूछा।

मां को शब्द ढूंढे नहीं मिल रहे थे। "तुम कामाकुरा गयी उसके बाद से ही गायब है वह।" मां की आवाज दुख से भारी थी। उसने आगे जोड़ा, "हमने उसे बहुत खोजा। हर जगह खोजा। सबसे पूछा भी। पर वह कहीं नहीं मिला। मुझे समझ ही नहीं आ रहा था कि तुम्हें कैसे बताऊं। मुझे सच में बहुत अफसोस है।"

अचानक तोत्तो-चान समझ गयी कि रॉकी जरूर मर चुका है। "मां यह नहीं चाहती कि मैं दुखी होऊं," उसने मन में सोचा। "पर मुझे पता है रॉकी नहीं रहा। वह मर चुका है।"

बात बिल्कुल साफ थी। इतने सालों में तोत्तो-चान कितने भी लंबे समय के लिए बाहर क्यों न रही हो, रॉकी कभी भी घर से गायब नहीं हुआ था। उसे पता था कि तोत्तो-चान लौट आएगी। "मुझे बिना बताए रॉकी कहीं जा ही नहीं सकता है," उसने सोचा। यह उसका पक्का विश्वास था।

पर मां से उसने यह सब नहीं कहा। उसे मालूम था कि मां को अंदर से क्या लग रहा होगा। उसने अपनी नजरें झुका लीं। सिर्फ इतना ही कहा, "पता नहीं कहां गया होगा रॉकी।"

यह कहकर वह ऊपर अपने कमरे की ओर भागी। रॉकी के बिना घर घर-सा लग ही नहीं रहा था। कमरे में पहुंचकर भी उसने न रोने की पूरी कोशिश की। एक बार सारी बातों पर फिर से सोचा। यह जानने की कोशिश की कि कहीं उसने

रॉकी से बुरा व्यवहार तो नहीं किया था जिसके कारण वह नाराज होकर भाग गया हो।

“जानवरों को कभी परेशान ना करो,” श्री कोवायाशी कहते थे। “आखिर जानवर हम पर कितना भरोसा करते हैं। उनके विश्वास को कभी तोड़ना नहीं चाहिए। कुत्ते को कुछ मांगने पर मजबूर करना और फिर कुछ न देना—ऐसा करने पर उसका विश्वास टूटने लगता है। उसकी आदत भी बिगड़ती है।”

तोत्तो-चान ने हमेशा ये सारे नियम माने थे। उसने रॉकी को कभी भी धोखा नहीं दिया था। सोचने पर भी अपनी कोई भूल उसे याद नहीं आयी।



इतने में उसे लगा कि फर्श पर पड़े भालू की टांग से कुछ चिपका है। अब तक उसने अपने आप को काबू में रखा था। पर अब जो उसने देखा, उसे देखने के बाद उसके सब्र का बांध टूट गया। भालू की टांगों पर रॉकी के बालों का एक गुच्छा चिपका हुआ था। कामाकुरा जाने के पहले रॉकी और तोत्तो-चान फर्श पर लोटपोट का खेल खेल रहे थे। जरूर तभी ये बाल चिपके होंगे। मुट्ठी में उन बालों को भींचकर तोत्तो-चान रोई। खूब रोई। जोर-जोर से रोई। आंसुओं की मानो बाढ़ थी। और सिसकियां धमती ही नहीं थीं।

पहले यासुकी-चान और अब रॉकी। तोत्तो-चान ने अपना एक और साथी खो दिया था।

चाय पार्टी

रयो-चान तोमोए का चौकीदार था। सभी बच्चे उसे बेहद प्यार करते थे। अब रयो-चान को भी मोर्चे पर जाना था। उसे बुलावा आ गया था। इतना बड़ा हो चुका था वह, पर बच्चे उसे अभी भी उसके बचपन वाले नाम से ही पुकारते थे। जब भी बच्चे किसी मुश्किल में फंसे तो रयो-चान किसी फरिश्ते की तरह उनकी मुसीबतें दूर करने हाजिर हो जाता था। वह ज्यादा बोलता न था, पर किस समय क्या करना चाहिए, यह उसे तुरत-फुरत सूझ जाता था। जिस दिन तोत्तो-चान गंदी हौदी में जा गिरी थी, उस दिन भी उसी ने उसे बचाया था। न डांट, न फटकार, न बड़बड़ाहट। चुपचाप तोत्तो-चान को साफ किया था उसने।

“रयो-चान के लिए हम चाय पार्टी करते हैं। हेडमास्टर जी ने सुझाया।

“चाय पार्टी ?”

हरी चाय जापान में दिन भर में कई-कई बार पी जाती है। पर आतिथ्य या सत्कार के साथ वहां ‘चाय’ नहीं जुड़ी है। हां, एक दूसरे किस्म की चाय का पेय वहां पारिवारिक समारोहों में जरूर इस्तेमाल किया जाता है। इसलिए तोमोए में चाय पार्टी की बात एक नयी बात होनी ही थी। फिर बच्चों को तो नया करना पसंद आता ही था। बच्चों को तब यह तो पता चला कि हेडमास्टर जी ने उस दिन नए शब्द को ईजाद कर काम में लिया है। उन्होंने कहा था ‘सावाकाई’ (चाय की दावत)। ‘सोबेतुकाई’ (विदाई समारोह) शब्द को उन्होंने जान-बूझकर छोड़ दिया होगा, क्योंकि ‘विदाई’ शब्द दुखद होता है। विदाई शब्द का अगर वे इस्तेमाल करते तो कम से कम बड़े बच्चे जरूर यह समझ जाते कि वे रयो-चान को सच में ‘विदा’ कर रहे हैं, क्योंकि मोर्चे पर जाने के बाद कोई भी सैनिक युद्ध में काम भी आ सकता है। पर ‘दावत’ तो दूसरी ही बात होती है। और किसी चाय पार्टी में तो बच्चे कभी गये ही नहीं थे, इसलिए वे सब प्रसन्न हो गये।

उस दिन स्कूल खत्म होने के बाद बच्चों ने कोबायाशी साहब के साथ सभागार में मेजों का एक बड़ा-सा घेरा बनाया। तब हेडमास्टर जी ने हर बच्चे को सिंकी हुई समुद्रफेनी का एक-एक टुकड़ा दिया। साथ में हरी चाय भी दी। युद्ध की तंगी के दिनों में यह भी बहुत बड़ी बात थी। उसके बाद रयो-चान के लिए एक गिलास साके सामने रख कर वे स्वयं भी उसके पास बैठ गये। साके का उन दिनों राशन था। केवल मोर्चे पर जाने वालों को ही मिला करती थी साके।

“तोमोए में यह पहली चाय पार्टी है,” हेडमास्टर जी ने कहा। “तुम सब खूब मौज करो। हां, रयो-चान से तुम लोगों को जो कुछ भी कहना हो, बिना झिझके कहो। एक दूसरे को भी अगर कुछ कहना चाहो तो जरूर कहो। पर एक-एक कर बीच में खड़े होकर बोलना सब।”

उस दिन कई बातें नयी थीं। तोमोए में सिंकी समुद्रफेनी खाने का यह पहला मौका था। और रयो-चान भी उनके साथ पहली बार बैठकर साके पी रहा था।

सब बारी-बारी से उठे। रयो-चान के सामने खड़े हुए। उससे बात की। पहले कुछ बच्चों ने उसे नसीहतें दीं। अपना ख्याल रखने को कहा। बीमार न पड़ जाने की हिदायत दी। इसके बाद तोतो-चान की क्लास में पढ़ने वाला मिगिता उठा। उसने खड़े होकर कहा, “मैं अब जब भी गांव जाऊंगा तो तुम्हारे लिए वहां से मृत्युभोज वाला मालपुआ लाऊंगा।”

सब बच्चे जोरों से हंस पड़े। असल में साल भर पहले मिगिता गांव से लौटा था। वहां किसी मृत्युभोज में उसने मालपुआ खाए होंगे। लौटकर खूब बखान किया था उसने मालपुओं का। इसके बाद जब कोई मौका मिलता, वह यही वादा दोहराता। पर वादा कभी पूरा नहीं करता।

हेडमास्टर जी ने मिगिता को मृत्युभोज के मालपुओं का नाम लेते सुना तो वे चौंक गए। विदा के समय मौत का नाम लेना भी अशुभ होता है। लेकिन मिगिता ने बात अबोध सहजता के साथ कही थी। सच में उसकी इच्छा थी कि जो मालपुआ उसे खाने में इतने अच्छे लगे थे, उन्हें वह अपने दोस्त रयो-चान के साथ बांटे। इसलिए हेडमास्टर जी ने भी हंसने में बच्चों का साथ दिया। रयो-चान तो खूब-खूब हंसा। यह वादा मिगिता उससे कई बार कर चुका था।

तब ओए खड़ा हुआ। उसने रयो-चान से वादा किया कि वह बड़े होकर जापान का सबसे अच्छा उद्यान-वैज्ञानिक बनेगा। ओए के पिता तोदोरोकी की सबसे बड़ी पौधशाला के मालिक थे। इसके बाद काइको आओकी खड़ी हुई पर आदत के अनुसार वह कुछ बोल न सकी। खड़ी-खड़ी मुस्कराती और शर्माती रही। तब उसने झुककर नमस्कार किया और वापस आ गयी। इस पर तोतो-चान तेजी से झपटते हुए सामने आयी। काइको के बदले वह बोली, “काइको-चान के चूजे उड़ने लगे हैं। मैंने कुछ दिन पहले ही उन्हें देखा था।”

अमाडेरा बोला, “अगर कहीं घायल कुत्ते-बिल्लियां मिलें तो उन्हें मेरे पास भेज देना। मैं मरहम-पट्टी कर उन्हें ठीक कर दूंगा।”

ताकाहाशी क्योंकि नाटा था, वह मेज के नीचे से ही निकल आया और पलक झपकते ही घेरे के बीच आ गया। अपनी प्रसन्न आवाज में बोला, “रयो-चान, धन्यवाद। जो कुछ किया, उसके लिए धन्यवाद। हर एक चीज के लिए धन्यवाद।”

अब आइको साइशो की बारी थी। उसने कहा, “रयो-चान, जब उस दिन मैं गिर गयी थी तो तुमने मुझे पट्टी बांधी थी। उसके लिए धन्यवाद। मैं यह बात कभी नहीं भूलूंगी।” आइको के ताऊ प्रसिद्ध एडमिरल थे। उन्होंने रूसी-जापानी युद्ध में भाग लिया था। उसके रिश्ते की एक महिला अत्सुको साइशो सम्राट के दरबार में कवियित्री भी थी। पर आइको इन बातों का जिक्र नहीं करती थी। कभी शेखी नहीं बघारती थी।

हेडमास्टर जी की बेटी मियो-चान ही रयो-चान को सबसे निकटता से जानती थी। वह खड़ी हुई तो उसकी आंखें भरी हुई थीं, “अपना ख्याल रखना रयो-चान। रखोगे ना ! मुझे चिट्ठी लिखना। मैं भी जवाब दूंगी।”

तोतो-चान रयो-चान से बहुत कुछ कहना चाहती थी। इतना कुछ कि कहां से शुरू करे, यही उसकी समझ में नहीं आ रहा था। वह क्या करे ? उसने खड़े होकर सिर्फ इतना कहा, “रयो-चान, तुम्हारे चले जाने के बाद भी हम सब हर दिन चाय पार्टी करेंगे।”

सुनकर हेडमास्टर जी हंसने लगे। रयो-चान भी। इसके बाद सब बच्चे भी। तोतो-चान भी खूब हंसी।

पर तोतो-चान की भविष्यवाणी दूसरे दिन ही सच निकल आयी क्योंकि उस चाय पार्टी के बाद तो बच्चे हमेशा अपने खाली समय में चाय पार्टी का खेल खेलने लगे। खाने को कुछ नहीं होता तो वे लकड़ी या छाल चूसने। चाय की जगह पानी का गिलास थाम लेते। कभी-कभी वे ये भी कल्पना कर लेते कि गिलास में साके है। खेलते-खेलते अचानक कोई बच्चा कहता, “मैं मृत्युभोज वाला मालपुआ लाऊंगा।” और सब खूब हंसते। चाय पार्टी के खेल के वक्त बच्चे एक दूसरे को सोच-सोचकर बातें बताते। खाने को कुछ न मिलने पर भी इन चाय पार्टियों में खूब आनंद आता था।

रयो-चान को दी गयी दावत उसके लिए एक बेहद सुंदर उपहार थी। उस दिन तो किसी को यह नहीं पता था कि तोमोए की यह आखिरी दावत ही बन जायेगी। कोई तब नहीं जानता था कि वे सब जल्दी ही बिछुड़ जायेंगे। अपने-अपने रास्ते चले जायेंगे।

उधर रयो-चान तोयोको वाली रेल से विदा हुआ, इधर अमरीकी हवाई जहाज आ धमके। वे तोक्यो पर उड़ानें भरने लगे। हर रोज बम बरसाने लगे।

सायोनारा, सायोनारा !

एक रात तोमोए जल गया। मियो-चान, उसकी बहन मिसा-चान और उनकी मां, सब स्कूल से सटे हुए घर में रहते थे। तोमोए में आग लगी तो सब कुहोन्बुत्सु मंदिर के पास वाले खेतों की ओर भागे। तालाब के पास यही जगह उस समय सुरक्षित थी।

बी-29 लड़ाकू जहाजों ने स्कूल में क्लासों के रूप में इस्तेमाल किये जा रहे रेल के डिब्बों पर कई बम बरसाए थे।

हेडमास्टर जी के सपनों का स्कूल लपटों से घिर गया। बच्चों के हंसने-गाने, खिलखिलाने की आवाजों की जगह वहां धू-धू कर उठने वाली विनाशकारी लपटों का विध्वंस-गान सुनाई पड़ रहा था। आग पर काबू नहीं पाया जा सकता था। सब कुछ जल कर धराशायी हो गया। पूरा जियुगाओका ही लपटों में घिर गया था।

लपटों की विनाश लीला के बीच हेडमास्टर जी सड़क पर खड़े होकर तोमोए को जलता देखते रहे। हमेशा की तरह वह अभी भी अपना वही पुराना काला सूट पहने थे। उनके हाथ जेबों में थे।

“हम अब कैसा स्कूल बनाएं ?” उन्होंने अपने पास खड़े बड़े बेटे तोमोए से पूछा। तोमोए विश्वविद्यालय का छात्र था। पिता की बात सुन वह अवाकू खड़ा रह गया।

श्री कोबायाशी का बच्चों के लिए प्यार और शिक्षा के प्रति समर्पण उन लपटों से कहीं अधिक शक्तिशाली था, जिनमें घिर कर तोमोए का स्कूल जल रहा था। हेडमास्टर जी अब भी नहीं टूटे थे।

तोतो-चान ठसाठस भरी रेल में तोक्यो से जा रही थी। भीड़ में नन्ही-सी तोतो-चान पिसी जा रही थी। रेलगाड़ी तोक्यो से दूर उत्तर-पूर्व की ओर बढ़ रही थी। वह खिड़की के बाहर अंधेरे में झांकने लगी। उसे हेडमास्टर जी के अंतिम शब्द याद आ रहे थे, “हम फिर मिलेंगे।” साथ ही याद आ रहा था बार-बार दोहराया हुआ उनका वाक्य “तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो !” इन शब्दों को वह कभी नहीं भूलना चाहती थी। मन में इस विश्वास को संजोए कि वह हेडमास्टर जी से जल्दी ही फिर से मिलेगी, वह सो गयी।

रेलगाड़ी चिंतित और दुखी यात्रियों के बोझ के साथ घुप्प अंधेरे में आगे की ओर बढ़ती गयी।

उपसंहार

मेरे साथ ‘रेल के डिब्बे’ की कक्षा में ‘यात्रा’ करने वाले मेरे वे साथी भला अब क्या कर रहे हैं ?

आकिरा ताकाहाशी

ताकाहाशी जिसने खेल दिवस पर सारे इनाम जीते थे, कभी लंबा नहीं हुआ। पर उसे जापान के एक ऐसे हाई स्कूल में दाखिला मिला जो अपनी ‘रगबी’ (फुटबाल) टीम के लिए विख्यात था। कालांतर में उसने माइजी विश्वविद्यालय से इलैक्ट्रॉनिक इंजीनियरिंग की डिग्री ली।

अब वह मध्य जापान में लेक हामाना के पास स्थित एक विशाल इलैक्ट्रॉनिक कंपनी में कार्मिक प्रबंधक है। कर्मचारियों में सहयोग-भाव बनाए रखना उसकी जिम्मेदारी है। वह उनकी शिकायतें और परेशानियां सुनता है और उनके झगड़े निबटाता है। खुद इतना कुछ सहने-झेलने के कारण वह दूसरों की समस्याएं बखूबी समझती है। जाहिर है कि उसकी खुशमिजाजी और आकर्षक व्यक्तित्व भी उसकी मदद करते होंगे। तकनीकी विशेषज्ञ होने के कारण वह नौजवानों को ऐसी विशालकाय मशीनें चलाना सिखाता है जो समेकित-सक्रिय पर चलती हैं।

मैं ताकाहाशी और उसकी पत्नी से मिलने हामामात्सु गयी। वह एक भली महिला है और ताकाहाशी को बखूबी समझती है। उसने तोमोए के बारे में इतना कुछ सुन रखा है मानो वह खुद भी वहां पढ़ चुकी हो। उसने मुझे आश्वासित किया कि अपने बौनेपन को लेकर ताकाहाशी में कोई कुंठा नहीं है। मुझे विश्वास है कि वह सही कहती है क्योंकि कुंठाएं उस विख्यात हाई स्कूल और विश्वविद्यालय में उसका जीना दूभर कर देतीं। ना ही वह कार्मिक-विभाग में काम कर पाता, जो वह कर रहा है।

तोमोए में अपने पहले दिन के बारे में ताकाहाशी ने बताया कि दूसरे विकलांग बच्चों को देखते ही वह तत्काल सहज हो गया था। उस क्षण के बाद वह आशंकित नहीं रहा, उसे हर दिन इतना आनंद आता कि उसकी कभी स्कूल

छोड़ घर रुकने की इच्छा नहीं हुई। उसने बताया कि पहले-पहल उसे नंग-धड़ंग हो तरण-ताल में तैरने में झिझक हुई। पर ज्यों-ज्यों उसने एक-एक करके कपड़े उतारे तो उसकी झिझक और शर्म की परतें भी मानो उतरती चली गयीं। यहां तक कि बाद में उसे सबके सामने खड़े हो भोजन के समय का भाषण देने में भी कोई झिझक नहीं हुई।

उसने मुझे बताया कि किस प्रकार श्री कोबायाशी उसे, उससे भी ऊंचे कुदान घोड़ों (वाल्डिंग हॉर्सेज) को लांघने के लिए प्रोत्साहित करते। वे उसे विश्वास दिलाते कि वह उन्हें शर्तिया लांघ सकता है। हालांकि अब ताकाहाशी को लगता है कि संभवतया वे उसकी मदद भी करते थे—पर बिल्कुल अंतिम क्षणों में—ताकि उसे यह लगे कि बाधा उसने खुद ही लांघी है। श्री कोबायाशी ने उसमें आत्मविश्वास जगाया और कुछ हासिल कर पाने की सफलता के अवर्णनीय आनंद के अनुभव से परिचित होने दिया। जब भी उसने पीछे दुबकने की कोशिश की, हेडमास्टर जी उसे सामने लाए ताकि चाहे-अनचाहे उसमें जीवन के प्रति एक समारात्मक दृष्टिकोण पनप सके। आज भी उसे इतने ढेर से इनाम जीत पाने का उल्लास याद है। चमकती आंखें और हमेशा की तरह समझदार ताकाहाशी सानंद तोमोए की यादें ताजी कर रहा था।

एक अच्छा इंसान बनने में घर के अच्छे वातावरण का भी योगदान रहा होगा। फिर भी इसमें कोई शंका नहीं है कि श्री कोबायाशी का हम बच्चों के साथ व्यवहार एक विलक्षण दूरदृष्टि पर आधारित था। ठीक जैसे वे मुझसे कहा करते थे, “तुम्हें पता है, तुम सच में एक अच्छी बच्ची हो” वैसे ही वे ताकाहाशी से कहते, “तुम कर सकते हो !” और यही उसके जीवन को गढ़ने में एक निर्णायक घटक रहा।

जब मैं हामामात्सु से लौट रही थी, तब ताकाहाशी ने मुझे वह बात याद दिलाई जो मैं बिल्कुल भूल चुकी थी। तोमोए आने के रास्ते में दूसरे स्कूलों के बच्चे उसे अकसर छेड़ते थे, और जब वह स्कूल पहुंचता तो बेहद दुखी होता। इस पर मैं उससे पूछती कि कौन से बच्चों ने परेशान किया और आनन-फानन में उनके पीछे दौड़ लगाती। कुछ देर बाद लौटकर मैं उसे आश्वासित करती कि आईदा वे ऐसा करने की हिम्मत नहीं करेंगे।

“तुमने मुझे उस समय इतनी खुशी दी थी,” उसने बिछुड़ते समय कहा। लेकिन मैं तो यह सब भूलें बैठी थी। याद रखने के लिए धन्यवाद, ताकाहाशी।

मियो-चान (मियो कानेको)

श्री कोबायाशी की तीसरी बेटिया मियो-चान ने कुनीताची संगीत महाविद्यालय के शिक्षा विभाग से स्नातक की परीक्षा पास की और अब वह महाविद्यालय से जुड़ी

प्राथमिक पाठशाला में पढ़ाती है। अपने पिता की तरह उसे भी छोटे बच्चों को पढ़ाना अच्छा लगता है। जिस समय वह लगभग तीन साल की थी, तभी से श्री कोबायाशी उसकी चाल और संगीत की लय के साथ उसके अंग संचालन तथा बोलना सीखने की उसकी कोशिशों पर गौर करते रहे। बच्चों को सिखाने-पढ़ाने में इससे उसे बेहद मदद मिली है।

साक्को मत्सुयामा (अब श्रीमती साइतो)

साक्को-चान, बड़ी-बड़ी आंखों वाली वह लड़की, जो तोमोए में मेरे पहले दिन मुझे खरगोश की कढ़ाई वाली प्रॉक पहने दिखी थी, बाद में एक ऐसे स्कूल में पढ़ी जिसमें उन दिनों लड़कियों के लिए दाखिला पाना बेहद कठिन था। वह स्कूल आजकल मिता हाई स्कूल नाम से जाना जाता है। बाद में उसने तोक्यो विमेन्स क्रिश्चियन यूनिवर्सिटी के अंग्रेजी विभाग में पढ़ाई की और वाई. डब्ल्यू. सी. ए. में अंग्रेजी शिक्षिका बनी। वह अब भी वहीं है। ग्रीष्मकालीन शिविरों में वह अपने तोमोए अनुभव का बेहतरीन उपयोग करती है। उसने उस व्यक्ति से विवाह किया जिससे वह जापान के माउन्ट होताका में पर्वतारोहण करते समय मिली थी। उन्होंने अपने बेटे का नाम यासुताका रखा, जिसका पिछला भाग उस पर्वत के नाम पर है, जहां वे मिले थे।

ताईजी यामानोउची

ताई-चान, जिसने मुझे कहा था कि वह मुझसे विवाह नहीं करेगा, जापान का अग्रणी भौतिक-विज्ञानी बना। आज वह अमरीका में रहता है जो ‘ब्रेन ड्रेन’ का उदाहरण है। उसने तोक्यो यूनिवर्सिटी आफ एज्युकेशन के विज्ञान विभाग से भौतिक विज्ञान में स्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त की। एम. एससी. के बाद रोचेस्टर विश्वविद्यालय से उसने डाक्टरेट की। तब वह वहीं बस गया और प्रायोगिक ‘हाई-एनर्जी फिक्स्ड’ में शोधकार्य में लगा रहा। अब इलिनाइस स्थित फर्मी नेशनल एक्सलरेटर लैबोरेटरी में, जो विश्व में सबसे बड़ी प्रयोगशाला है, उप-निदेशक है। इस शोध प्रयोगशाला में अमरीका के तिरेपन विश्वविद्यालयों के सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक काम करते हैं। इस विशाल संगठन में 145 भौतिक-विज्ञानी और 1400 कर्मचारी हैं—इससे ही ताई-चान की विद्वत्ता स्पष्ट हो जाती है। यह प्रयोगशाला तकरीबन पांच साल पहले विश्व भर में चर्चित हुई, जब वहां के वैज्ञानिकों को 500 करोड़ इलेक्ट्रान वोल्ट्स की हाई-इनर्जी बीम के उत्पादन में सफलता मिली।

हाल ही में कोलंबिया विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर के सहयोग से ताई-

चान को 'अप्सिलॉन' के अन्वेषण में सफलता मिली है। मेरा विश्वास है कि किसी दिन ताई-चान को नोबेल पुरस्कार मिलेगा।

ताई-चान ने रोचेस्टर विश्वविद्यालय की एक विदुषी छात्रा से विवाह किया जो गणित में स्नातक है। अपनी विद्वत्ता के कारण ताई-चान जिस भी प्राथमिक शाला में जाता, शायद प्रगति ही करता। पर मुझे लगता है कि तोमोए प्रणाली के कारण, जहां बच्चों को अपने चहेते विषयों पर काम करने की छूट थी, उसकी प्रतिभा में निखार आया। मुझे याद नहीं आता कि वह कक्षा में एल्कोहल वर्नर पर फ्लास्क या टेस्ट ट्यूब से कोई प्रयोग करने, या विज्ञान पर बेहद कठिन दिखने वाली किताबों को पढ़ने के अलावा कभी कुछ दूसरा करता था।

कुनियो ओए

ओए, जिसने मेरी चोटियां खींची थीं, आज सुदूर-पूर्वी आर्चिड पर जापान का अग्रणी विशेषज्ञ है। उसके एक-एक आर्चिड बल्ब की कीमत हजारों डालर होती है। इस अति-विशिष्ट क्षेत्र की दक्षता के कारण ओए की भारी मांग रहती है और वह पूरे जापान भर में यात्रा करता रहता है। इन यात्राओं के बीच, काफी कठिनाइयों के बाद मैं उससे फोन पर बात कर सकी। हमारा संक्षिप्त वार्तालाप कुछ यों था :

“तोमोए के बाद तुम किस स्कूल में गए ?”

“मैं कहीं नहीं गया।”

“किसी दूसरे स्कूल में नहीं गए ? तोमोए ही तुम्हारा अकेला स्कूल रहा ?”

“बिल्कुल ठीक।”

“हे भगवान ! तुम किसी माध्यमिक विद्यालय में भी नहीं गए ?”

“ओह हां, जब हम क्यूशे भागे थे तो चंद महीनों के लिए ओइता सैकेंडरी स्कूल गया था।”

“पर सैकेंडरी स्कूल तक पढ़ाई करना तो अनिवार्य है ना ?”

“ठीक कह रही हो, पर मैंने नहीं की।”

“वाह, क्या मस्त-मौला इंसान है यह,” मैंने सोचा। युद्ध के पहले ओए के पिता का एक विशाल नर्सरी-बागान था। दक्षिण-पश्चिम तोक्यो का तोदोरोकी कहलाने वाला लगभग पूरा क्षेत्र इस बागान में आता था। बम विस्फोटों से वह नष्ट हो गया था। ओए का सौम्य स्वभाव विषयांतर के बाद हुए हमारे वार्तालाप से और भी स्पष्ट होता है।

“तुम्हें सबसे खुशबूदार फूल का पता है ? मेरे विचार से यह चीनी स्प्रिंग आर्चिड है। दुनिया की कोई सुगंध उसकी तुलना नहीं कर सकती।”

“क्या वे बेहद महंगे होते हैं ?”

“कुछ होते हैं, कुछ नहीं भी।”

“देखने में कैसे लगते हैं ?”

“कोई खास तड़क-भड़क नहीं होती उनकी। बल्कि कुछ दबे से होते हैं वे। पर यही उनका आकर्षण भी है।”

तोमोए के समय से ओए बिल्कुल नहीं बदला था। उसकी शांत आवाज सुन मैंने सोचा, “स्कूली पढ़ाई पूरी नहीं कर पाने का इसे कोई अफसोस ही नहीं है। वह तो अपने मन की करता है और उसे खुद पर पक्का विश्वास है।” मैं प्रभावित हुए बिना न रही।

काजुओ अमाडेरा

अमाडेरा, जिसे जानवरों से बेइतहा प्यार था, बड़ा होकर पशु-चिकित्सक बनना चाहता था। दुर्भाग्य से उसके पिता की अचानक मृत्यु हो गयी और उसके जीवन की धारा ही बदल गयी। निहान विश्वविद्यालय के पशु-चिकित्सा व पशुपालन विभाग को छोड़ उसे किओ अस्पताल में नौकरी करनी पड़ी। फिलहाल वह आत्मरक्षा फोर्स के केंद्रीय अस्पताल में क्लिनिकल जांच विभाग में एक जिम्मेदार पद पर काम कर रहा है।

आइको साइशो (अब श्रीमती तानाका)

आइको साइशो, जो संबंध में एडमिरल टोगो की पोती लगती थी, आओयामा गाकुइन से संबद्ध प्राथमिक शाला से स्थानांतरण के बाद तोमोए आई थी। मैं उन दिनों उसकी एक संजीदा ‘महिला’ के रूप में कल्पना करती थी। शायद मुझे ऐसा इसलिए लगता था क्योंकि वह अपने पिता को खो चुकी थी। उसके पिता थर्ड गार्ड रेजिमेंट में मेजर थे और मैचूरियन घटना में उनकी मौत हो गयी थी।

कामाकुरा बालिका हाई स्कूल से पढ़ाई पूरी करने के बाद आइको का विवाह एक वास्तुकार से हुआ। उसके दोनों बेटे आज बड़े धंधों में लग चुके हैं। अपना अधिकांश खाली समय आइको कविताएं लिखने में बिताती है।

“तो तुम अपनी प्रसिद्ध मौसी की परंपरा निभा रही हो, जो सम्राट के दरबार में कवियित्री थी !” मैंने जानना चाहा।

“अरे नहीं !” उसने कुछ झिझक के साथ कहा।

“तुम उतनी ही विनयी हो, जितनी तुम तोमोए में थी,” मैंने कहा, “और सुश्रुत भी।” इस पर उसका जवाब था, “पता है मेरा आकार अब भी वैसा ही है, जैसा बेनकेई खेलते समय हुआ करता था !”

उसकी स्नेह भरी आवाज से मुझे लगा कि उसका घर-परिवार बेहद आनंदमय होगा।

काइको आओकी (अब श्रीमती कुवाबारा)

काइको-चान, जिसकी मुर्गियां उड़ सकती थीं, अब काइओ विश्वविद्यालय से संबद्ध प्राथमिक शाला के एक शिक्षक से विवाहित है। उसकी एक बेटी भी है, जिसका विवाह हो चुका है।

योइची मिगिता

मिगिता वही लड़का है जो मृत्युभोज के मालपुए लाने का वादा करता रहता था। उसने पहले औद्योगिकी की डिग्री ली, पर उसे चित्रकारी का शौक था, इसलिए फिर से पढ़ाई की। मूसाशिनो कालेज आफ फाइन आर्ट्स से उसने स्नातक की डिग्री ली। आज वह अपनी ग्राफिक डिजाइन कंपनी चलाता है।

रयो-चान

रयो-चान, तोमोए का चौकीदार जो युद्ध में गया था, सुरक्षित वापस लौट आया था। वह प्रत्येक तीन नवंबर को तोमोए सम्मेलन में शामिल होना नहीं भूलता।